मनु शर्मा

प्रकाशक—
परिमल प्रकाशन
गोलघर, वाराणसी-१

बिहार के वितरक—
बिहार ग्रन्थ कुटीर
खजांची रोड, पटना-४

आवरण शिल्पी—
गोपेश्वर

प्रथम संस्करण
भातृनवमी २०१५

मूल्य
पाँच रुपया

मुद्रक—
शिवपूजन पाण्डेय
राजेन्द्र-प्रेस,
नेराकुआं, वाराणसी—१

जिन्होंने मुझे पढ़ाया लिखाया
और
इस योग्य किया कि कुछ लिख-पढ़ सकूं
तथा
जिन्हें आप 'बेढब बनारसी' के नाम से जानते होंगे,
उन्ही
श्रद्धेय मास्टर साहब को
सादर समर्पित

वक्तव्य

जब इतिहास तथ्य पर कम और सम्भावनाओं पर अधिक आधृत हो जाता है तब अनेक भ्रान्तियों और विवादों की सृष्टि होती है। बप्पारावल के सम्बन्ध मे ऐसा ही हुआ है।

बप्पा के समय का अब तक कोई शिला लेख या ताम्रपत्र प्राप्त नही हुआ है जिसके आधार पर कुछ निश्चित कहा जाय। केवल अजमेर में एक स्वर्ण मुद्रा मिली है जिसका भार ११५ ग्रेन है। उस मुद्रा के दोनों ओर कुछ आकृतियाँ बनी हैं। सामने की ओर ऊपर के भाग में बिंदियों को एक वर्तुलाकार पंक्ति बनी है, जिसे राजस्थान के लोग 'माला' कहते है। माला के नीचे उस समय की लिपि मे 'श्री बप्पा' लिखा है। 'श्री बप्पा' के थोड़ा नीचे बॉयी ओर शिव का मुख्य आयुध त्रिशूल अंकित है। इसके दक्षिण दो प्रस्तरों की वेदी पर शिवलिंग बना है, जो बप्पा के इष्टदेव 'एकलिंग' का सूचक है। शिव की ओर मुख किए बैठी नन्दी के साथ ही एक प्रणाम करता हुआ पुरुष बैठा है, जो बप्पा का प्रतीक मालूम पड़ता है। पुरुष का केवल जाँघ तक का भाग इस सिक्के में दिखायी देता है।

यह मुद्रा आगे की अपेक्षा पीछे की ओर कुछ अधिक घिसी है जिससे इस ओर की आकृतियाँ कहीं-कहीं कट गयी है। इस तरफ भी मुद्रा के चारों ओर करीब-करीब तीन चौथाई भाग में माला बनी है। माला के नीचे तीन अस्पष्ट चिह्न है। बाईं ओर का चिह्न चमर प्रतीत होता है। बीच में सूर्य्य है, जो बप्पा व सूर्यवंशी होने की सूचना देता है। दाहिनी ओर छत्र है। इसके नीचे बछड़े को दूध पिलाती हुई एक गाय बधी है, जो बप्पा के प्रसिद्ध गुरु लकुलीश सम्प्रदाय के कनफड़ साधु हारित मुनि को कामधेनु का प्रतीक है। इसके अतिरिक्त दो तीन आड़ी लकीरें बनी है। उसके नीचे एक मछली है।

बस इतने ही के आधार पर बप्पा के सम्बन्ध में इतिहास कुछ कहता है।

नाम के सम्बन्ध मे भी बड़ा विवाद है। अधिकांश इतिहासकार कहते हैं कि बप्पारावल का वास्तविक नाम कालभोज था और कालभोज महेन्द्र का पुत्र था। टाड साहब कहते हैं कि 'बप्पा' नागादित्य का पुत्र था किन्तु नागादित्य और महेन्द्र में कई पीढ़ी का अन्तर है। जब कालभोज अधिक प्रतापी तथा प्रजा पालक हुआ तब लोग उसे सम्मान प्रदर्शित करने के लिए 'श्री बोप्प' या 'बप्पा' कहने लगे, जिसका अर्थ 'पिता'

होता है। अतएव बप्पा रावल उसका अर्जित नाम है।

'श्री बप्प' से केवल पिता का बोध हो ऐसा तो नही होता। संस्कृत में जैसे 'तात' शब्द बाल, वृद्ध, युवा, सबके लिए भिन्न-भिन्न अर्थो मे प्रयुक्त होता है वैसे ही 'बप्पा' का विभिन्न रूप विभिन्न स्थानो में भिन्न अर्थो मे प्रयुक्त होता रहा है। मेवाड में बापू पुत्र को कहते हैं और बापाजी राजकुमार को। क्या यह सम्भव नही कि बचपन मे कालभोज को प्यार मे बापा या बप्पा कहा गया हो?

कालभोज या बापा का काल क्या था? यह भी बड़ा विवादग्रस्त प्रश्न है। लोगो की सम्भावनाओं में भी सैकडो वर्ष का अन्तर पड़ जाता है। किन्तु महाराणा कुंभा के द्वितीय पुत्र रायमल के समय मे 'एकलिग महात्म्य' नाम की पुस्तक बनी। उसे एकलिग पुराण भी कहते है। उसमे लिखा है कि बापा सं० ८१० में अपने पुत्र को राज्य देकर सन्यास ग्रहण करने नागह्रद चला गया। इस कथन मे सं० ८१० (सन् ७५३) में बापा का राज्य त्याग करना अधिक समीचीन लगता है।

यह काल विशेषकर राजस्थान और सिंध के लिए संक्रमण काल था। सिन्ध मे अरबो का प्रबल आक्रमण सन् ७१० में मकराने के रास्ते हुआ था। सिंध का

राजा श्री हर्षराज और उसका पुत्र मकरान को रक्षा करते हुए मारे गये थे। फिर उस गद्दी पर वहाँ के ब्राह्मण मंत्री चच का बेटा दहिर बैठा। वह भी अरबो द्वारा मारा गया। तब बडी रानी ने बड़ी बहादुरी के साथ अरबों का सामना किया और वह भी (सन् ७१२) में युद्धस्थल में ही मारी गयी। ये अरब सैनिक राजस्थान तक छापा मारते चले आते थे और जो कुछ मिलता था लूट मार कर चले जाते थे।

चचनामे में सिन्ध के इन राजाओं का सम्बन्ध चित्तौड के मौर्य राजाओं से कहा गया है। चित्तौड की ख्यात के अनुसार अरबों का आक्रमण चित्तौड पर भी हुआ था। उसमे वहाँ के तात्कालिक राजा मानमोरी ने (मानसिंह मौर्य) राज्य की रक्षा करने में कमजोरी दिखायीथी जिससे उसके सरदार, नागदा के गुहिल पुत्र बापा रावल ने सन् ७२८ के आस पास मानमोरी की हत्या कर उसकी गद्दी ले ली। किन्तु मानमोरो इतना दुर्बल और लाचार था कि उससे गद्दी लेने के लिए कालभोज को उसकी हत्या करनी पडी हो, यह मेरा मन स्वीकार नहीं करता।

बप्पा के वंश के सम्बन्ध में भी बडा विवाद है। स्वर्णमुद्रा से तो वह सूर्यवंशी मालूम होता है। यदि नागदा वाली मान्यता मान ली जाय तो उसके नागवंशी

होने की सम्भावना अधिक हो जाती है, क्योंकि एक ऐसी जनश्रुति है कि इसी नागदा मे महाराजा जनमेजय ने नाग यज्ञ किया था। इस श्रुति के आधार पर वहाँ नाग वंशियो का राज था। डा० भंडारकर ने संभावना ऐसे भी की है कि कालभोज बड़नगर का नागर ब्राह्मण था। इस सम्बन्ध में उनके तर्क बड़े ही शक्तिशाली है इस उपन्यास में मेरी कल्पना ने उन तर्कों का बड़ा सहारा लिया है।

यह सभी इतिहासकार एक मत से स्वीकार करते हैं कि कालभोज के पिता महेन्द्र की हत्या भीलों ने कर दी थी। उस समय बप्पा दो या तीन वर्ष के थे। भील तो बड़ी राजभक्त जाति सदा से रही है, फिर उसने राजा महेन्द्र की हत्या क्यो की? इसपर इतिहास मौन है। इसलिए हत्या के जो भी कारण इस उपन्यास मे दिखाये गये है वह मेरी उपभावना है।

इस प्रकार 'बप्पा रावल' का ऐतिहासिक व्यक्तित्व भ्रांतियों और विवादो में बहुत उलझा हुआ है।

इसके अतिरिक्त उसका एक दूसरा व्यक्तित्व भी है। वह है दन्त कथाओ में! इनमें से बहुतों का संग्रह टाड साहब ने अपने इतिहास में कर दिया है। इन कथाओ की प्रमाणित भले ही अन्धकार में हो, पर बप्पा

के व्यक्तित्व की कल्पना करते समय इनका महत्व नहीं, ऐसा मै नही समझता ।

टाड साहब ने लिखा है कि वीर नगरी की वीर नारी कमलावती ने जिस प्रकार गोह की प्राण रक्षा की थी, उसी प्रकार उस वंश के लोगो ने. युवराज की प्राण रक्षा की । राज पुरोहित सत्यनारायण ब्राह्मण ने युवराज को भांडेर के किले मे भेजा ! इस कार्य में एक यदुवशी भील ने सहायता की । मेरे उपन्यास के चरित्र तारा, पुरोहित सत्यनारायण तथा भील जादव की कल्पना इसी आधार पर हुई है ।

नागह्द मे शैव ब्राह्मणो का सात्विक जीवन तथा बप्पा के पिता का राज ईडर मे होने की कल्पना भी टाड साहब ने की है । हारित मुनि, बाली और देव यह सब दन्त कथाओ मे ही वर्णित चरित्र है । इन्हे मैने अपने मत और विचार के अनुसार इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है ।

इन दंत कथाओं मे ऐसी अनेक अनहानी बातें भी कही गयो हैं, जिनपर जरा भी विश्वास नही होता । जैसे बप्पा का देवी के सम्मुख बलिदान के समय एक ही झटके मे दो भैसो का सिर काटना, बारह लाख बहत्तर हजार सेना रखना, चार बकरे एक बार मे खा जाना, बत्तीस मन का खंग रखना, पैतीस हाथ की धोती और

सोलह हाथ का दुपट्टा पहनना आदि । किन्तु जो बातें कुछ विश्वास के योग्य हैं तथा जिनसे बप्पा के व्यक्तित्व का कुछ भी परिचय मिलता है, उन्हे मेरे कथानक ने किसी न किसी रूप में लपेट अवश्य लिया है।

श्यामा गाय, भीलों के साथ गाय चराना, हारित मुनिका बप्पा को आशिर्वाद देना, सोलंकी राज्य मे झूलनोत्सव का वर्णन, बप्पा का गन्धर्व विवाह आदि सभी बातें कथाओं तथा जनश्रुतियो के आधार पर ही मिलती हैं।

एक ऐसी भी जन कथा है कि बप्पा रावल ने दिग्विजय की थी। अनेक यवन सुन्दरियो से विवाह किया था। इस उपन्यास में 'शमोम' की प्रेमार्द्र कल्पना का ऐसा ही आधार है। अन्त में गाइड का प्रकथन भी जनश्रुतियों पर अवलबित है।

जीवन के अन्त में बप्पा ने संन्यास ले लिया था। उसकी एक समाधि नागदा और दूसरी कश्मीर में है। उसकी मृत्यु के सम्बन्ध में भी अनेक प्रकार की बातें कही जाती हैं जिनपर विश्वास न होने से मैंने अपने कथानक की पूँछ कुछ शीघ्र ही लपेट ली है। ऐसा आप को भी अनुभव होगा।

इस प्रकार नाना भ्रातियों में परिवेष्ठित व्यक्तित्व

* मुहणोत नैणसी की ख्यात पत्र दो।

को मेरी कल्पना ने उभारने का प्रयास किया है। कही कही वह अधिक मुखरित भी हो गयी, किन्तु उस समय के जनजीवन को वह भुला न सकी है।

मैने आज को आँखों से साढे बारह सौ वर्षों का पुराना धरती में सोया और हवा में उड़ता हुआ खेल देखने की चेष्टा की है, राजस्थान को उत्तर प्रदेश की दृष्टि से निहारा है, इसलिए अनेक त्रुटियाँ हो सकती है। यदि आप कहे, तो उनके लिए क्षमा भी माँग लूँ।

ओझाजी के राजपूताने का इतिहास, टाड साहब के एनल्स एण्ड ऐन्टीक्वीटी आफ राजस्थान, पृथ्वीसिंह महता कृत हमारा राजस्थान, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव के दिल्ली सल्तनत, चचनामा आदि पुस्तको से मैंने सहायता ली है। इन सबका मै आभारी हूँ।

मेरे अनुज रामप्रसाद शर्मा तथा अमरनाथ शर्मा ने इस पुस्तक के प्रकाशन में बड़ा श्रम किया है, वे अपने हैं मै उन्हे धन्यवाद क्या दूँ।

—मनु शर्मा

११२ मध्यमेश्वर

वाराणसी

मातृनवमी २०१५

१

जैसे बिजली गिरी। उसने घूमकर देखा, उसका काम तमाम हो चुका था। धड सिर से अलग होकर धरती पर छटपटा रहा था मानो जीवन को तिलाजलि देकर संघर्ष जीवित रहने की चेष्टा कर रहा हो। उसका एक साथी चला गया—बहुत दूर चला गया, बिल्कुल दूर—जहाँ से कोई लौट कर नहीं आता। अब वह इस द्वार पर अकेला है। क्या वह इस द्वार की रक्षा कर सकेगा? 'नही।'—उसके काँपते मन ने धीरे से कहा। कदाचित् जीवन में पहलीबार निराशा का ऐसा हल्का स्वर उसके हृदय में सुनायी पडा था। फिर भी वह खडा रहेगा—अडिग, स्थिर, जैसे पृथ्वी की छातीपर हिमालय खडा है, जैसे जीवन के छोर पर मृत्यु खडी है।... किन्तु, एक नही अनेक तलवारें एक साथ चमकती दिखायी दी।

बूढे के खून मे भी उबाल आया। उसके नस-नस में बिजली कौंध गयी। आज उसकी परीक्षा का दिन है। इस दिन की प्रतीक्षा मे उसने अपनी सारी जिन्दगी बितायी है। म्यान से तलवार निकालते हुए वह तडपा—"खबरदार जो आगे बढे, नमक हराम. कमीने। कल तक तुम जिसका नमक खाते रहे, तुम्हारा शरीर जिसके अन्न से बना, आज उसी के विरुद्ध तुम्हारी तलवारें उठी। इस महापाप के करने के पहले ही तुम्हारा हृदय काँपा क्यो नही? तुम्हारी भुजाएँ गलकर गिर क्यो नही गयी? ...तुम्हे शरम नही आती!"

इतना कहते हुए बूढा क्रोध से काँपने लगा—जैसे ज्वाला लपलपा रही हो। उसके शरीर का साँवला रग आवेश मे और भी गाढा हो गया। अस्सी वर्ष पुराने सिर के बकुले के पर के समान श्वेत बाल तलवार निकालने के झटके में बडी तेजी से हिले और फिर चुपचाप अपने स्थान पर ही जाकर शान्त हो थम गये जैसे ज्वार के बाद भाटा का समुद्र थमता है।

सिंह सी गरजती आवाज के सामने भीलो का जोश कुछ फीका पडा। कुछ क्षणों तक वह समझ न सके। कुछ कर न सके। फिर भी भीड शान्त नही थी। कोई कहता—'पागल है पागल!' कोई कहता—'मारकर फेंक दो।' कोई कहता—'अरे दादा काहे आग से खेलते हो।' अचानक ही भीड के इस कोलाहल के बीच से एक सनसनाती आवाज आयी—"झोंक दो इस बूढे को, चला है अपने खाये नमक का मूल्य चुकाने।"

तब तक वह युवक आगे आया, जिसकी तलवार अभी-अभी एक प्रहरी को मृत्यु के घाट उतार चुकी थी। रक्त से सनी तलवार उसके हाथ मे थी। उसने बडे विश्वास से वृद्ध को समझाते हुए कहा—"दादा, अब तुम बूढे हो चले। सिर का एक बाल भी काला नही रहा। हम सबके मनमे तुम्हारे लिए उतनी ही श्रद्धा है, जितनी एक बुजुर्ग के लिए होनी चाहिए।... अच्छा होता हमारी तलवार उठने के पहले ही तुम इस द्वार से हट जाते।"

"जो अपने सिद्धांत से कभी नही हटा, वह इस स्थान से भी कभी नही हटेगा। अच्छा होता, मेरी बुजुर्गी पर रहम खाने के पहले तुम अपनी बेवकूफी पर रहम खाते।" वृद्ध का साहस अपनी सीमा पर था।

'बेवकूफी'—युवक ने दाँत पीसते हुए कहा—'बडी-बडी बातें करने से कोई लाभ नही। मेरी तलवार की ओर देखो, उसमे लगे रक्त की ओर देखो और अपने मृत्यु की कल्पना करो।' युवक की आवाज इस बार पहले से बहुत तेज थी।

इस भयंकर संघर्षरत स्थिति मे भी बूढा मुस्कराया और बडे तपाक से विश्वास के साथ बोला,—'जब से तलवार का साथ हुआ मृत्यु की कल्पना करना मैंने छोड दिया है।'

'बूढे हो। एक बार मै तुम्हे फिर समझाता हूँ। द्वार से हट जाओ या राजकुमार को मेरे हवाले करो।

'राजकुमार! ,उसकी आत्मा चीख उठी। मन की सम्पूर्ण घृणा उसकी आँखों से बरस पडी। उसने कहा,—'तुम सभी अपनी शक्ति के मद मे अन्धे हो चुके हो। सोचो तो, उस बच्चे ने तुम्हारा क्या बिगाडा है। दुराचारी था उसका पिता। जिसे तुम लोगों ने मार डाला और वह भी कायरो की तरह, जगल मे छिप कर शिकार खेलते समय। अब अपनी बहादुरी इसी नादान बच्चे के सामने दिखाने आये हो? चुल्लू भर पानी मे तुम्हे डूब मरना चाहिए।'

भीलो की भीड क्रोध मे एक बार फिर भड़की, किन्तु कोई आगे नही बढा। उनका नेता तो स्वयं बूढे के सामने खडा था। उसकी तलवार उठ उठकर भी पता नही क्यो रुक जाती थी। पर भीड से बराबर आवाज आती रही—'मार दो, झोंक दो, आगे बढो ।'

बूढा भी भील था। अपनी आन और वफादारी के लिए पूरे राज्य मे प्रसिद्ध। सभी उसका आदर करते थे। उसी भीड मे अनेक ऐसे थे,

जिनके मनमे उसके प्रति श्रद्धा थी, किन्तु आज विचारो का संघर्ष था। तलवारें एक दूसरे के विरुद्ध उठी थी। इतना होने पर भी इस बृद्ध प्रहरी पर अब भी भील सरदार अपनी तलवार उठाना नही चाहता था। उसने कहा—'साँप का पुत्र भी साँप ही होगा। हम इस बच्चे को भी शीघ्र वहाँ पहुँचाना चाहते है, जहां इसका पिता गया है। हमारा उद्देश्य है—दुराचारी के वंश का अन्त, परिवार का नाश।'

"किन्तु पक्का विश्वास रखो, मेरे रहते तुम ऐसा कर नही सकते। मै मरते दम तक राजकुमार की रक्षा करूँगा।"

युवक अब अपने को रोक न सका, तड़पते हुए बोला,—'पहले अपनी रक्षा करो, तब राजकुमार की करना, सँभालो वार।' आखिरकार उसने प्रहार कर ही दिया। बूढा भी तैयार था। 'जय शकर' तलवारे खडखडाने लगी, जैसे बिजली पर बिजली गिर रही हो। भीड़ मे सभी भौंचक्के से बृद्ध प्रहरी का साहस देखते रह गये। उन्हे उससे ऐसी आशा न थी। वे सोचते थे कि जब सभी राज कर्मचारी विद्रोहियो से मिल गये तब इस बूढे की क्या विसात जो हम लोगो का विरोध करे। पर ऐसा नही हुआ। उसने जमकर सामना किया।

सरदार के लिए वृद्ध को गिराना जैसे हिमालय का गिराना हो गया। पता नही कहां से उसकी भुजाओ मे ऐसी शक्ति आ गयी। क्या सरदार को किसी और की सहायता लेनी पडेगी? क्या यह उसके अकेले बूते का काम नही। लगता है कुछ लोग आगे बढना चाहते है, पर यह तो अन्याय होगा। एक पर अनेक! और वह भी वृद्ध के लिए। नही ऐसा नही होगा। कुछ भी हो इन्हे अपने जातीय गौरव का स्मरण तो होगा ही।

किन्तु यह क्या हुआ? बगल से किसी ने एक बल्लम खींचकर मारा। जोर का कोलाहल हुआ। बल्लम बूढे की छाती मे लगा। विचित्र आवाज हुई, मानो लोहे की नोक किसी लोहे से टकरा गयी। पर वह सभल न सका और गिर गया। रक्त का फुव्वारा छूट पड़ा। गिरे पर तलवार

नही गिरती। सरदार ने वार बन्द किया। कोलाहल के साथ भीड़ आगे बढी, पर सरदार ने सबको रोक दिया।

वृद्ध मरने के पहले एक बार अपनी सारी शक्ति लगाकर पुनः चीख उठा। किन्तु उसकी आवाज स्पष्ट सुनायी न पडी। कदाचित बूढा कुछ ऐसा ही कह रहा था—'अत्याचार से अत्माचार का अन्त नही होता। मैल से मैल धोई नही जाती भगवान् से डरो। अपने आप से डरो। आगे आने वाले इतिहास से डरो।'

किन्तु वृद्ध की ध्वनि उस कोलाहल मे जैसे खो सी गयी। किसी ने कुछ ध्यान नही दिया। नक्कार खाने मे तूती की आवाज का क्या महत्व? लोग पुनः प्रवेश द्वार की ओर आगे बढे, पर सरदार ने सबको रोक दिया। भीड नियंत्रण के बाहर थी। गेहूँ के खेत मे फगुनहट के विद्रोही झोकों की तरह भीड़ का रेला कुछ आगे बढता और फिर समाप्त हो जाता।

सरदार ने केवल तीन साथियों को चुना और किले के बाहरी ऊँचे चबूतरे पर खडा होकर बोला—'मित्रो, इस प्रकार घबराने और कोलाहल करने से कुछ लाभ न होगा। आप जहाँ हो, वही शान्ति से खडे रहिए। हम लोग अन्दर जाते हैं। राजकुमार का पता लगाते हैं। और जब तक हम लौट कर न आये तब तक आप चुपचाप खडे रहिए—भगवान हमारा कल्याण करें।' इतना कह कर सरदार चबूतरे से नीचे उतरने को हुआ, किन्तु भीड चिल्लायी—"हम अपने सरदार को अकेले अन्दर जाने नही देंगे।"

सरदार पुनः लौटा और उसी प्रकार ऊँचे स्वर से बोला—आप विश्वास रखे। मै अकेला नही हूँ। तीन साथी मेरे साथ है। मेरी तलवार मेरे साथ है। आपका आशीर्वाद और परमात्मा की कृपा मेरे साथ है।"

'जय शंकर' आकाश एक बार पुनः गूँज उठा।
सरदार अपने साथियो के साथ प्रवेश द्वार में घुसा।

× × ×

भीतर जाकर तीनो साथियो के साथ सरदार ने चारो तरफ दृष्टि दौडायी, पर कुछ दिखायी नही दिया। अन्तःपुर में सन्नाटा था। किसी की भी आहट नही लगती थी। जहाँ का वातावरण सदा कामनियों की नूपुर से मुखरित रहता था। जहाँ गान, नृत्य, वाद्य, हास-विलास का राज्य था। जहाँ मन की अशान्ति वासना में विवेक की भाँति खो जाती थी। आज वहाँ शान्ति थी। ऐसी शान्ति जो मृत्यु के बाद आती है या मध्य रात्रि में चाँदनी की स्निग्ध पारदर्शक चादर ओढकर कब्रिस्तान में सुख की नीद सोयी पड़ी रहती है।

सरदार ने अन्तःपुर की दालान में कई चक्कर लगाये पर उसे वहाँ न तो कोई मिला और न कुछ दिखायी ही दिया। उसने अपने साथियों से शंका भरी मुद्रा में पूछा—"क्या महल बिल्कुल खाली हो गया है ?"

"मालूम तो ऐसा ही होता है।" साथियो मे से एक बोला। दो बड़े गौर से कुछ सोचते रहे।

कुछ समय बाद पश्चिम की ओर से कुछ दासियाँ आती दिखायी दीं। कुछ के हाथों में फूलों की डालियाँ थी। कुछ ने उन फूलो से मालाएं बना ली थी। और थाल में ये मालाएँ लिए चली आ रही थी। सबसे आगे एक दासी पूजा के समान से भरा थाल लिए थी।

"किन्तु यह पूजा का समय तो नही है, फिर पूजा कैसी ?" सरदार सोचने लगा। वह कुछ ठीक समझ नही सका। विस्मय ने उसके विवेक को जैसे दबा दिया था। अपनी शका वह साथियों के सम्मुख भी रखना ही चाहता था।

"लगता है यह देवालय की तैयारी है।" साथी ने जैसे बहुत ब रहस्य का उद्घाटन करते हुए कहा।

"पर इस समय पूजा कौन करने वाला है ?"

"कुछ भी हो दासियाँ अन्तःपुर से देवालय की ओर गयी है।"

"देवालय की ओर.. ?...अवश्य रहस्य है।" सरदार ने सोचते हुए कहा।

"अच्छा होता, हम उसी ओर चलते।" एक साथी ने प्रस्ताव रखा।

सबने एक स्वर से यह प्रस्ताव स्वीकार किया, पर सरदार ने उस मार्ग से, जिधर से दासियाँ गयी थी, देवालय जाना उचित नही समझा। लाचार बाहर आने के लिए वह प्रवेश द्वार की ओर बढ़ा क्योंकि बाहर से ही देवालय मे जाने का दूसरा मार्ग था। तब तक पूर्व की ओर से एक और दासी आती दिखायी दी।

सरदार उसकी ओर चुपचाप देखता रहा। वह जानना चाहता था कि वह कहाँ और किसलिए जा रही है। फिर भी वह मौन था, मानों वह किसी गम्भीर समस्या पर विचार कर रहा हो। उसने एक बार उस दासी को बुलाना चाहा, पर कुछ बोल न सका। जैसे उसमे साहस ही न हो। ऐसी कायरता क्यो ? इस प्रश्न का उत्तर कदाचित् वह स्वयं भी न दे पाता।

किन्तु उसके एक साथी से न रहा गया। उसने दासी को बुलाया। तब तक वह देवालय जाने वाले मार्ग पर बहुत आगे बढ चुकी थी। इस बडे दालान का अन्तिम दरवाजा भी पार करने ही वाली थी। अचानक उसे पुकार सुनायी पड़ी। वह पहली आवाज पर ही लौट पडी—अत्यन्त स्वाभाविक ढंग से। उसकी आकृति पर जरा भी घबराहट दिखायी नही पडी, जैसे कही कुछ हुआ ही न हो और न कुछ होने वाला हो। वह अत्यन्त निर्भीकता से चली आ रही थी। घाँघरे पर उसकी ओढनी का स्वेत अंचल

बादलों सा झूम रहा था। रह-रह कर उसके अधरों के बीच बिजली के फूल खिल जाते थे।

वह चुपचाप आकर सरदार के सामने खड़ी हो गयी। सरदार ने उसे घूरते हुए ऊपर से नीचे तक देखा। सरदार की दृष्टि में पाशविक क्रूरता थी, फिर भी उसकी आकृति से इस दासी की निर्भीकता के लिए विस्मय का भाव टपक रहा था। उसके तीनों साथी भी उसे एक टक देख रहे थे। इतना होने पर भी वह तूफान के चले जाने के बाद समुद्र की तरह बिल्कुल शान्त खड़ी थी। उसकी आँखों में साहस का सिन्धु था। उसके अधरों में कभी कभी अप्रत्याशित मुस्कराहट दौड़ जाती थी मानों उसकी मुद्रा सरदार की सारी भयंकरता तथा विभीषिका को खुली चुनौती दे रही हो।

सरदार ने अपना क्रोध प्रकट करते हुए तीखे स्वर में पूछा—"कहाँ जा रही है?"

"देवालय को" मुस्कराते हुए बिना किसी घबराहट के बोली।

"इस समय देवालय में क्या है?"—उसकी ध्वनि में पहले जैसी ही तेजी थी।

"महारानी पूजन के लिए पधार चुकी है।"

"हैं...यह कुबेला की पूजा कैसी?" सरदार की शंका कुतूहल में परिणित हो गयी।

"पूजन की कोई बेला नहीं होती युवक। भक्त जब चाहे भगवान का स्मरण कर सकता है। भगवान. ." वह विश्वास और गम्भीरता के साथ बोलती जा रही थी जैसे कोई महान् दार्शनिक सांसारिक रहस्य का अवगुंठन खोल रहा हो। पर वह पूरी बात कह भी नहीं पायी थी कि सरदार बीच में ही तड़पा—"बन्द कर अपनी बकवास। चली है दर्शन की शिक्षा

देने ।...बता राजकुमार कहाँ है ?" सरदार की तड़प मे वास्तविकता उतनी अधिक नही थी जितनी बनावट । उसने सोचा था कि रोब दिखाने से ही बहुत कुछ काम चल जायगा, पर ऐसा नही हुआ ।

'राजकुमार. !' वह मुस्करायी । उसके अधरो के बीच से अंगार बरसने लगे ।"... वह भी भगवान की पूजा मे गया है ।" इतना कहते ही बिना कुछ कहे वह इठलाती और हंसती हुई आगे बढी । सरदार और उसके साथी वहीं खड़े रहे । ऐसा लग रहा था, वह उनकी पाशविकता पर धूल उडाती चली जा रही है । ये सब एक टक उसे देखते रहे जब तक कि वह आँख से ओझल नही हो गयी ।

'दासी होकर भी वह हमारी ऐसी उपेक्षा करे !' वह दाँत पीसकर रह गया । कुछ समय तक कुडबुडाता और कुछ सोचने की कोशिश करता रहा । कहते है जब गरम और ठंडा पानी मिलता है तब कुहरा उठता है । उसके हृदय के उबाल मे चिंतन की जब शीतल धारा मिली तब भी ऐसा ही घना कुहरा उसके मस्तिष्क मे उठा, जिसमे न तो वह कुछ सोच सका, न समझ सका और न देख सका । केवल दाँत कटकटाता और कई बार तलवार की मुठिया पर हाथ पटकता रहा । फिर भी उसने अपने पर बड़ा नियन्त्रण रखा था । नही तो तलवार के एक प्रहार से वह उस दासी के दो टुकड़े कर देता । किन्तु, नारी पर उसकी तलवार उठे, शिव,. .शिव . शिव । उसके क्रोध के अश्व की बाग उसके सिद्धान्त के हाथ मे थी ।

सरदार पीछे के छोटे द्वार से शीघ्र ही बाहर निकला और देवालय की ओर बढा । छाया की तरह पीछे-पीछे उसके साथी भी चले । प्रकृति की निस्तब्धता मे वन्दना का क्षीण स्वर दूर से भी बहुत अधिक अस्पष्ट नही था । लगता था मंदिर मे कई व्यक्ति साथ ही भगवान शंकर की स्तुति कर रहे हैं । इधर अंतःपुर के मुख्य द्वार के सामने भीलो की भीड़ अपने सरदार के लिए व्याकुल थी । शीघ्र ही किसी विशेष समाचार की प्रतीक्षा मे थी ।

× × ×

देवालय में घंटा घरियार बज रहा था। आरती हो चुकी थी। शिव–स्तोत्र का सस्वर पाठ हो रहा था —

ललाटचत्वरज्वलद्धनञ्जयस्फुलिङ्गभा-
निपीतपञ्चसायकं नमन्निलिंपनायकम्।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं
महाकपालिसम्पदे सरिज्जटालमस्तु नः ॥

वायु की लहरियों पर स्तुति के मत्र का थिरकता स्वर अन्तरिक्ष के अधर चूम रहा था। सुसुप्त नवजात शिशु की मूक मुस्कराहट की भाँति वातावरण आकर्षक एवं गम्भीर था। सरदार अपने साथियों के साथ मन्दिर के द्वार पर आकर खड़ा हो गया। मन्दिर के सभी पुजारी एक पंक्ति में खड़े होकर मन्त्रोच्चारण कर रहे थे। उनके आगे प्रधान पुजारी आरती उतार रहा था। इन पुजारियों के पीछे महारानी हाथ में माला लिये मंत्र मुग्ध सी खड़ी थी और उनके पीछे सभी दासिया थी। महाकाल की बन्दना चल रही थी—

सरदार अपने साथियों के साथ मन्दिर के द्वार पर खड़ा रहा और तब तक खड़ा रहा जब तक आरती बन्द न हुई।

आरती के बन्द होते ही दासियों की निगाह उस ओर पड़ी। सभी दरवाजे के सामने से खिसकने लगीं। आपस में कुछ भुनभुनाहट हुई, मानो संन्ध्या को शान्ति में उर्ध्व शाखाओं पर बैठकर विश्राम करते पक्षियों को कोई क्रोधित बन्दर नीचे की शाखा पर से एक टक निहार रहा हो और वे चहचहाते हुए उसकी दृष्टि से ओझल होना चाहते हो।

इस क्षणिक शब्द हीन उथल पुथल में महारानी और सभी पुजारियों की दृष्टि उस ओर घूम गयी। इन लोगों ने चार-क्रोधाकुल सशस्त्र सैनिकों को द्वार पर खड़ा देखा। प्रधान पुजारी स्वयं दरवाजे की ओर गया। उसके पीछे-पीछे दो तीन पुजारी और भी हो लिये।

उसके निकट आकर प्रधान पुजारी ने बडी शान्ति से पूछा—'महाकाल की शरण मे किसलिए पधारे हो युवक !'

'. . .' सरदार कुछ बोला नही, केवल दॉत पीसता रहा। जैसे जल की हलकी-सी-फुआर से आग और भी तेज भभक उठती है वैसे ही पुजारी की शान्ति वाणी ने उसके क्रोध को और भी भभका दिया। पर वह कुछ न बोला।

पुजारी ने पुनः पूछा—'क्या सोचते हो, महाकाल की शरण मे चुप रहने से काम नहीं चलेगा।'

'. . .मै चुप नही हूँ . .मेरा स्वर बडा तीव्र है। महाकाल की शरण मे मै राजकुमार का काल बन कर आया हूँ।' क्रोध से कॉपता हुआ सरदार बोला।

'राजकुमार के काल हो तो वहॉ जाओ जहॉ राजकुमार हो। यहॉ तुम्हारा क्या प्रयोजन !'

'तो क्या राजकुमार यहॉ नही है ?'

'नही।'

'तो फिर कहॉ. . . ?'

'ह ..ह ह ह ह' पुजारी जोर से हॅसा और पीछे प्रतिमा की ओर संकेत करके बोला,—'इसे वह महाकाल ही जाने।'

पुजारी की यह हॅसी उसे विष से बुझी सुई की तरह गड़ी। सरदार तिनमिनाया। क्रोध से कॉपते और लगातार तलवार की मुठिया पर गिरते उसके दाहिने हाथ को देखकर क्रुद्ध सर्प के धरती पर पटकते हुए फन की याद आ जाती थी। वह दॉत कटकटाते हुए बोला,..... 'हट जाओ मेरी आखों के सामने से. .नही तो तुम्हारा भला नही। बुलाओ, महारानी कहा है ?'' तब तक उसने अपनी तलवार म्यान से खीच ली। अब वह और अधिक नियंत्रण रख नही सकता था।

पुजारी कुछ बोलने वाला था ही तब तक महारानी स्वयं आगे चली

आयी और बड़ी निर्भीकता तथा साहस के साथ बोलीं,—'बोलो क्या है ? महारानी तुम्हारे सामने खड़ी हैं।' सरदार महारानी के इस अप्रत्याशित साक्षात्कार से सकपका गया। वह तो समझता था कि महारानो कदाचित् कभी भी उसका सामना न करें।

उसका पारा एकदम बहुत नीचे चला आया। उसके हाथ भी शिथिल होकर नीचे झुक गये। तलवार का नोक धरती चूमने लगा। महारानी ने पुनः कड़कते हुए कहा,—'चुप क्यों हो गये, बोलो तुम्हारी मंशा क्या है ? निरपराधी की आँखें और बहादुरों की म्यान से निकली तलवार कभी धरती नहीं देखती। उठाओ तलवार ऊपर।''

इस समय महारानी बड़ी भव्य लग रही थी। धवल वस्त्रों से आच्छादित गौर वर्ण पर उनके बिखरे-खुले केश पाशों से युक्त तन कागज के पीछे से लपलपाती उस ज्वाला के समान मालूम हो रहा था जो बड़ो तेजी से धुआ छोड़ रही हो। और उनकी आँखें सौम्यता की मंजूषा में रखे दो भभकते अंगारों की तरह चमक रही थी। वह साक्षात दुर्गा लग रही थी।

महारानी की कड़कती आवाज ने सरदार के गले को जैसे और भी दबा दिया। बोलने की इच्छा होने पर वह कुछ भी बोल नहीं पाया। एक क्षण शान्ति रही। सरदार किसी महारानी से अपने जीवन में पहली बार मिला था, और वह भी ऐसी विषम स्थिति में। उसने अपना सारा साहस बटोर कर कुछ बनावटी स्वर में कहा,—'राजकुमार कहाँ है ?'

'राजकुमार . ' महारानी जोर से हँसी। वायु मडल का कलेजा विचित्र रूप से कांप उठा। 'तुमने विलम्ब कर दिया युवक,. .अब तो पक्षी पिंजड़े से उड़ गया।' महारानी ने बड़ी निर्भीकता से कहा।

पुजारी भी चुप था। पीछे दासियाँ महारानी के इस साहस पर दाँतों तले अँगुली दबाये खड़ी थी। सरदार और उसके साथी तो एक टक उनका चेहरा ही देखते रह गये। किन्तु, सरदार जब सचेत हुआ तब उसकी मुद्रा

बदली और क्रोध से काँपते हुए स्वर मे बोला—'उड़ गया ..मुझे धोखा देने से कोई लाभ नही। . मै सब समझता हूँ उसे शीघ्र मेरे हवाले करो।'

इस बार तो महारानी जैसे जल पड़ी। वे भभकते हुए बोली—'जब सब जानते हो तो खोज डालो सारा महल। जहाँ कही मिल जाय उसके रक्त से अपनी प्यास बुझा लो।'

इतना कहकर वह मन्दिर मे चली गयी। दासियों ने पुनः उन्हे घेर लिया। गीत गाया जाने लगा।

सतीत्व की प्रशंसा का ऐसा गीत किसी के सती होने के पूर्व ही गाया जाता है। कदाचित महारानी सती होने वाली है। तैयारी बड़ी शान्ति से हो रही है। वातावरण मे पवित्रता, आध्यात्मिकता एवं क्रूरता का ऐसा विचित्र मिश्रण था जिसकी कोई सज्ञा नही दी जा सकती।

दिन का तीसरा पहर था, किन्तु सन्ध्या अभी दूर थी। धरती पर परछायी लम्बी पडने लगी थी। चारो ओर उदास शान्ति थी। मृत्यु की आशंका भरी निस्तब्धता चहल पहल का गला जैसे घोट बैठी थी। मन्दिर के पूजा की आवाज धीरे-धीरे बन्द हुई। अरावली से टकरा कर वायु की सनसनाती लहर उस सन्नाटे मे प्राण फूकने का प्रयत्न कर रहा थी। फिर भी यदि कुछ सुनायी पडता था, तो वह महल के बाहर जमा हुए भीलो का कोलाहल।

सरदार ने महल का कोना-कोना देखना शुरू किया। वह अपने साथियो के साथ प्रत्येक स्थान पर जाता और बडे गौर से देखता, मानो वह कोई ऐसी वस्तु खोज रहा हो जो कही भी पडी मिल सकती है। वह जिधर भी जाता उधर कोई दिखायी नही पड़ता। यो तो कोई पुरुष महल मे था ही नही। केवल कुछ दासियाँ ही थी, वे भी जब उसे आता देखती, चुपचाप कतराकर हट जाती। कोई भी सामने आना नही चाहती थी।

जब उसने कही किसी को नही देखा तो वह और भी खीज उठा। अब वह पागलो सा प्रत्येक कोने मे झाँकता और हर छोटी वस्तु को बेम

ओर से देखता। यहाँ तक कि स्नानागार मे छोटे कृत्रिम सरोवर के पास जब वह आया तब अपनी नंगी तलवार से पानी हिलोरते हुए एक दृष्टि से देखता रहा। अपने सरदार का यह बावलापन उसके साथियों को भी कुछ ठीक नही लग रहा था, फिर भी धधकते अगारे को बाँधने की चेष्टा कौन करे ? वे चुप थे।

एक बडी नटखट लौंडी सरदार की यह मूर्खता छिपकर देख रही थी। जब वह उसी प्रकार पानी हलकोरता सरोवर के चारो ओर झटके से बढ़ा, तब वह बडे साहस के साथ हरिणी की तरह छलाग भरती उसकी ओर आयी और कुछ दूर से ही विचित्र ढग से इठलाती हुई बोली—"क्यों, मछली मारने आये हो क्या ? इस सरोवर मे मछलियाँ नही है जिन्हें तुम ... !"

धधकती क्रोधाग्नि मे घी नही पिट्रोल पडा। वह भभका, बडी तेजी से उस लौंडी को मारने दौडा—क्रोध मे वह नारी पर तलवार न उठाने का अपना जाती धर्म भी भूल गया। पर आकाश के टूटते तारे की तरह वह एक बार चमक कर विलुप्त हो गयी। उसने कई ओर देखा, पर दिखाई न पडी। सचमुच यह आश्चर्य था कि ऐसी स्थिति मे उसका साहस कैसे उसे यहाँ ले आया। सरदार अपनी इस असफलता पर अब और भी अधिक झुँझलाया। वह बहुमूल्य से बहुमूल्य वस्तु को भी तोडता फोडता और पैरो से रौंदता आगे बढा। इस समय तो उसे ये सारी वस्तुएं मिट्टी के समान थी। वह कुछ नही चाहता, यदि कुछ चाहता है तो केवल राजकुमार का प्राण। वह आवेग मे कभी-कभी अपने हाथ की नंगी तलवार हवा मे घुमाता था। राजकुमार के रक्त की प्यासी तलवार रह-रह कर क्रोध से काँप उठती थी। किन्तु सरदार के साथियों को अपनी असफलता पर ऐसी झुँझलाहट नही थी। क्रोधित होने पर भी उनमे विवेक था।

एक बार तो घूम-फिर कर सरदार उस ओर निकल आया जहाँ

का चप्पा चप्पा अभी वह कुछ पहले ही खोज चुका था। इधर आते ही उसका साथी बोला,—'अभी तो हम लोग इधर आ चुके थे।'

'चुप रहो।' वह डपटते हुए बोला। मन की झुंझलाहट अपनी इस बेवकूफी पर और भी बढ गयी।

चुपचाप लाचार होकर वह दूसरी ओर बढा। यहाँ कुछ दासियाँ थी, वह उसे आते देखकर हटने लगी किसी भय से नही केवल इस आशका से कि सरदार पता नही क्या पूछे, क्या कहे। किन्तु उन्हे हँसते देखकर वह तडपा—'कहा जा रही है? खडी रह। एक पग भी पीछे मत हटना।'

सबकी सब चुपचाप खडी हो गयी। उनमे से तो कुछ थोडा डरी भी, पर अधिकांश निर्भय दिखायी दे रही थी।

सरदार के पास बस एक ही प्रश्न था—'राजकुमार कहाँ है?'

'मुझे पता नही!' सबसे आगे खड़ी दासी बोली।

'मुझे पता नही मुझे पता नही जिससे पूछो वह यही कहता है कि मुझे पता नही। आखिर क्या हुआ? आकाश उठा ले गया या धरती निकल गयी।'

'यह तो आकाश और धरती से पूछो, मै क्या जानूँ?'

'क्या बकवाद करती है!' सरदार के बोलने के पहले ही उसका एक साथी बोला—'सरदार जो कुछ पूछते है उसका स्पष्ट उत्तर दो।'

'यदि मालूम हो तब तो बताऊँ।'

तब उसने अन्य दासियों की ओर संकेत कर कहा—'क्या तुम लोग जानती हो राजकुमार कहा है?'

सब ने नकारात्मक उत्तर के लिए सिर हिला दिया। तब झुंझलाया और तीव्र स्वर मे बोला—'यह सब की सब झूठ बोलती हैं, भला इन्हे न मालूम होगा कि राजकुमार कहां है?' फिर उसने अपने साथियों को आज्ञा दी,—'इन सबको पकड कर मैदान मे ले चलो और वही इनका सिर काट कर फेक दो।'

तीनो आगे बढे । 'खबरदार, जो आगे बढे । हम स्वयं मैदान मे चलते हैं । देखें तुम्हारी कौन सी तलवार है जो हम पर उठती है ।' दासियो मे सबसे आगे खडी दासी ने बड़े तपाक से कहा ।

महाकाली की तरह तड़पती आवाज पर वे ठक से रह गये । सुना है प्रखर लहरे चट्टानो पर अपना सिर फोड़ने के बाद शान्त होने लगती है । सरदार की क्रोध की लहर ने जब दासियो के साहस की चट्टान पर अपना सिर फोड़ लिया, तब वह भी शान्त होने लगी । वह शान्त कुछ समय तक सोचता रहा । सभी दासियाँ एक साथ नीचे मैदान मे आने के लिए सीढी की ओर बढी पर उन्हे रोकते हुए सरदार बोला—'.... आखिर तुम्हे राजकुमार को छिपाने से लाभ क्या है ?

'पर हमने छिपाया कहाँ है ? हम सब तो तुम्हारे सामने खड़ी हैं । महल का हर दरवाजा खुला है, खोज लो । .और यदि यह समझो कि हमारी हत्या करने से राजकुमार मिल जायगा, तो हम उसके लिये भी तैयार है ।. .आपकी आज्ञानुसार हम मैदान मे हो जा रहे है ।...आइए'' वे सीढी के नीचे उतने लगी...धम धम, धम ।

सरदार को ऐसा लगा मानों आज उस पर जग हँस रहा है । जीव-धारियो को कौन कहे महल की ईंट और पत्थर तक हँस रहे हैं । जिधर भी देखता महल की शान्त दीवारो मे वह अपने प्रति वैसी ही विडम्बना पाता जैसी उसे दासियों के मुस्कराहट दिखायी देती वह पागलो की तरह इधर-उधर देखता । हत्या के मद मे चूर लडखड़ाता आगे बढा । जैसे वह सब कुछ देखते हुए भी अन्धा है । कई बार तो उसे ठोकर लगी । वह गिरते-गिरते बचा ।

कई चक्कर काटने के बाद वह अन्तःपुर के शयन कक्ष मे प्रविष्ट हुआ । ऐसा शयन–कक्ष सरदार ने कभी नही देखा था । ऐसी शान शोकत की उसने कल्पना तक नही की थी । कमरा अच्छी तरह सजा

था। बहुमूल्य वस्त्रों के परदे टंगे थे। उनमें रंग विरंगी मखमली गद्देदार पलंगें थीं। पलगों के दोनों ओर शीशे लगे थे। रेशमी चमकदार मसहरी थी। दीवार तथा धरन में रंग बिरंगे छोटे-छोटे तरासे हुए अनेक शीशे जड़े थे। मानो आकाश के तारे लाकर कमरे को सजाया गया हो। दीवारों पर कई सुन्दरियों के नग्न तथा अर्द्धनग्न वासना जाग्रत करने वाले चित्र टंगे थे। धरने से लटकता एक पंखा था, जिसमें कई रंग के रेशमी वस्त्र लगे थे। पंखे की रेशमी डोरी परदे के बाहर लटक रही थी, जिससे पता चलता था कि महाराज के शयन के समय दासियाँ परदे के बाहर से ही उन्हे पंखा झला करतो है। नकासीदार चौकियों पर अनेक प्रकार के खिलौने तथा और भी बहुत सी चीजें थी जिनका नाम गिनाना मैं व्यर्थ समझता हूँ।

कमरे में पहुँचते ही सरदार की दृष्टि कालीन पर पड़ी। उसका चेहरा एक बार फिर सिन्दूर हो गया। उसने अपने साथियों को कालीन दिखाते हुए कहा,—'देखो, हमारे धन का यह अपव्यय। हम हड्डियाँ गलाकर धन कमाएँ और हमारा राजा इस तरह से उड़ाए। क्या हमारे देश में कालीने नही बनती ?'

"क्यो नही, बनती तो है ?" उनमें से एक बोला।

"क्या कन्नौज, उज्जैन, कांची के राजाओं का ऐश्वर्य यहाँ से कम है ? क्या कभी इन राजाओं ने भी ईरान से कालीनें मंगायी हैं ?"

"नही तो......।" सबने एक साथ समर्थन किया।

"किन्तु हमारे यहाँ क्रूर तथा विधर्मी आक्रमणकारियों से कालीनें खरीदी गयीं। इसके बदले में हमने उन्हे सोना और चाँदी दिया। लानत है ऐसी शान शौकत पर। अपने देश का मोटा और भद्दा कपड़ा भी इस कालीन से अच्छा है।" सरदार की वाणी में आवेश था।

"सरदार यह कालीन नही है। यह है हमारा खून, हमारा पसीना।" साथियों में से एक ने कहा।

"हम अपने बच्चों को पेट भर रोटी न दे पावें और हमारा राजा हमारी कमाई का ऐसा दुरुपयोग करें।" दूसरा बोला।

"किन्तु अब ऐसा हो नहीं सकता। पाप का घड़ा भर चुका है।" सरदार की आवाज विश्वास, रोष तथा अभिमान से भरी थी। वह कालीन रौंदता आगे बढ़ा।

आगे बढ़ते ही उसकी निगाह दीवार पर टँगे नग्न चित्रों पर पड़ी। अपरिमित घृणा से मन खिन्न हो उठा। क्रोधाग्नि में जैसे एक आहुति और पड़ी। उसने कमर से कटार निकाली और खींचकर तस्वीर की ओर मारी। डोरी कट गयी। तस्वीर जमीन में गिरी। शीशा टूट गया। इतना होने पर भी सरदार ने किचकिचाकर एक लात और मारा। टूटे शीशे चरमरा कर चूर-चूर हो गये। "नीच...पापी ..कामातुर।" ऐसे ही कई शब्द उसके मुँह से निकले। फिर उस चित्र को उठा कर अपने साथी को देते हुए वह बोला—"लेते चलो इसे, जरा बाहर खड़े लोग भी देख लें कि राजा कैसा था?"

शयन कक्ष से निकलने के बाद उसने दो एक और स्थानो पर निगाह डाली। कही राजकुमार दिखायी नहीं दिया। कुछ दासियो के अतिरिक्त अन्तःपुर में किसी पुरुष की कही गंध तक न मिली। जैसा आप जानते हैं, किसी दासी ने भी उसके सम्बन्ध मे कुछ ठीक नही बताया। उनके कहने से केवल एक बात मालूम होती थी कि राजकुमार अब अन्तःपुर में नही है। खोजाई के बाद तो सरदार भी इतना जान गया था। किन्तु वह कहाँ गया? कौन ले गया? क्या हुआ? इनका उसे उत्तर चाहिए था, जो न मिल सका।

निराश वह अपराजित सैनिक की भाँति अन्तःपुर से बाहर आया। यहाँ लोग घन्टो से खड़े परेशान हो रहे थे और विलम्ब का कारण जानने के लिए उत्सुक थे। क्या कुछ अशुभ तो नहीं हुआ? किन्तु ऐसा तो हो नही सकता! जब तक हम बाहर खड़े है—किसी की हिम्मत जो ऐसा

करे ? कुछ ऐसी ही चर्चा चल रही थी। तब तक सरदार बाहर आता दिखायी दिया। विशेष समाचार जानने को लोगों की इच्छा जागी। कुतूहल तथा जिज्ञासा अपनी चरम सीमा पर थे।

आते ही सरदार बोला, "पापियों ने राजकुमार को कहीं महल से दूर हटा दिया।" "तो अब क्या होगा ?" भीड़ के बीच से एक आवाज आयी।

"होगा क्या, इस धरती का चप्पा चप्पा हम खोज डालेंगे। जिसने हमारा खून पीया है हम उसके वंश का नाश करके ही दम लेंगे।"

"जरूर, ऐसा ही होना चाहिए।" पूरी भीड़ ने सरदार के प्रस्ताव का समर्थन किया।

सरदार ने साथी के हाथ से तस्वीर लेकर सब को दिखायी और कहा, "देखिए, इसे खूब गौर से देखिए। यह तस्वीर शयन कक्ष में टँगी थी। जहाँ राम और सीता की पूजा होती थी। जहाँ सावित्री, अपाला, गार्गी, मैत्रेयी आदि नारियाँ आदर्श मानी जाती थी तथा जिनके सामने हमारे राजाओं का मस्तक श्रद्धा से नत होता था। आज वासना और कामातुरता इस सीमा तक पहुँची कि नंगी तस्वीरें महल में टाँगी जाने लगी। क्या ऐसा कामातुर तथा विलासी शासक हम पर शासन कर सकता है ? हमारा नेता बन सकता है ? "नही .कभी नही..." भीड़ चिल्ला उठी।

"इसलिए हम लोगों ने जो किया वह ठीक किया। ऐसे अत्याचारी को दण्ड देना आवश्यक था। ईंट का जवाब पत्थर से ही दिया जा सकता है। अत्याचार तलवार से ही रोका जा सकता है। हम सब ने अत्याचार के विरुद्ध अपनी तलवारें उठायी हे। धर्म हमारा साक्षी है। परमात्मा हम पर प्रसन्न होगा। अब हमारा कर्त्तव्य हैं शासन की व्यवस्था करना तथा राजकुमार का पता लगाना। आप सब का सहयोग मिलता रहेगा न ?"

"अवश्य...अवश्य...सहयोग क्या, आज्ञा दीजिए सरदार।"

"इस समय तो मैंने अपना कार्यक्रम नहीं बनाया है। आप सब अब जाइए। आवश्यकता पड़ते ही सूचना प्रसारित कर दी जायगी।

सभी लोग हटने बढने लगे जैसे रात को सभा उठते ही तारे हटने लगते हैं। सरदार ने कुछ लोगो को गुप्त मंत्रणा के लिये रोक लिया। इसमें दादू, राजू और मूँगा जैसे योद्धा भी शामिल थे।

सन्ध्या मुस्कुरा रही थी। आकाश गुलाबी हो गया था। पक्षी दिन भर के थके मांदे अपने घोंसलों की ओर लौट रहे थे। भील भी अपने-अपने घर की ओर बढे।

× × ×

यहाँ से सरदार और उसके साथी पहाडी के निचले भाग की ओर आये। धूप यहाँ से चली गयी थी। ग्रीष्म के सूर्य से सन्त्रस्त हो गुफाओं में छिपकर शीतलता के साथ रमण करनेवाला अन्धकार अब धीरे-धीरे बाहर निकलने की चेष्टा कर रहा था। पर पत्थर अब भी जल रहा था। हवा मे भी गरमी थी। एक वृक्ष की छाया के निकट सभी एकत्र हुए। गम्भीरता से परिस्थिति पर विचार किया जाने लगा। वृक्षों पर पंछी अपनी सभा जुटाये बैठे थे।

"राजा मारा जा चुका। रानी सती होने जा रही है। एक मात्र राजकुमार को लोगों ने कहीं हटा दिया। अब हमें क्या करना चाहिए।" बातचीत का सिलसिला आरम्भ करते हुए सरदार ने कहा। करना क्या चाहिए, इसे तो सरदार मन में निश्चित कर चुका था, फिर भी वह सब की राय जानना चाहता था।

'मेरे विचार से तो अब राज्य की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।' मूँगा बोला।

'क्यों, अब कोई काम बाकी नहीं है क्या?' राजू ने कहा।

"जब तक राजकुमार जीवित है तब तक सभी कार्य बाकी है।" यह गम्भीर आवाज सरदार की थी। वह कुछ रुक कर फिर बोला—'
"...जिन लोगो ने राजकुमार को छिपाया है, क्या वे शान्त बैठेंगे ?'

'हाँ, यह बात तो ठीक हैं। यदि उत्तराधिकार का झगडा चलाना न होता तो लोग उसे छिपाते ही क्यो ?.. आज, कल, परसो. .जब कभी भी मौका मिलेगा, राजकुमार को लोग हमारे खिलाफ खड़ा करेंगे।' दादू ने सरदार की शका का समर्थन किया।

और लोग अपनी राय जाहिर करें इसके पहले ही लोगों ने एक स्वर से राजकुमार को जीवित या मृत रूप में गिरफ्तार करने का प्रस्ताव पास कर दिया।

"ऐसा महत्वपूर्ण निश्चय इतना शीघ्र किया गया कि सभा के ही कुछ लोगो को अच्छा नही लगा, किन्तु सरदार की बात का विरोध करना और वह भी ऐसे गरम वातावरण में, उनके लिये सम्भव भी नही था। निश्चय होने के बाद ही राजू बोला,—"हमको शीघ्र ही चारो ओर आदमी भेजने चाहिए, क्योंकि हत्या के बाद ही लोगो ने उसे महल से हटा दिया होगा और अब वह यहाँ से बहुत दूर जा चुका होगा।"

"किन्तु मैं ऐसा नही समझता। यदि हत्या के बाद ही राजकुमार को हटाया गया होता तो उस वृद्ध प्रहरी को अपनी जान देने की क्या आवश्यकता थी। मेरे विचार से तो जिस समय हम लोग प्रहरी को समझाने में लगे थे उसी समय महल के पिछले द्वार से बालक कही हटा दिया गया।" सरदार ने बडी बुद्धिमानी की बात कही।

"तब तो बहुत सम्भव है वह यही कही आसपास में छिपा दिया गया हो।"

"नही, महारानी ऐसी मूर्खता नही कर सकती। उसे अवश्य किसी

रक्षित स्थान में भेजा होगा, यह हो सकता है कि अभी ही प्रयास करने से हमें शीघ्र सफलता मिले।" सरदार ने कहा।

अविलम्ब चारो ओर आदमी दौड़ा देने की लोगों ने राय दी। किन्तु उसने इसे ठीक नही समझा। वह राजकुमार की खोज गुप्त रूप से ही करना चाहता था। चारो ओर एक साथ आदमी भेजने से ही हल्ला मचेगा। बात शीघ्र ही फैल जायगी। इससे बहुत सम्भव था उन लोगो में से भी कुछ सरदार के विरोधी हो जाते जिनकी सहानुभूति उसे किसी न किसी रूप में अब तक प्राप्त थी।

राजा अत्याचारी था, दुराचारी था। उसकी हत्या में लोग साथ थे किन्तु निरपराध बालक के पीछे इस प्रकार पड़ना लोगो को अवश्य बुरा लगता। सरदार इस स्थिति को अच्छी तरह समझता था। उसने लोगों को समझाते हुए कहा,—"हमें चारो ओर आदमी भेजने से कोई लाभ नहीं। महल के पिछले गुप्त द्वार से जो मार्ग जंगल की ओर जाता है उधर ही दो व्यक्तियों के जाने की आवश्यकता है। यदि आप आवश्यक समझें तो दो के स्थान पर तीन व्यक्ति भी भेज सकते हैं। आप लोग केवल राजकुमार का पता लगायेंगे—एक गुप्तचर की भाँति छिपे रूप में। जब पता चल जाये तो चुपचाप आकर सूचना देंगे। आपको कुछ और नहीं करना है।" कार्य की प्रणाली निश्चित करने के बाद उसने अपनी नीति स्पष्ट करते हुए कहा—"राजकुमार को खोजने की सारी क्रिया अत्यन्त गोपनीय रखनी चाहिए। आप लोगो को भी चाहिए कि आप अब इस सम्बन्ध की चर्चा ही न करें जिससे बाहरी लोगों का ध्यान इधर खिंचे।"

सरदार की नीति और बुद्धिमानी की सब ने प्रशंसा की। दादू, राजू और डूंगा गुप्त रूप से राजकुमार का पता लगाने के लिए चुने गये अविलम्ब इन्हे अपने अपने घोड़े लेकर चल देने की आज्ञा हुई।

सभा शान्त वातावरण में समाप्त हुई। अब अंधेरा बढ चला था। मार्ग सुनसान होता जा रहा था। घर जाकर अपने परिवार के सदस्यों से मिल लेने के बाद तीनों साथी घोड़ों पर सवार चल पड़े। क्षितिज के एक छोर पर फुटबाल सा निकला चन्द-विम्ब दिखायी दे रहा था। दूसरे छोर पर सती की चिता धू-धू कर जल रही थी। धूंआ ऊँचा उठ रहा था, मानो अशान्त आत्मा गगन मार्ग से शान्ति पथ पर बढी चली आ रही हो।

२

ईडर की सीमा अब बहुत पीछे छूट चुकी थी, फिर भी वह बड़ी तेजी से आगे बढी चली जा रही थी। मृत्यु का भी कलेजा कपा देने वाली जंगलों की सुनसान भयंकरता, पहाड़ियों का स्थिर अवरोध, घने अन्धकार में झरनो की डरावनी गर्जना, असमतल धरती पर अजगर की तरह पडे नालो का अनेक काले नागो की सम्मिलित फुफकार से भी भयावह फुफकार, सब उसके मार्ग मे बारी-बारी से आते रहे, पर वह कही रुकी नही। अनेकों बन्धनों एवं अवरोधों को पार कर आगे बढ़ती ही रही जैसे एक साहसी का जीवन आगे बढता है, जैसे ऊषा के पहले ही भयावह अन्धकार का गला घोट कर सूर्य की किरणें आगे बढ़ती हैं। आँखों में धुंधला गुलाबी सपना तथा छाती के पास ही एक

ज्योति किरण लेकर वह इस घने अन्धकार की भयंकर चुनौती स्वीकार करते हुए आगे बढी चली जा रही थी ।

किन्तु यह क्या ? एक बहुत बड़ी खन्दक ? उसने घोडे की लगाम अचानक ढीली की । उसकी छाती से लिपटा छोटा बच्चा चिहुंक उठा । उसने उसे पुचकार कर बड़े मीठे स्वर में कहा,—"क्या बेटा डर गये । बहादुर ऐसे डरा नही करते ।" बच्चा पुनः अकड कर बैठ गया ।

नीचे पानी का सोता था । घोडे को प्यास लगी थी । वह पानी पीने बढा । लगातार कई घण्टे दौड़ने के बाद इस प्रकार पानी पिलाना ठीक नही—उसने सोचा । किन्तु प्यासा घोड़ा दौडाया भी तो नही जा सकता ।

वह घोडे को बायी ओर मोड़ कर नीचे उतरी । एक छोटा बालक भी घोडे की पीठ पर से धड़ाम से कूद पडा । 'शाबास, कितने बहादुर हो तुम' बच्चे की पीट ठोकती वह बोली । अपनी प्रशंसा सुनकर बच्चा भी फूला नही समाया ।

घोड़ा पास की हरी हरी घास पर चरने लगा और वह उसकी लगाम पकडे चराती रही । बीच बीच में उसकी पीठ भी थपथपा देती थी । आकाश में चॉद ऊपर उठ चुका था । चॉदनी छिटकी थी, धरती पर मानो किसी ने दुधिया पोत दी हो । वायु मन्द थी । प्रकृति मूक थी । स्थान रम्य था । बालक एक स्वच्छ शिला पर बैठ गया । वह अब भी घोड़े की लगाम पकड़े ही थी । उसे बैठा हुआ देखकर बोली—'थक गये क्या कुंवर जी ? बस इतने से ही । तब भला बडे होकर तुम इतना बडा राज कैसे संभालोगे ?' वह मुस्करायी ।

बालक थका अवश्य था किन्तु तारा की बात सुनते ही जैसे वह सहम गया, सलज्ज नेत्रों से उसने उसे देखा । वह दौडकर उसकी जांघ से लिपट गया । पुनः तारा की आकृति को उसने गौर से देखा । आखें कुछ कह

गयी, फिर भी मार्मिक स्वर से तुतली भाषा मे वह बोला—अमे भूत लगी है. .अमें......।'

"हां, हां, मेरे प्यारे बेटे, मैं अभी तुम्हे दूध पिलाती हूं। देखो तो घोडा कितना अच्छा है। घास खाता है, अभी पानी पीयेगा, तब हम लोग साथ चलेंगे। तारा ने उसे बहका देने की चेष्टा की, किन्तु वह बीच में ही बोल उठा, "नही...नहीं...अमें भूत लगी है।" तारा ने उसे फिर बहलाते हुए कहा, "हाँ, बेटा हाँ, हम अभी एक नयी जगह चलेंगे। बडी अच्छी जगह है वह। वहाँ तुम्हे राजा बनायेंगे, राजा। सोने का मुकुट पहनायेंगे। हमारा बेटा मुकुट पहनेगा...राजा बेटा आह, कैसा अच्छा बेटा है। कहते कहते तारा ने बच्चे का मुँह चूम लिया। फिर भी बच्चा नही माना। वह छैलाता ही रहा।

बालक रो रहा था। तारा का हृदय भी रो रहा था। वह सोचती, जिसका पिता इतना शक्तिशाली था, जिसकी शान शौकत बेजोड़ थी, उसका बच्चा थोड़े से दूध के लिए तरसे। बन बन ठोकर खाता फिरे आज उसका प्राण ही उसे भार हो गया। तारा की आखें डब-डबा आयी।

उसके हृदय मे जहां माता की ममता थी, नारी की सहज कोमलता थी, वही वीरांगना का अपरिमित साहस भी था। तारा विगल जीवन की कल्पना कर जहां रो पड़ी, वही वर्तमान की भयंकर परिस्थिति ने उसके साहस को जैसे ठोकर मार कर जगा दिया। वह जरा भी विचलित न हुई। घोड़े को पानी पिला, बालक को लेकर सवार हुई और चल पड़ी।

- चलो अभी तुम्हें दूध की नदी के पास ले चलती हूँ।' घोड़े की लगाम खींच कर वह बोली—'दूध की नदी......?' बालक का कुतूहल जागा।

'हाँ, हाँ कुँवर जी, दूध की नदी के पास. .।' तारा बड़े विश्वास के साथ बोला।

बालक चुप हो गया। इसलिए नही कि उसकी भूख कुछ कम हुई, वरन् दूध की नदी की मोहक कल्पना ने उसे स्वप्न लोक में खींच लिया। उसने सोचा वह ऐसे देश का राजा होगा जहाँ दूध की नदी होगी।

घोड़ा तेजी से बढ़ा जा रहा था, कुँवर जी के दूध की नदी की ओर।

बस्ती अभी भी दूर थी। रास्ता पहाड़ी था। कही चढाई और कहीं उतराई। आफत उस समय आती थी, जब मार्ग मे कोई नाला मिल जाता था। ऐसी आफतों का सामना यह पुराना तथा अनुभवी घोड़ा अनेक बार कर चुका था। इन कठिनाइयों का उसके सामने कोई महत्व नही किन्तु उसकी चाल कुछ धीमी तो हो ही जाती थी। यह ठीक नही, क्योंकि चलना बहुत जल्दी था।

घन्टों चलने के बाद घोड़ा एक, पहाड़ी की चोटी पर पहुँचा। तारा ने सामने दूरी पर देखा! उसे हल्की रोशनी दिखायी पड़ी। ध्यान से सुनने पर उसे एक प्रकार की विचित्र आवाज भी सुनायी पड़ी। यह सामूहिक गाने, नाचने या झगड़ा करने की आवाज मालूम पड़ रही थी। इसके अतिरिक्त न तो कुछ दिखायी देता था और न कुछ सुनायी देता था। हाँ पहाड़ी के निचले हिस्से में एक दो भेड़ें इधर उधर दौड़ती दिखायी पड़ जाती थी। मालूम पड़ता था यह चरवाहों की भेड़ें है जो भूल भटक कर रह गयी हैं।

तारा ने सोचा कि अब गाँव निकट है, किन्तु ऊँचाई से ऐसा मालूम होता है। करीब एक घन्टे का रास्ता और होगा। कुवर भी इस घोड़े की कठिन यात्रा तथा भूख से शिथिल हो चला था, उसे झपकी आ रही थी। उसने तारा से अपने स्वाभाविक स्वर मे पूछा—'दूध की नदी अब कितनी दूर है?'

'बस अब आ गयी बेटे ।' तारा बोली ।

तारा एक हाथ से उसे अपनी छाती मे अच्छी तरह चिपका कर और दूसरे से लगाम पकड़कर तेजी से गाँव की ओर बढ़ी चली जा रही थी। आकाश का चाँद भी उसके साथ ही दौड़ रहा था ।

घोड़ा पहाड़ी से उतरता चला जा रहा था। तारा के मस्तिष्क में कुछ स्वप्न भी उतरते चले आ रहे थे । उसका शैशव, किशोरावस्था और फिर यौवन के आरम्भिक दिनों के जीवन की मादकता, आज सब उसे याद आ रही थी । वह बचपन से राजदुलारी है । आज वह रानी नही है, पर किसी रानी से कम भी नही है । क्यो ? उसे उन भयानक दिनो की याद आयी जब आपत्ति के बादल राजवंश पर मँडरा रहे थे । राजवंश ही खतरे में था । आज की जो स्थिति है करीब-करीब वही स्थिति थी । महाराज की हत्या की जा चुकी थी । शासन विद्रोहियो के हाथों मे चला गया था । महारानी बन-बन भटक रही थी उन्हे आठ महीने का गर्भ था । गर्भ में ही राजवंश की आशा थी । तब मेरे ही परिवार की कमला नामक स्त्रीने उन्हें अपने यहाँ आश्रय दिया ! वही वह शिशु पैदा हुआ जिसके वंश के पुत्र की रक्षा का भार आज महारानी ने मुझ पर छोड़ा है ।. . .सचमुच महारानी उस समय कितनी व्याकुल थी जब उन्होने मुझे बुलाकर कहा—'तारा, अब मै तुम्हे अपनी पवित्र थाती सौपती हूँ । तुम इसकी रक्षा करो । और फिर उनकी आँखें भर आयी । कुछ बोल न सकी । मै भी चुपचाप खड़ी रही, जैसे पत्थर की दो मूर्तियाँ आमने-सामने एक दूसरे को निहार रही हो ! फिर उन्होने आँसू पोछे और कहा–'जाओ तारा, कुंवर तुम्हे कितना मानता है तुम्हे पाकर उसे मेरा अभाव भी कभी नही अखरेगा ।' इतना कहते-कहते उनकी बड़ी बड़ी जलभरी आँखों में तूफान आ गया और वे बड़ी तेजी से बरस पड़ी । मुझे गले से लगा वह रोने लगी । सिसकते हुए उन्होंने कहा—'अब तो मैं न रहूँगी, किन्तु मुझे भुला मत देना तारा ।......मेरा कहा सुना क्षमा करो ।'

तब मैने कहा—'आप बिल्कुल निश्चिन्त रहे । मेरे जीवित रहते कुंवर जी पर जरा भी आॅच नही आ सकेगी ।' फिर पता नही क्यो वह मेरे चरणो की ओर झुकने लगी । इसके आगे तारा कुछ सोच न सकी । उस का गला भर गया ।

सोचते-सोचते तारा की आॅखें बरस पडी । कितना परिवर्तन है ! कल क्या थी, आज क्या है ? कल वह राज महल मे थी आज अनजान डगर पर अनजान दिशा की ओर बढी चली जा रही है जीवन की पहली-रात है जब कुंवर भूखा सो रहा है । कल वह राजपुत्र था, आज भिखारी-पुत्र से भी गया गुजरा । भिखारी का भी बच्चा कुछ खा पीकर माॅ की छाती से चिपका अपनी झोपडी मे सुख की नीद सो रहा होगा ।, किन्तु न तो अब इस धरती पर इसकी माता रही, न इसके लिए एक बूॅद यहाॅ दूध—और सुख की नींद ? वह तो बहुत दूर—जितनी दूर आकाश । क्या यही परिवर्तन है ? क्या यही जीवन का दूसरा चित्र है ? एक में हास और दूसरे मे रुदन । पहले में सुख ऐश्वर्य तथा मादकता, और दूसरे मे व्यथा संघर्ष और आपत्ति । क्या एक दूसरे से बिल्कुल उल्टा ? क्या एक बनने तथा दूसरा बिगडने की कहानी है ?—तारा सोच रही थी कि आकाश मे एक तारा टूटा । टूटे तारे का कुछ अंश पास के चमकने वाले तारे से जाकर मिल गया । तारा ने बड़े गौर से देखा, मानो प्रकृति उससे धीरे से कह रही हो—'तारा मिटने बनने की यह कहानी बहुत पुरानी है । इतनी पुरानी जितना पुराना संसार, और जब तक ससार रहेगा तब तक यह कहानी रहेगी ।'

अचानक तारा के विचारो का प्रवाह रुका और नया उत्साह जागा । अभी जो हतोत्साहित होकर एक बच्चे की तरह बिलखने ही वाली थी, अब वह संघर्ष के अखाड़े मे परिस्थितियो को ताल ठोंकती हुई एक पहलवान की भाॅति खड़ी थी ।

अब उसकी घबराहट कुछ कम है । बहुत दूर निकल आयी वह । अब तो गाँव पास ही है । कही न कही गांव में आश्रय तो मिल ही जायगा । अपनी इस सफलता पर उसे प्रसन्नता थी । वह उसी गति से बढी चली जा रही थी कि अचानक उसकी ही ओर आता एक व्यक्ति दिखायी दिया । व्यक्ति पैदल था । कन्धे पर लकड़ी लिए वह सिर पर साधारण कपडे का साफा जैसा बाँधे था । तारा के लिए कोई विचित्र बात न थी । उसने सोचा गाव का ही आदमी होगा, कुछ विशेष बातें मालूम हो जायँगी ।

उस आदमी के पास आते ही उसने लगाम ढीली की । घोडा रुका । वह कुछ पूछना चाहती ही थी कि आदमी बोल उठा—"इधर कही आप को भेड़े तो नही दिखायी पड़ी ?"

"इधर तो नही, किन्तु पहाडी के पास कुछ भेडे अवश्य दिखाई पड़ी थी।"

पहाड़ी का नाम सुनते ही व्यक्ति जैसे निराश हो गया । रात-गाढी हो चली थी । वह सुनसान मे अकेले पहाड़ी के पास जाना ठीक नही समझता था । उसे विश्वास था कि अभी भेड़े कही आसपास ही भटकती होगी, किन्तु इतनी दूर चली गयी । उसे आश्चर्य तथा दुःख दोनो था । वह कुछ समय तक चुप था, पुनः कुछ सोचते हुए पहाडी की ओर देखा । पहाडी की चोटी पर उसे तीन घुड़ सवार दिखायी पड़े । चाँदनी में स्पष्ट दिखायी नही दे रहा था, किन्तु ऊँचाई पर होने से आभास मालूम हो रहा था । उसने तारा को दिखाते हुए पूछा—"क्या वे लोग भी आप के ही साथ हैं ?"

उसने बडे ध्यान से देखा । पहले वह कुछ समझ न सकी । फिर किसी भयंकर स्थिति की उसे आशंका होने लगी । वह अवाक रह गयी । उसका हृदय काँपने लगा । घबराहट के सभी चिह्न उसकी आकृति पर प्रकट हुये किन्तु अँधेरे में उस व्यक्ति को तारा की घबराहट का आभास भी नही हुआ । उसने तारा से पूछा—

"—आप बड़े ध्यान से देख रही हैं, क्या वे आपके साथ नही हैं ?"

"नही, वे मेरे साथ नही हैं।"

"किन्तु आ तो इधर ही रहे हैं।"

"लगता है, लुटेरे या डाकू हैं।" तारा बोली।

'डाकू...।' व्यक्ति सचेत हुआ। पुनः बोला—"तब तो हमें गॉव में जाकर जल्दी सूचना देनी चाहिए, जिससे लोग सचेत हो जायें और जमकर इनका सामना कर सकें।" इतना कह कर वह चलने को हुआ।

तारा को अब अपनी भूल का ज्ञान हुआ। वह जिस गांव को ओर जा रही है, उधर ही तो वे लोग भी आ रहे है। गाव में पहुॅचने पर जब सारी बातें झूठी हो जायंगी, तो क्या झगड़ा फोड़ न होगा वह पकड़ ली जायँगी ! उसने अपनी बात बड़ी चतुराई से संभालते हुए कहा—"कोई जरूरी नही है वे डाकू हो। दूसरे भी हो सकते हैं।"

"दूसरे . ...?"

दोनो पहाडी की ओर देखते रहे। तारा एक पेड़ की छाया मे आ गयी। जिससे सवार उसे देख न सकें। देखते ही देखते एक सवार पहाड़ी की ढाल की ओर नीचे उतरने के लिए बढा, फिर दूसरा और फिर तीसरा भी नीचे आया। व्यक्ति खड़ा न रुक सका बोला—'चलता हूॅ, पता नही कैसी आपत्ति गाव पर आ रही हो।'

तारा अब अपने को रोक न सकी। उसके साहस का बांध टूट गया। अब उसके सामने कोई उपाय नही था। वह न तो रो पा रही थी न चिल्ला पा रही थी और न कुछ कर पा रही थी। जैसे किसी ने उसके मुख पर ताला लगा लिया हो। फिर भी बड़ा साहस करके उसने युवक को रोका। और बडी विनम्रता भरे स्वर में कहा—"जाने के पहले यदि तुम मेरा एक काम कर देते तो बडी कृपा होती" इतना कहते हुए उसने अपनी कमर से

कुछ स्वर्ण मुद्राएं निकाली और उसके हाथ में देते हुए कहा, 'यह है पुरस्कार तुम्हारे उस किये जाने वाले कार्य का ।''

युवक ने चादनी मे सोने की चमक देखी । कितनी आकर्षक थी वह उसके लिये । अब वह एक नही दस काम करने को तैयार हो गया । जो काम तलवार नही कर सकती उसे स्वर्ण कितनी सरलता से कर सकता है । व्यक्ति प्रसन्न होकर बोला—"क्या आज्ञा है ?"

तारा व्यक्ति की ईमानदारी पर इतना शीघ्र विश्वास करने वाली नहीं थी । उसने कहा—"भगवान का नाम लेकर शपथ लो कि जो भी काम तुम्हे सौपा जायेगा, उसे तुम ईमानदारी से करोगे ।"

पहले तो व्यक्ति सकपकाया, फिर स्वर्ण के प्रलोभन ने उसे प्रेरित किया और उसने भगवान का नाम लेकर शपथ ली ।

व्यक्ति गरीब था । भेड़ चराता था । वह भी अपनी नहीं मालिक की । जब कोई भेड कही भटक जाती थी तब उस पर आफत आती थी । इस रात मे भी वह भटकी भेड खोजने ही निकलता था । किन्तु, स्वर्ण ? अब तक उसने स्वर्ण का दर्शन तो किया था, किन्तु दूर से जैसे भगवान की प्रतिमा का दर्शन अछूत करता है ।

किन्तु आज उसका भगवान उसकी हथेली पर चमक रहा था । उसका हृदय गद्‌गद था । उसकी चिरअभिलषित आशा पूरी हुई थी । वह सब कुछ करने को तैयार था ।

तारा ने फिर कुँवर जी के चेहरे की ओर देखा । वह सो रहा था । उसने बड़े प्यार से उसका मुख चूमा और युवक को देती हुई बोली—'इसकी तुम रक्षा करना और जहाँ तक हो सके इसके जीवन को गोपनीय रखना ।'

तारा को विश्वास था कि भील जो कह देते हैं, उससे कभी नहीं हटते । पर इसने तो शपथ तक ले ली है । अब विशेष चिंता की बात नही ।

आखिर यह रहस्य क्या है ? यह समझ पाना उस भील की बुद्धि के बाहर था। फिर भी उसने बालक को अपनी गोद मे ले लिया। उसे गौर से देखा। सचमुच एक चॉद का टुकड़ा उसकी गोद में सो रहा था। उसने तारा की ओर देखकर केवल एक शब्द कहा—'और' ?'

'और कुछ नही। यही एक मात्र कार्य है, जिसे तुम्हे करना है। यदि भगवान ने चाहा तो मै शीघ्र ही तुम्हारे गॉव में तुमसे मिलूँगी। अभी यह सब तुम्हारे लिए रहस्य होगा, किन्तु इस रहस्य को जानने की कभी कोशिश न करना और जब यह अपनी मॉ को या मुझे खोजे...? ' इतना कहते-कहते उसकी जबान एक दम रुक गयी।

"तो क्या तुम इसकी मां नही हो ?" युवक बोला।

तारा घबरायी थी। वह कुछ भी ठीक सोच समझकर कह नही पा रही थी। वह पुनः बोली—'नही, मै ही इसकी सब कुछ हूं। मेरा मस्तिष्क इस समय ठीक नही है। मै कुछ ठीक नही कह पा रही हूँ।'

अचानक कुंवरजी युवक की गोद मे कनमनाये। तारा की स्थिर दृष्टि उस पर पड़ी।

"तब इस बच्चे को ही क्यो ? आप भी मेरे साथ चलिए।" युवक बोला।

"लेकिन यदि वे सवार मुझे तुम्हारे साथ देख लेंगे, तो हम दोनो को अपने प्राणो से हाथ धोना पड़ेगा और यह बच्चा भी जाता रहेगा।"

युवक अब भी बच्चे को लेकर कुछ सोचता खड़ा रहा।

तारा बोली, "खड़े क्या हो ? जल्दी करो। अब वे आते ही होगे। हमारा नमस्कार स्वीकार करो और शीघ्र चले जाओ। भगवान हम दोनो को सकुशल रखे।"

युवक बच्चे को लेकर आगे बढा। तारा की आँखें बरस पडी। कितनी ममता और स्नेह से उसे उसने पाला था। माता ने कितने विश्वास से उसे सौंपा था और अब वह विवश होकर एक अनजान को अपने प्यारे बच्चे को सौंप चुकी थी।

युवक के चरण किसी प्रकार आगे बढे चले जा रहे थे किन्तु उसका मन कह रहा था कि उस असहाय नारी को भी साथ लेता चले। बिचारी अकेले इस हालत में कैसे रहेगी? परिस्थिति उसे आगे ढकेल रही थी। मन पैर पकड कर उसे पीछे खीच रहा था। विचित्र सघर्ष था। इस सघर्ष में मन की ही विजय हुई। अभी वह कुछ ही आगे बढा था कि पीछे मुड़ा।

अब तक तारा वृक्ष के नीचे घोडे पर सवार खडी थी। किकर्तव्य-विमूढ थी। उसके मस्तिष्क मे प्रबल तूफान आ रहा था। तब तक उस व्यक्ति ने आकर कहा—'आप भी साथ चली चलिए न!'

"मैंने कहा न कि मेरा साथ चलना खतरे से खाली नही है।"

"पर कोई तरकीब निकालनी ही पडेगी। आइये सोचता हूँ।" इतना कह कर युवक मार्ग से हटकर पास की झाड़ी की ओर चला। तारा भी घोडे से उतर उस युवक के पीछे-पीछे चली।

झाड़ी में आकर युवक ने पूछा—"आखिर बात क्या है? मैं कुछ समझ नही पा रहा हूँ।"

पहले तो तारा हिचकिचायी। फिर उसने सारी कहानी स्पष्ट कह सुनायी। सोचा ऐसी स्थिति में किसी न किसी को तो अपना बनाना ही पडेगा। सारी बात गौर से सुन लेने के बाद वह बडे विश्वास के साथ बोला—'अरे, तो इसमे क्या बात है। सभी दिन सबके समान तो जाते नही......तो फिर घबराना क्या? देखिए मै एक तरकीब निकालता हू। आप घोडा यहीं छोड़ दीजिए...।' इसके पश्चात् उसने तारा के अत्यन्त

निकट कान के पास आकर कुछ बहुत धीरे से कहा। तारा पहले तो झुंझलायी। उसकी मुद्रा से लगा कि वह युवक की बातों का विरोध कर रही है, किन्तु कुछ ही देर बाद वह पुनः शान्त हो गयी और बड़ी गम्भीरता से कुछ सोचते हुए बोली,—'अच्छा जैसा तुम कहो।' इतना कहकर वह युवक से कुछ दूर दक्षिण की ओर गयी। वहाँ उसने अपना घाघरा कुछ ढीला करके नीचा किया। घोड़े पर चढ़ते समय उसने अपना घाघरा बहुत ऊपर करके बांधा था, जिससे घुड़सवारी मे कही पैर न फंसे। पर अब पैर की एड़ी तक ढक लिया। फिर अपनी ओढनी को मुंह पर ढाँक कर घूंघट निकाला। उसकी आकृति बहुत कुछ छिप गयी जैसे बादलो के भीतर चन्द्रमा छिप जाता है। फिर युवक के पास आयी। वह उसे देखते ही मुस्कराया और बोल उठा—'हाँ अब ठीक है।'

यह लाचारी ही थी न कि तारा एक देहाती भील के इशारे पर इस समय वैसे ही नाँच रही थी जैसे मदारी के इशारे पर बंदरिया नाचती है। क्योंकि उसे विश्वास हो चला था कि यह युवक देखने मे गंवारू भले ही लगे, पर है बुद्धिमान और इसी की शरण में मेरी रक्षा हो सकेगी।

चलने के पहले उसने कुछ हरी पत्तियाँ तोड़कर अपने हाथ से घोड़े को खिलानी चाही, किन्तु उसने उसे सूंघकर छोड़ दिया। फिर वह उसकी पीठ थपथपाती रही, घोड़ा मुड़मुड़कर उसे देखता रहा। कितनी कातर दृष्टि थी उसकी। वह भी उसे छोड़ना नहीं चाहती थी। इस आपत्ति काल में उसके दो ही साथी थे, एक कुवर जी और दूसरा यह घोड़ा। अपने इस प्रिय साथी को इतनी शीघ्रता से वह छोड़ दे कैसे सम्भव ? किन्तु युवक बोला—"मोह ममता छोडिये अब विलम्ब करने का अवसर नही है।"

तारा भरे मन से चल पड़ी। घोड़ा हिनहिनाया। पता नही अपनी भाषा में वह अन्तिम नमस्कार कर रहा था या साथ चलने को कह रहा था।

दिन की तपी धरती अब शीतल हो गयी थी। दोपहर और इस समय के तापक्रम में अब बहुत अन्तर हो चला था। हवा का झोंका भी मोहक था यद्यपि धूल उडती थी दोनों लपके भग जा रहे थे। व्यक्ति आगे और तारा पीछे थी। बालक व्यक्ति की गोद में था। दूर से मानवीय कोलाहल सुनायी पड़ रहा था कुछ लोगों के गाने-बजाने, नाचने या झगड़ा करने की इसमें सम्मिलित ध्वनि मालूम पड़ती थी। यों तो गाव अब भी दूर था पर आवाज उस सन्नाटे में साफ सुनायी पड रही थी, मानो सुनसान बोल रहा हो।

दोनों चुपचाप बढे चले जा रहे थे। उन्हे तो जल्दी से जल्दी गाव मे पहुंचना था। किसी प्रकार की बातचीत नही, किसी प्रकार का व्यवधान उन्हे सहन नही था। उन्हे तो केवल आगे बढना था, और वे बढ़ चल जा रहे थे। किन्तु कुछ ही दूर बढे थे कि उन्हे तेज घोड़ों की टापें सुनायी पड़ी दोनों ने पीछे घूम कर देखा, पेडों पर बसेरा लेने वाले पत्ती भी खड़बड़ा रहे थे उन्हे तेजी से बढते देखकर युवक मनही-मन बोला—'आओ तुम सबको बताता हूँ।'

तारा ने सुन लिया। उसने कहा—"इस समय गड़बड़ मत करो। जो तरकीब तुमने बतायी है, उसी से काम निकालो।"

"आप डरती करती हैं? मै भला इन तीनों को क्या समझता हूं। इनकी खबर लेने के लिए तो मेरा यह डंडा ही काफी है, और फिर आप खड़ी क्या तमाशा देखती रहेंगी?" युवक ने डण्डा पटकते हुए अपनी हिम्मत दिखाई। आखिर भील ही न जरा से आवेश मे बुद्धि गायब हो गयी।

"और यदि वे तीन से अधिक हुए तो?"

"तो भी हमारे हाथ का कमाल तो देख ही लेंगे।"

"किन्तु किसी प्रकार का विरोध करना इस समय हमारे लिए हित कर नहीं।" तारा समझती थी कि संघर्ष से भेद खुल जायगा और उद्देश्य

की पूर्ति न हो सकेगी। उसने अपना उद्देश्य पुनः युवक को समझाया युवक ने जोश का अपनी बुद्धि से नियन्त्रण किया। दोनो फिर चुपचाप चलने लगे अब सवार कुछ पास आ गये थे।

दोनो के निकट आते ही घोड़े की चाल बहुत धीमी हो गयी। युवक ने घूमकर देखा कि कितने है और फिर आगे बढ़ा। इच्छा होते हुए भी तारा ने घूमकर देखना ठीक नही समझा। वह चलती रही।

सवारो में से एक अपने बगल के व्यक्ति से धीरे से बोला—"दादू, इन दोनो से कुछ थाह लग सकेगी ?"

"बात कर सकते हो, किन्तु इस चतुराई से कि उन्हे हमारे यहां आने का रहस्य न मालूम हो। नहीं तो सारा भण्डाफोड हो जायगा।"

तीनो अपना घोड़ा उन दोनो के बगल मे ले गये और राजू सबको सुनाते हुए बोला,—"दादू लगता है, बिचारे दूर से आ रहे हैं। थक गये है। अच्छा होता हम उन्हे भी अपने घोड़ो पर बैठा लेते।"

"हॉ, भाई मै भी यही सोचता हूँ। तुम हमारे घोड़े पर आ जाओ। उस पर औरत को बैठा दिया जाये और मूंगा के घोड़े पर युवक बैठ जायेगा। हम लोग एक-एक पर दो-दो हो जायेंगे। क्यो भाई मूँगा।"

"हॉ, हॉ, बिल्कुल ठीक।" मूँगा बोला। युवक और तारा दोनो सुन रहे थे, पर चुप थे।

राजू ने युवक को सम्बोधित करते हुए पूछा—"क्यो जवान, यह औरत घोड़े पर चढना जानती है ?"

"नही-नही, हमारी औरत घोड़ पर चढना नही जानती।" युवक ने झटकते स्वर मे जवाब दिया।

"तब भी कोई हरज नही। औरत को इस घोड़े पर बैठा दो। घोड़ा सीधा है। लगाम पकड़े रहेगी। घोड़ा चला चलेगा।" राजू ने समझाते हुए कहा।

"नही, नही मै इस चक्कर मे नही पड़ता । यदि तुम हमारी औरत का घोड़े पर बैठा कर भगा ले गये, तो मैं क्या करूंगा। ।"—युवक एक मूर्ख का सफल अभिनय करते हुए बोला ।

तीनो सवार जोर से हँस पड़े। युवक ने चलते-चलते कुँवर को एक कन्धे से दूसरे कन्धे पर किया। वह अब भी गहरी नीद में था। उसे देखकर मूंगा बोला, "भाई तुम बच्चे को लिए हुए हो। जरूर थक गये होगे। तुम ही मेरे घोड़े पर आ जाओ। डरते हो तो औरत को पैदल ही चलने दो।"

"वाह रे वाह, मै घोड़े पर चलूँ और मेरी औरत पैदल। यह हमारा कर्त्तव्य है? क्या तुम अपनी औरत के साथ ऐसा ही व्यवहार करते हो?" युवक के कहने के ढंग में शिष्टता नाम मात्र को भी नही थी। तीनो ने उसे महामूढ गॉव का गँवार ही समझा। मूंगा उसकी बात सुनते ही झेंप गया। उसे बड़ा बुरा लगा। यदि वह दूसरी परिस्थिति मे होता, तो युवक को अच्छी तरह समझता।

इस समय वह गम खाकर और क्रोध पीकर रह गया।

चार पॉच कदम चुपचाप चलनेके बाद दादू ने बातचीत का सिलसिला पुनः आरम्भ करते हुए कहा—"कहाँ से आ रहे हो, भाई?"

'ससुराल से. . ।' युवक ने छूटते ही जवाब दिया।

"तुम्हारी औरत के अच्छे कपड़े देखकर मै तो यह समझ ही गया था। मेरे पूछने का मतलब था किस गांव से आ रहे हो।"

युवक कुछ बोलने ही वाला था कि मूंगा बोला,—"अरे, ससुराल से आ रहे हैं, तभी तो साहब को अपनी लुगाई को इतनी मया लग रही है।' तीनों हँस पड़े।

"क्यों नही, राह चलते हम लोगो को देखकर तुम्हे मया लग गयी और घोड़े का बैठाना चाहा, तब भला जिसे जिन्दगी भर का साथ हो मै

उसमे क्या करूँ, तो तुम्हे क्यो बुरा लगता है।" युवक अत्यन्त गंवारू ढंग से बोला।

"यह तो अच्छी बात है। भला इसमे किसे बुरा लगेगा।" दादू ने बात खतम करना ही ठीक समझा। इस मूर्ख देहाती से बात बढाना ठीक नही। किन्तु युवक भला कब मानने वाला था, उसने कहा—"आखिर इधर चलना कैसे हुआ ?"

"यो ही, हमारे एक साथी को पागलपन का दौरा होता है। वह दौरे मे हमेशा यही सोचता है कि उनके बच्चे की कोई हत्या करने वाला है। जब दौरा आता है तब उसे ऐसा लगता है मानो मेरे बच्चे को कोई मार रहा हो। कल भी उसका दिमाग गरम हो गया और अपने तीन साल के बच्चे को लेकर कही चला गया। घरवाले बेचारे हाहाकार कर रहे हैं। दिमाग ठीक नही है, कैसा पड़े कैसा न पड़े।"

'ओहो .हो तीन साल का बच्चा...और पागल युवक!' युवक ने अपनी चिन्ता व्यक्त की।

'हाँ भाई यही तो डर की बात है .और मजा यह कि वह जहाँ भी जाता होगा—यही कहता होगा—हमारे बच्चे को बचाओ, इसकी रक्षा करो। देखो अत्याचारी इसे मारना चाहते हैं।'

'तब तो वह बड़ा मजा करता होगा!' युवक मुस्कुराते हुए बोला। कही ऐसा न हो कि वही अपने बच्चो को मार डाले...हाँ पागल के दिमाग का क्या ठिकाना।"

'किन्तु वह उसे मार तो नही सकता।" मूँगा बोला।

दादू ने देखा कि मूँगा मनोवैज्ञानिक भूल कर रहा। भला पागल भी समझदार होता है कि सदा अपने भलाई की ही बात करेगा। उसने अपने बाये पैर से मूँगा के दाहिने पैर को दबाकर संकेत किया कि व्यर्थ की बकवाद मत करो। गाँव के लोग भी कभी कभी बडे दूर की बात सोचते हैं।

फिर वह उस युवक से बोला,—'हॉ, भाई हॉ, तुम ठीक कहते। वह अपने बच्चे को मार भी सकता है। यही तो दुख है।''

'तब तो बडा खतरा है।'

'हॉ भाई। तुमने किसी व्यक्ति को इधर आते हुए देखा है।' दादू ने अपने मतलब की बात पूछी।

'इधर तो नही, हॉ, सन्ध्या के कुछ ही बाद एक आदमी को तेजी से घोडे को भगाते अवश्य देखा था।'

'केवल आदमी ही था!'

'नही, उसकी गोद में एक बच्चा भी था। बच्चा जोर से चिल्ला रहा था। जैसे बन्दर अपने बच्चे को गोद मे चिपकाये रहता है—वैसे ही वह भी खूब चिपकाये भागा जा रहा था।'

दादू को अपनी सफलता पर थोडा गर्व हुआ! उसने मुस्कुराते हुए राजू और मूँगा की ओर देखा! फिर राजू बोला—'क्यों भाई, क्या तुम बता सकते हो कि वह आदमी कैसा था?'

ज्यों ज्यों ये सवार नये-नये प्रश्न पूछते, तारा की घबराहट बढती जाती। वह हर क्षण सोचती, कहीं ऐसा न हो यह गॅवार आदमी कुछ अंड-बंड कह दे। हे भगवान, इसे बुद्धि दो।' किन्तु तारा उसे जितना मूर्ख समझती थी वह उतना ही चालाक था। उसने मजाक करते हुए बड़े गम्भीर ढंग से कहा,—'आदमी...यही समझिए कि वह आदमी था।'

'अरे, भाई यह तो हम भी जानते हैं कि वह आदमी था।...मेरे कहने का मतलब है कि वह कैसा था।'

'कैसा वैसा मै कुछ भी नही जानता। युवक बड़े झटके से बोल रहा था। अरे बड़ी तेजी से जा रहा था। चादर ओढे था कोई घोड़ा रुकवाकर और चादर उतरवा कर तो देखा नही जो भला बता सकता कि वह कैसा

था। गोरा था कि काला था। लम्बा था कि नाटा था।' फिर अपनी लकडी फटकार कुछ तेजी से आगे बढा।

उसकी मूर्खता तथा उज्जडता पर सवारो को हँसी आ रही थी, किन्तु उन्होंने अपनी हँसी रोकते हुए कहा,—'नाराज हो गये क्या भाई?'

'अरे नाराज होने की बात ही है। आप भी बात पूछते हैं, बात की जड पूछते हैं। कैसा था! अरे मुझे अपनी लडकी थोडे ही ब्याहनी थी कि उसे गौर से देखता कि काना है कि लगडा है।' इतना सुनते ही सवार खिलखिलाकर हँस पड़े। जब हँसी थमी तब राजू ने पुनः पूछा—'अच्छा आपने यह तो देखा ही होगा कि किस ओर जा रहा था।'

'हॉ यह तो देखा ही है, आँखें थोडे ही बन्द किए था। पहाडी के पीछे से सँकरा रास्ता दक्षिण की ओर जाता है। वह उधर ही जा रहा था।'

सुनते ही सवारो के मस्तिष्क ने अनुमान लगाना शुरू किया कि उधर कौन सा स्थान है जहाँ वह शरण ले सकता है। किन्तु वे कुछ समझ नहीं पाये, फिर भी इस विषय पर मौन ही रहे। उन्होंने कुछ अधिक बात करना और वह भी इस गवार के सामने ठीक नही समझा।

पुनः मूँगा ने कुछ जोर से उस गवार युवक को सुनाते हुए कहा—'किन्तु इस रात मे तो उधर जाना नही हो सकता।'

युवक चुप था! दादू बोला—'हॉ यही तो मै भी समझता हूँ! फिर उसने युवक को सम्बोधित कर के कहा—'तुम क्या इसी गॉव मे रहते हो?'

"हॉ, मेरा गॉव आ गया।" प्रसन्नता प्रदर्शित करते हुए उसने कहा। इतना सुनते ही तारा के भी जान में जान आयी। उसे और किसी प्रकार का भय नही था। वह सोचती थी, कि यदि कुँवर जाग जायगा और भूख से व्याकुल हो रोने लगेगा तब क्या होगा? दादू तो उसे अच्छी तरह जानता है उस की आवाज भी पहचानता है। उस के जागने पर एक

नयी आफत खड़ी हो जायगी । उस समय वह भगवान से केवल एक ही प्रार्थना कर रही थी—"भगवान, इस समय तुम सारे संसार के आँखों की नींद लाकर कुँवरजी की आँखो में भर दो और वह तब तक सोता रहे, जब तक मैं किसी रक्षित स्थान मे पहुंच न जाऊँ ।"

भगवान ने उसकी प्रार्थना सुन ली वह अब तक सोता ही रहा । घर भी पास आ गया । युवक बोला, "अच्छा, अब मेरा घर आ गया । मैं इधर से ही निकल जाऊँगा । पास पडेगा । नमस्कार ।"

"अरे भाई, इतनी जल्दी क्या है ? यदि दो चारपायी भी मिल जाती, तो हम लोग तुम्हारे दरवाजे पर ही आज की रात बिता देते ।" राजू अत्यन्त आत्मीयता प्रकट करते हुए बोला, किन्तु युवक को यह प्रस्ताव बडा बुरा लगा । तारा भी आफत से छुटकारा पाना चाहती थी किन्तु उसने देखा कि वह छाया की तरह उसके साथ ही लगी है । फिर भी शिष्टतावश युवक को कहना ही पडा,—'यदि दो ही चारपायी से काम चल जाय तो चले चलो कही से माँग कर ला दूँगा, मेरे पास तो है नही ।"

अनजान गाँव में वे कहाँ जाते उसके साथ हो लिये और उसके घर की ओर चले ।

घर कच्चा था ऊपर से छाया हुआ । बाहर की दीवार पीली मिट्टी से पोती हुई है । भीतर दो कमरा एक आँगन और एक दालान है, किन्तु सभी कच्चे । यह उसका पुस्तैनी घर है । यह गाँव ही गडेरियो का है । गडेरिये दिन भर भेड चराते है । और सन्ध्या को उन्हे बाड में बन्द कर अपने अपने घर आते हैं । रात्रि का स्वागत वे मदिरा के नशे मे हुल्लड़बाजी से करते है । गाना बजाना, लड़ाई झगडा सब कुछ इसी समय होता है । सवारो ने देखा यह गाँव भी खूब है । कहीं मस्त होकर कुछ लोग गा रहे हैं । कही नाच रहे हैं । और नाच भी खूब है । शराब के नशे में सारा शरीर ही झकझोर देते हैं । और फिर ओ हो हो ऽऽ,फिर

बडी मस्ती से कूदते हैं। कही किसी के सिर पर शीतला माता की सवारी आती है, फिर पुस्त-दर-पुस्त की खबर ली जाती है।

युवक अपने घर के द्वार पर पहुँचा वहाँ एक वृद्धा खडी उसकी राह देख रही थी। यह उसकी माँ थी, अस्सी के करीब थी। उसने प्रसन्न हो कहा—'क्या बेटा भेड मिली ?' किन्तु उसने जब तीन घोडसवारों तथा एक औरत को साथ देखा तो वह भौंचक्का हो गयी। कुछ बोलने की चेष्टा करने ही वाली थी कि युवक बोला—"हाँ, हाँ मिली। चल घर में।" वृद्धा घर मे चली गयी।

"क्यो दोस्त ससुराल से भेड भी मिलने वाली थी क्या ?" राजू घोडे से उतरते हुए बोला।

'हाँ जी,' उस ने छोटा सा उत्तर दिया और सवारो को बाहर रोकते हुए कहा—" थोड़ा रुको। अभी आता हूँ, तो व्यवस्था करता हूं।"

वह तारा को लेकर भीतर चला गया।

× × ×

रात्रि ने दूसरा पहर पार कर लिया है। धरती निस्तब्धता की चादर ओढे सोयी पड़ी है। चारो ओर सन्नाटा है। कभी कभी दूर से कुत्तो के भूकने की आवाज सुनाई पड़ जाती है। तीनो सवार दरवाजे की बायी ओर कुछ दूर पर पड़ी चारपायियो पर खर्राटे ले रहे है।

तारा अभी अभी सोयी थी। किसी प्रकार सोने की चेष्टा करते-करते उसकी आँखें लगी थी। उसके एक भयकर स्वप्न देखा। उसने देखा कि एक जगल में वह मोम का पुतला अपनी छाती से चिपकाए भागी जा रही है! जंगल मे चारो ओर भयानक आग लगी है। पेड पौधे, जानवर, पंछी सब जल रहे हैं। घबराए हुए जंगल के प्राणी एक बड़े सरोवर के पास पहुँचते है, पर सरोवर का पानी भी खौल रहा है। बिचारे छटपटा रहे हैं। तारा

के भी कोई रास्ता दिखायी नही देता है। इसी घबराहट में नींद टूट जाती है।

आँख खुलते ही व्यग्रता में उसने चारो ओर देखा। एक दम शान्ति थी। बगल में निद्रा देवी की गोद में पडे कुंवर जी को उसने आँखे गड़ाकर देखा ही नही, एक बार पूरे शरीर पर हाथ फेरा, तब संतोष की सास ली। इस दालान में वह अकेली थी। उसकी दृष्टि आकाश की ओर गयी। चॉद पश्चिम की ओर झुक गया था। तारो की रोशनी बता रही थी कि अभी सबेरा दूर है पर रात की कमर टूट चुकी है।

सचेत होने पर भी तारा को अंगड़ाइया आ रही थी। आज उसका तन थका था पूरे शरीर मे पीड़ा हो रही थी। एक तो इतनी लम्बी घोड़े की यात्रा, दूसरे जमीन पर सोना, दानो उसे अत्यन्त शिथिल बना चुके थे। वह किसी प्रकार उठी, क्योंकि उठना था। समय हो चला था। और उस ओर बढी जिधर युवक सोया था।

दालान में चारपायी पर पडा उसका अर्द्धनग्न शरीर आकाश से बरसती धवल चॉदनी से लिपटकर कम आकर्षक नही था। तारा को भी पता नही कैसा लगा। वह पास जाते जाते अचानक रुक गयी। उसका कलेजा धक से करके रह गया। सुनसान रात्रि में ऐसी स्थिति में कभी किसी के पास तो जाना दूर रहा उसने किसी परपुरुष को देखा भो नही था। किन्तु क्या करें? समय भी टलता जा रहा है। वह कैसे जगाए? क्या सम्बोधन करे? क्या कहे कुछ भी समझ नही पा रही थी। कुछ समय तक चुपचाप खड़ी रही। फिर उसने सोचा, दूर से पानी के छींटे फेंकने चाहिए।

कमरे में बिलकुल अँधेरा था। कोई भी वस्तु दिखाई नहीं देती थी। वह वहाँ कुछ घन्टे ही रही, इससे ठीक ठीक घर में रखी प्रत्येक वस्तु की अनुमान लगाना भी कठिन था। फिर भी किसी प्रकार लड़खड़ाती टटोलती कमरे के कोने में पडे पानी के मिट्टी के घड़े के पास पहुँची और वही रखे एक

लोहे के लोटे को घड से पानी निकालने के लिये डाला। लोटा घडे से टकराया। खट की आवाज हुई। वही सोयी वृद्धा ने, जिसे मृत्यु भी अरसो हुआ भूल चुकी थी, जोर से खाँसना शुरू किया। तारा सकपकायी। उसने सोचा मुझे यदि इस समय यह वृद्धा इस प्रकार अँधेरे घर में टटोलते देखेगी तो क्या कहेगी। वह समझती थी कि मेरे आज के कार्यक्रम को वृद्धा नही जानती। पर ऐसा नहीं था।

"समय हो गया क्या बेटी ?" वृद्धा ने ममत्व भरे स्वर मे खाँसते हुए पूछा।

"हाँ, माँ।" तारा ने अत्यन्त संकोच से कहा—

"अच्छा मै उसे जगा देती हूँ।" जैसे वृद्धा ने तारा को उठने और उस के जगाने की सारी क्रिया देख चुकी हो वह युवक को जगा, फिर सोने चली आयी।

युवक ने उठते ही मुँह धोया। अब भी उसे जमुहाई आ रही थी। उसकी नीद पूरी नही हुई थी। उसने तारा से कहा—थोड़ी देर अभी और रुको मै उसे बुलाता हूँ।"

"किन्तु बहुत देर हो गयी है। किसे बुलाने जा रहे हो ?"

"जादव को। हमारे गाँव का सरदार है, मुखिया का लड़का। बड़ा बहादुर है, तुम्हारी मदद कर सकता है। मै अभी ही आ रहा हूँ।"

"किन्तु बुलाने की क्या जरूरत ? तुम कुंवर को लेते जाओ और उसे दे दो अब वही उसकी रक्षा करे। मुझ मे आगे बढने की इस समय बिल्कुल शक्ति नही है।" तारा ने अपनी विवशता प्रकट की। बालक को छोड़ने के विचार मात्र से वह विचलित हो जाती थी, किन्तु मनुष्य को कभी कभी वैसा भी करना पड़ता है जिसे वह नही चाहता। न चाहने पर भी तारा अब कुंवर जी को अपने से दूर करने का निश्चय कर चुकी थी।

युवक तारा का मनोभाव समझ गया। वह हँसी मजाक में उस के

मन का सारा दुख धो डालने की चेष्टा करते हुए बोला—अच्छा, तो आप इतने से ही थक चुकी हैं। या मेरा घर ही आपको बहुत अच्छा लग रहा है। कहते ही युवक बड़ी जोर से हँसा फिर अचानक उस ने अपनी हँसी दबाली, फिर भी इस गहन निस्तब्धता की छाती काँप गयी। उसने पुनः कहा—"कोई बात नही। मै रात को दूध पीना भूल गया था। चूल्हे के पास ही राख में ढका होगा। उसे पी लो सुस्ती दूर हो जायगी। इतना कह वह घर के पिछले द्वार की ओर बाहर जाने के लिए बढ़ा फिर अचानक पीछे लौटा जैसे वह कोई चीज लेना भूल गया हो। और तारा को सावधान करते हुए बोला—"देखो बालक को अभी मत जगाना और न तुम ही कुछ न बोलना। जो भी तैयारी करनी हो, अँधेरे मे ही करना। दीया मत जलाना। ऐसा कोई काम मत करना जिससे बाहर वालो को तुम्हारे जागने की जरा भी आहट मिले।" सावधान कर वह पुनः बाहर चला गया।

तब तक वह बैठी कुछ सोचती रही। कभी सोते कुँवर जी की ओर ध्यान से देखती। और कभी आकाश की ओर एक टक निहारती। कुछ समय बीता। अचानक उसे घर के पिछले द्वार पर युवक के आने की आहट सुनायी पड़ी। आते ही उसने कहा,—'मेरा साथी आ गया। शीघ्रता कीजिए।'

"मुझे क्या करना है? मै तो तैयार ही हूँ। चलो।" वह कुँवर जी को उठा चल पड़ी। बाहर द्वार पर उसने एक लम्बा तगड़ा जवान देखा। उसके मन ने कहा—"जादव तो सचमुच सर्दार हैं। जादव ने उसे देखते ही नमस्कार किया। तारा ने नमस्कार का उत्तर तो दिया किन्तु नारी की सुलभ लज्जा उसके चेहरे पर दौड़ गयी।

जादव कुछ बोले इसके पहले ही युवक बोला—"चुपचाप दबे पाँव इधर आइए।" युवक उस ओर बढ़ा जिधर उन तीन सवारों के घोड़े बंधे थे।

"इनमें से दो घोडे खोल लीजिए। और उनका रखा घोड़ों का साज मैं लाता हूं। जल्दी कीजिए।" युवक बोला।

"फिर सवेरे उन सवारो को क्या जवाब दोगे।" जादव ने कहा।

"कह दूँगा कि रात में कोई खोल ले गया।"

"इससे गाव के चरित्र में धब्बा लगेगा, हम लोग चोर समझे जायंगे और वे चोर का पता लगाने आस पास के गाँवों की ओर बढेंगे। इससे हो सकता है कि हमारे रहस्य का उद्घाटन का कोई सूत्र उन्हे मिल जाय।"

"तो क्या आप लोग पैदल ही बढने का विचार कर रहे है ?" युवक ने साश्चर्य पूछा।

"नही, यह तो असम्भव है। मै एक उपाय निकालता हूँ। पहले तुम थोड़ी सी घास ले जाओ। तब तक मै घर से बाबा की पुरानी घोडे की जीन तथा लगाम लाता हूँ।"

"क्या तुम्हारे पास दोनो घोड़ो के लिए लगाम और जीन होगी।"

"लगाम तो दो अवश्य है, पर जीन एक ही है। कोई हरज नही मै बिना जीन के चलूँगा।" इतना कह वह अपने घर की ओर दौड़ा। युवक भी घास उपलब्ध करने की चेष्टा में लगा। तारा वही बालक को लिए कुछ समय तक खड़ी रही। बीच-बीच में वह कई बार कनमनाया किन्तु वह उसे थप थपा कर पुनः सुला देती थी। केवल यही एक काम था जो उसे इसी बीच कई बार करना पड़ा।

पास बधे घोड़ो की कभी-कभी हल्की हिनहिनाहट तथा दूर से जगली कुत्तो के भूंकने की आवाज के अतिरिक्त और कुछ भी सुनायी नही देता था। तेज हवा के झोको की सनसनाहट में निस्तब्धता काँप रही थी।

मनुष्य अकेला रह सकता है, पर उसका मस्तिष्क कभी अकेला नही रहता। विचारो के साथी सदा उसके पास रहते हैं। तारा के मस्तिष्क में

भी विचारो की एक लम्बी शृंखला चल पड़ी थी। वह जीवन के उन क्षणों के सम्बन्ध मे सोचने का प्रयास कर रही थी जो अभी भविष्य के गर्भ मे एक रहस्यमय पहेली की भांति अनजान पडे थे। पर कुछ सोच नही पा रही थी। उसे ऐसा लग रहा था कि उसके जीवन के चरण एक ऐसे भूखण्ड के छोर पर है, जो ब्रह्म की भांति अज्ञेय है तथा ज्ञान की भांति विस्तृत है जो पुराने कब्रिस्तान की भाति वीरान तथा एक असफल जीवन की भाति उजाड है, जिसकी सीमा मृत्यु की अवधि की भाति अनिश्चित तथा आगे पीछे पडने वाली है। अब उसे उसी भूखण्ड पर चलना है। कितना अस्थिर था उसका मन, कितना व्यग्र था उसका मस्तिष्क। किन्तु वह चुपचाप खड़ी थी कि उसे जादव की आहट सुनायी पडी—"घास आया ?" उसके विचारो की शृंखला एक दम टूटी। वह बोली, "अभी तो नही।"

"अजीब आदमी है। घास लेने कहाँ चला गया ? यदि मै ऐसा सोचता तो खुद ही लेता आता।" वह कह ही रहा था कि युवक घास लेकर आ गया। कुछ पूछने के पहले ही उसने सफाई देते हुए कहा—"इस गरमी में तो कही घास ही नही दिखायी देती। दूर उस टीले के पार से ला रहा हूँ...अच्छा बताओ अब क्या करना चाहिए।"

"अब मै घोड़ो की रस्सियाँ तोड़ता हूँ। तुम घास उनके आगे रख दो जिससे वे हिनहिनाए नही। सबेरे सवारो से टूटी रस्सिया दिखाकर कहना कि लगता है रात में कोई जंगली जानवर इधर आ गया था। जिसके भय से घोडे कही तुड़ा कर भाग गये।"

"पर इतनी मोटी रस्सी का टूटना असम्भव है।"

'असम्भव'—जादव जोर से हँसा—"देखा हमारे बाहुओं की शक्ति।" इसने देखते देखते तीनो घोड़ों की रस्सियाँ तोड़ दी और बोला—"दो घोडे को तो मै ले जा रहा हूँ। मेरे जाने के बाद तीसरे घोडे को तुम पहाड़ी की ओर भगा देना। नही तो सन्देह होगा कि जब जंगली

जानबर आया तब दो ही घोड़े भागे। तीसरे से उसकी दोस्ती थी क्या ?"
जादव मुस्कराया।

'हाँ यह तो ठीक ही है।' युवक ने प्रसन्न होकर कहा। तारा कुछ बोली नही, वह चुपचाप कंधे पर कुँवरजी को लिए और सिर नीचा किये खडी रही। कभी-कभी आँखें उठा कर वह जादव को देख लिया करती थी। जादव की बुद्धि और चतुराई पर उसे भी प्रसन्नता थी। वह सोच रहीं थी, कि सचमुच इसका सहयोग हमें बड़ा उपयोगी सिद्ध होगा। तब तक जीन आदि कसकर जादव पुनः बोला,—'आखिर अब किस बात की देर है ?'

'किसी बात की नही सरदार।' युवक ने कहा—

'तो फिर बैठिए।' जीन कसे घोड़े की ओर संकेत कर उसने तारा से कहा। तारा चुपचाप बैठ गयी।

'देखिए कुंवरजी को ओढनी से अच्छी तरह ढक लीजिएगा।' यों तो उसे तारा ने पहले ही ढाक लिया था, पर जादव के कहने पर उसने उसे और अच्छी तरह छिपा दिया।

'अच्छा चलूँ भाई। नमस्कार।' वह छलांग मार कर घोड़े पर चढ़ा। 'जय शीतला माता. ' और फिर तेजी से आगे बढ चला।

आकाश के मुस्कराते चन्द्रमा ने दोनो को आशीर्वाद दिया। अब भी घड़ी भर रात बाकी थी। शीतल मंद वायु बह रही थी। तारा की गोद मे कुंवरजी तथा बाहर चारपायी पर पड़े सवार अब भी सो रहे थे।

× × ×

समय के सबल कन्धो पर चढ अंधेरा भाग चला था। सूर्य की पहिली किरण आने के पहले ही सवार जागे। गांव मे भी लोग जाग चले थे, नित्यकर्म में लगे थे। उठते ही सवारो ने युवक को पुकारा। "अभी सोया ही है। जगाती हूँ।" भीतर से वृद्धा की भर्रायी आवाज आयी।

थोड़ी देर बाद युवक अगड़ाई लेता बाहर आया। "बड़ा सोते हो जी।"—सवारों में से एक ने कहा।

'अरे भाई, भला आज भी न ये सोयेंगे ? ससुराल से नयी नयी दुलहिन जो लाये हैं।'—दादू बोला।

'ओह ओ···अब मैंने समझा। तब भला क्यों नींद खुलती।' यह आवाज मूंगा की थी। तीनों साथ ही हँस पड़े।

'रात कमबख्त भी कितनी निर्दयी होती है..... कि जब उसकी जरूरत होती है बड़ी जल्दी ही भाग जाती है।'—राजू के बोलते ही एक बार फिर जोर का ठहाका लगा।

तीनों मिलकर उसे बनाते रहे। जब मामला शान्त हुआ तब वह बोला—'नहीं भाई, यह सब कुछ बात नही थी.... .रात भर खटमल तंग करते रहे, किसी प्रकार पिछली रात तो सोया हूँ।' युवक ने आज का दिन झूठ बोलकर ही आरम्भ किया।

'चुप रहो, अब अधिक सफाई मत दो। आपकी ही खाट में खटमल थे, पर हम लोग तो बड़े आराम से सोये।'—राजू बोला।

'आप लोगों की मंगनी की खाट है न, यदि मेरे घर की खाट होती तो आप लोगों को भी नींद हराम हो जाती।' बड़ी सफाई से उसने अपने झूठ का समर्थन किया।

'अच्छा भाई, मान गया कि रात को तुम्हे खटमल परेशान कर रहे थे, बीबी नही। अब तो खुश हो।.... .चलो उठो, चले शौच को।' राजू का यह प्रस्ताव सबने एक स्वर से स्वीकार कर लिया—

फिर चारों पानी लेकर शौच के लिये चले। युवक बहुत चतुराई से उन्हे ऐसी तरफ से लिवा गया कि जहा घोड़े बँधे थे वह स्थान दिखाई ही न पड़े। बातचीत करते लोग एक मील के करीब चले आये। बातचीत का विषय भी एक ही था कि उस व्यक्ति का कैसे पता लगाया जाय जो तीन

साल का बच्चा लेकर भागा है। दादू और राजू रह रह कर भिन्न-भिन्न ढंग से युवक से इसी सम्बन्ध मे पूछते थे और वह भी उलटा सीधा जो समझ मे आता था जवाब देता था। ज्यों ज्यों वे बातचीत को गम्भीर बनाते थे, त्यों त्यो वह उस समय की परिस्थिति के सम्बन्ध में सोचता था जब उससे घोड़ों के सम्बन्ध में पूछा जायगा।

बातचीत करते करते लोग पहाड़ी की ओर बहुत दूर निकल आये। शौच के निमित्त चारो व्यक्ति अलग अलग हो गये। फिर कुछ देर के बाद वे मिले। अभी तक दादू नही आया था। वह पहाड़ी की ओर कुछ आगे मिट्टी के बड़े ढूहे की आड़ में गया था।

अचानक वह आता दिखायी दिया। उसके साथ एक घोड़ा भी था घोड़े को देखते ही लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अत्यन्त व्यग्रता से वे उनके पास आने तक का समय बिताने लगे। पास आते ही दादू ने कहा,—'देखो मूंगा यह तुम्हारा ही घोड़ा है न ?'

मूंगा ने अपना घोड़ा पहचाना। उसके गले से टूटी रस्सी लटक रही थी। सब इस अचम्मे पर सन्न रह गये। युवक कुछ कहना ही चाहता था कि दादू फिर बोला—'इसी तरह यह उस ढूहे के पीछे चर रहा था।'

'आखिर यह यहाँ आया कैसे ? किसी ने रस्सी तोड़कर भगा तो नही दिया ?' मूंगा ने कहा।

अब युवक ने अधिक चुप रहना ठीक नही समझा। उसने कहा—'इसे भगाने में किसी को क्या मिलता,. और भगाना ही होता तो रस्सी तोड़ने की क्या जरूरत थी, खोलकर भगा देता।''

यह सुनकर सब चुप रहे। सबने रस्सी हाथ में लेकर देखी। 'रस्सी कटी हुई तो नही लगती।'—मूंगा ने कहा।

'हाँ, देखने से तो यही मालूम होता है। पर इतनी मोटी रस्सी कोई तोड़ कैसे सकता है ?'—दादू बोला।

'कोई क्यों तोड़ेगा भाई। मुझे तो लगता है, घोड़ा खुद तोड़ा कर भागा है।' युवक ने कहा—

'आखिर यह कैसे हो सकता है?'—राजू ने कहा।

'मेरे विचार से कोई जंगली जानवर रात मे आ गया होगा। उसी को देखकर घोड़ा भय से तोड़ा कर भागा है। पर इतनी मोटी रस्सी तोड़ना कोई मामूली काम नही है।'—युवक ने कहा।

दादू ने झुककर घोड़े की गर्दन गौर से देखी। तोड़कर भगाने में कही रस्सी का खरोंश तो नही लगा। पर वह देखकर कुछ कहे इसके पहले ही युवक बोला—'अरे क्या देखते हो भाई, यह गर्दन नहीं है, लोहा है लोहा।' अपने घोड़े की प्रशंसा सुनकर मूंगा मन ही मन कुछ प्रसन्न हुआ।

'लेकिन जानवर को देखकर एक ही घोड़ा तो भय से भागा नहीं होगा?' यह शंका मूंगा की थी।

'हाँ यह तो आपने ठीक ही सोचा।' युवक ने बड़े नाटकीय ढंग से कहा। 'हमें अब जल्दी चलकर वहाँ देखना चाहिए कि कोई जीवित है या नहीं।'—राजू बोला। चारों अब घर की ओर लौट पड़े। युवक को छोड़-कर सब में विभिन्न जिज्ञासा थी। अनेक प्रकार की शंकाएँ मन में उठती थी। प्रबल उत्कण्ठा मे वे लपके चले आ रहे थे। किसी प्रकार की कोई विशेष बात नही हो रही थी। केवल एक बार मूंगा ने युवक से पूछा था—'घोड़े तो तुम्हारे घर के पीछे ही बंधे थे न?'

'हाँ।'

'और तुम घर मे ही सो रहे थे?'

'सो कहाँ रहा था? बताया न आपको कि खटमलों की कृपा से रात भर जागता ही रहा।'

'तो क्या तुमने रात में कभी घोड़े की हिनहिनाहट या दूसरे घोड़े की आवाज नही सुनी थी?' राजू ने वकील की तरह जिरह की।

'हाँ एक बार तो घोड़े की तेज हिनहिनाहट सुनायी पड़ी थी. .और वह इतनी तेज थी कि ऐसा लगा जैसे तीनो एक साथ हिनहिना रहें हों। पर उसके बाद कुछ और नही सुनायी पड़ा।' युवक बोला।

ऐसे ही शंका समाधान करते वे वहां आये जहॉ घोड़े बांधे गये थे। यहॉ केवल रस्सियाँ पेड़ो में बधी थी घोड़े नदारद थे। अब किसी प्रकार की शंका करने का भी कारण नही था। सबको इसका अत्यन्त दुख हुआ, पर वे करते क्या ? अब केवल पिंजड़ा पड़ा था पक्षी उड़ गया था। लाचार वहॉ से लोग दरवाजे पर आये। हाथ मुँह धोया। अब एक क्षण भी वहॉ रुकना उन्हे अच्छा नही लग रहा था। वे सोचते थे,—'कार्य भी हुआ नही और घोड़ा भी खो गया। लौटकर अब कौन सा मुँह दिखायेंगे।' लज्जित होने की आशका से ही वे लज्जित थे।

शीघ्र ही चलने की योजना बनी। तीनों घोड़ो का साज सामान एक घोड़े पर बांधा गया और निश्चय हुआ कि घर लौटना चाहिए। रास्ते मे देखते चलेंगे यदि कही घोड़ा मिल गया तो ठीक ही है। नही तो अब पैदल खोजना—वह भी अनजान स्थान में व्यर्थ है।

तीनो घोड़ा ले चलने को हुए। युवक ने नम्रता से कहा कि यदि आप थोड़ा और रुक जायें तो बाजरे की रोटियॉ बनवा दूँ। दूध से गरम-गरम दो एक खा लीजिएगा। इससे अधिक तो मै आपकी और कुछ सेवा कर नही सकता, बड़ा गरीब आदमी हूँ।

"अब अधिक कष्ट करने की जरूरत नही तुमने बहुत किया।" दादू बोला।

मूँगा समझ नही पा रहा था कि यह युवक जो कल तक इतना अशिष्ट और गॅवारु था आज इसमें इतनी शिष्टता कहाँ से आ गयी। एक रात मे इतना सभ्य कैसे हो गया ? किन्तु वह कुछ कह न सका। "अतिथि को बिना खिलाए बिदा करने में बड़ा संकोच हो रहा है।"—युवक ने पुनः

कहा। "इसमें संकोच की क्या बात है ?" दादू ने शीघ्रता की और कहा "अच्छा तुम्हारा बच्चा कहाँ है ?"

"बच्चा ?" युवक जैसे सकपकाया। फिर अपने को सँभालते हुए बोला—"अभी तो कल ननिहाल से आया है। आज मां के साथ गाव मे सबेरे ही कही गया है। बैठिये मै उसे अभी बुलवा देता हूँ ?" वह बनावटी तत्परता दिखाते हुए दरवाजे की ओर बढा।

दादू ने उसे रोकते हुए कहा—"जाने दो, बुलाने की कोई जरूरत नही मेरी ओर से यह उसे दे देना।" उसने चाँदी का एक सिक्का युवक के हाथ मे दिया। तीनो उचित अभिवादन कर चल पड़े। युवक ने संतोष की सांस ली।

३

भाण्डेर का किला एक पहाड़ी पर था। यह जंगली स्थान जारोल से १५ मील दक्षिण पश्चिम में पड़ता था। किले के चारो ओर गहरी खाई थी। खाई मे पहले पानी भरा था। अब पानी नाम मात्र को रह गया था। उसमें जंगली झाड़ियाँ उग आयी थीं। खाई को पार करना साधारणतः कठिन था। केवल दो मार्ग थे, एक किले के प्रवेश द्वार के सामने से आता था और दूसरा जंगली मार्ग जो किले के पिछले गुप्त द्वार से जंगल में चला जाता था। जादव लम्बा चक्कर काट कर किले के प्रमुख द्वार की ओर चला।

आकाश पर बिखरे ऊषा के सिन्दूर को सूर्य की तेज किरणों अब पोंछ चुकी थी। दिन चढ़ आया था। राजकुमार अब जाग गया था, किन्तु

शान्त था। लगता है मार्ग मे ही उसके दूध का प्रबन्ध हो गया था, फिर भी उसके चेहरे से थकावट स्पष्ट मालूम होती थी। वह इस अपरिचित स्थान को विस्मय भरी दृष्टि से देख रहा था। मार्ग के लोग भी आश्चर्य से राजकुमार और तारा को देखते थे, किन्तु कुछ समझ नही पाते थे। आगे-आगे जादव और पीछे तारा चुपचाप बढ़ते चले आये।

फाटक पर प्रहरी ने रोकते हुए परिचय तथा आने का कारण पूछा। जादव ने बड़े ही नम्र स्वर में कहा—'मेरा नाम जादव है। दीवानजी के दर्शन के लिये आया हूँ।'

"किन्तु इस समय दीवान जी किसी से नही मिलते। तीसरे पहर मिलने का कष्ट कीजिए।"

जादव के सामने एक विचित्र समस्या उत्पन्न हुई। चार पाँच घण्टे वह कहाँ और कैसे बिताये? उसने पुनः नम्र निवेदन किया,—"बडी कृपा होती यदि आप महाराज तक यह सन्देश पहुंचा देते कि जादव नाम का एक व्यक्ति आपसे मिलना चाहता है, फिर जैसी आज्ञा होती, वैसा करता।"

जादव की बात सुनते ही पहरेदार ने समझ लिया कि इस व्यक्ति को दीवानजी अवश्य किसी न किसी रूप में जानते होंगे। उसने एक दूसरे सिपाही को शीघ्र बुलाया और एक कागज पर लिख कर दीवानजी के पास समाचार भेजवा दिया।

तीनो व्यक्ति घोड़े से उतर कर किले के मुख्य द्वार के बाहर ही टहलने लगे। बालक थका अवश्य था पर इस समय बड़ा प्रसन्न दिखायी दे रहा था। उसकी मोहक तुतली वाणी, बाल सहज विवेक और गौरैये के समान उसके फुदकने पर जादव और तारा दोनो मुग्ध थे। बालक को यह नया स्थान अत्यन्त आश्चर्यजनक लग रहा था। उसने कई बार अपनी बुद्धि के अनुसार इसके सम्बन्ध मे पूछा भी, पर हर बार तारा उसे इधर उधर की बातों में बहला दिया करती थी।

इधर पहरेदार इन नव आगन्तुकों को गौर से देखता और अत्यन्त विस्मय से सोचता रहा। अजीब है ये। नारी देखने में तो किसी कुलीन घराने की मालूम पड़ती है। उसके वस्त्र भी अच्छे हैं, पर जिस घोड़े पर सवार थी, उसकी जीन और लगाम तो महा दरिद्र है। पर पुरुष किसी बड़े घराने का तो नहीं मालूम पड़ता। हाँ, उसका नाटा पर बलिष्ठ शरीर, पुष्ट स्कन्ध तथा लौह भुजाएँ उसके प्रौढ पौरुष का परिचायक हैं। अरे वह जिस घोड़े पर आया है उस पर तो जीन भी नही है। तो यह लोग कही पास ही से आ रहे हैं क्या ?.. कुछ समझ में नही आता।'' बालक तो इन दोनो मे अलग ही दिखायी देता है। कैसी प्रखर है उसकी बुद्धि। कैसा मोहक है उसका व्यक्तित्व ? जरूर वह किसी बड़े पिता का पुत्र है। किन्तु तीनों में कोई विशेष सम्बन्ध नही दिखायी देता, बात क्या है ? इनकी बातचीत में भी किसी प्रकार की संगति नही मालूम पड़ती। नारी पुरुष को सरदार कहती है, पर पुरुष नारी का नाम नही लेता और बड़े सम्मानित सम्बोधनों का प्रयोग करता है। बालक भी पुरुष से अधिक नही बोलता। केवल वह उस महिला से ही बात करता है—और खूब करता है। बीच-बीच में वह उसे 'तारा' कह कर सम्बोधित करता है। लगता है वह उसकी माँ नही है, यदि माँ होती तो वह उसका नाम क्यों लेता। पर मालूम पड़ती है बिलकुल माँ की ही तरह। पुरुष और नारी की बोलियों में भी बड़ा अन्तर है। क्या बात है ? ये लोग बड़े रहस्यमय मालूम पड़ते है। पहरेदार सोचता रहा। इस बीच केवल वह एक बार जादव से बोला था—'आइए भीतर, यहाँ विश्राम कीजिए तब तक दीवानजी का सन्देश आ जाता है।'

'कोई बात नही, हम तब तक बाहर ही टहल रहे है।' तीनों बाहर टहलते ही रहे।

थोड़ी देर के बाद एक सिपाही दीवानजी की लिखित आज्ञा लेकर आया और पहरेदार को देकर चुपचाप खड़ा हो गया। पहरेदार ने उसे

देखा। यह तो दीवानजी के हाथ का ही लिखा है, जरूर ये बड़े आदमी होंगे। उसने कुतूहल से सिपाही की ओर देखा। सिपाही बोला—'महाराज ने कहा है कि इन्हे बड़े सम्मान के साथ अतिथि भवन में लेजाओ और इनके घोड़ो को निजी अश्वशाला मे बाध दो।'

इतना सुनना था कि पहरेदार का मस्तिष्क चकराया। उसे कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि उसने उचित सम्मान के साथ इनका स्वागत न करके बडी गलती की। उसने बाहर देखा। वे बालक के साथ टहलते तथा खेलते कुछ दूर चले गये थे। उसने उन्हे बुलाने के लिए उस सिपाही को नही भेजा वरन् स्वयं दौड़कर उनके पास पहुँचा और अत्यन्त सम्मान के साथ झुककर नमस्कार कर बोला—'भीतर पधारिए महाशय, दीवानजी की अनुमति आगयी है।'

'अच्छी बात है।' जादव पहरेदार के व्यग्रतापूर्ण कहने के ढंग पर मुस्कराता चल पड़ा।

× × ×

अथिति भवन में पहुँच कर तारा ने संतोष की सास ली। मखमल के मोटे गद्दे पर बैठ गयी। बालक उसी गद्दे पर उछलने लगा। उछलता उछलता वह तारा के शरीर पर गिर भी पड़ता था। तारा बहुत थकी थी। उसका अंग अंग कह रहा था कि वह लेट कर एक झपकी ले ले, पर जादव के कमरे मे रहते वह विस्तर पर सो कैसे सकती है? इसी संकोच के कारण वह अंगड़ाई लेती और बैठी रही।

अन्त में जादव उसकी यह बिवशता समझ गया। वह कमरे के बाहर जाने को तैयार हुआ। और बोला—'अच्छा अब आप विश्राम कीजिए मैं स्नान करने जाता हूँ। यदि हो सकेगा तो मै दीवानजी से भी मिलता आऊँगा।'

'अच्छी बात है।' जादव कमरे के बाहर हुआ। तारा दरवाजा लगा कर विस्तर पर लेट गयी और जब तक आँखे नही लगी बालक से बातें करती रही।

''तो अब यही लहेंगे त्या ?' बालक ने तुतली बोली में पूछा।

'हाँ बेटा।'

'नही हम यहाँ नही लहेंगे।'

'अरे बेटा मै तुम्हे यहां का राजा बनाने वाली हूँ। यहीं तुम सोने का मुकुट पहनोगे।......क्या तुम यहां नही रहोगे ?'

'मै क्या यहां का राजा बनूँगा। ओ हो हो. .घोडे पर चढूंगा। सिंहासन पर बैठूंगा !'—बालक और भी मस्ती से विस्तर पर उछलने लगा, और उछलते उछलते तारा पर गिर पड़ा। तारा उसे अपनी छाती से लगा कर बोली,—'राजा बनोगे तो तुम्हे एक काम करना पडेगा।'

'त्या ?'

'करोगे न ? तीन बार कहो कि करूंगा, तब मै बताऊँ।'

'हाँ तलूँगा, तलूँगा, तलूँगा।' उसने अपना सिर फिर उसकी छाती में गड़ा लिया।

'तो आज से मुझे तारा मत कहना, माँ कहना। समझा।'

'अच्छा।' बालक कुछ सोचने लगा फिर बोला,—'तो फिर मां तो त्यां तहूंगा ?'

उसकी यह बात सुनते ही तारा का हृदय धक से करके रह गया। बालक को यह पता नही था कि संसार में अब उसकी मां नहीं है। तारा को अनुभव हुआ कि यह कितना कठिन है कि एक बच्चा कभी अपनी माँ को याद न करें। वह स्वय को भूल सकता है पर अपनी माँ को नही। उसका हृदय पसीजने लगा, पर वह अपने पर बहुत कुछ नियंत्रण करके बोली—'कोई बात नही। जब तुम्हारी मां दिखायी पड़े तो उन्हे भी मां कहना।'

'तो मुझे दो दो मा हो जायंगी ।' वह खुश हो गया।

'पर भूलना नही, याद रखना। यदि तुम एक बार भी मेरा नाम ले लोगे तो राजा नही बन सकोगे।...समझा मुन्ना राजा।' इतना कहकर उसने उसका गाल चूम लिया और बोली—

'आज से मै भी तुम्हारा नाम लेकर ही पुकारूंगी। कितना सुन्दर है तुम्हारा नाम. .।'

'तौन नाम ?'

'भोज !...काल भोज. .! क्यो अच्छा है न।'

अत्यन्त प्रसन्नता से मुस्काराते हुए उसने अपना सिर हिला दिया। तारा ने उसे अपनी गोद में दबाकर जोर से चूम लिया।

इसी प्रकार बात करते करते कुँवरजी सो गये। तारा को भी झपकी आने लगी। रात भर वह सोयी नही थी। आदमी सन्तोष कर सकता है पर नीद को संतोष कहा ?

ज्योही उसकी आँखें लग ही रही थी जादव लौटकर आया। उसकी आहट लगते ही तारा की आँखें खुल गयी। वह हड़बड़ाकर उठ बैठी। जादव भी सामने के काठ के सिहासन जैसी कुर्सी पर बैठ गया। उसकी मुद्रा प्रसन्न थी। बैठते ही उसने पूछा—'नीद आ रही है क्या ?'

'हॉ झपकी आ रही है। कुछ सिर भारी है।' उसने दाहिनी आँख मलते हुए कहा।

'तब विश्राम कीजिए। फिर बातें हो जायँगी।' जादव उठकर—चलने को हुआ।

तारा की आँखें सोने के लिए सत्याग्रह कर रही थीं, फिर भी वह उन्हें मलती और जमुहाई लेती बोली—'अच्छी बात है।...पर क्या हुआ ? आपने यह तो बताया ही नहीं।'

'सब ठीक हो जायगा पर अभी दीवानजी से बातें नहीं हो सकी हैं। कोई घबराने की जरूरत नही है। वह बोला और मुस्कराता बाहर चला गया।

इधर-तारा निद्रा देवी की गोद मे चली और उधर जादव दीवानजी के यहाँ पहुँचा।

× × ×

यह अंतःपुर का विशाल सुसज्जित कक्ष है। यहाँ कोई बाहरी आदमी आ नही सकता, पर दीवानजी ने यही जादव को बुला लिया। कमरे में पहुँचते ही एक बार जादव ने चारो ओर नजर घुमायी। वाह, क्या सजावट है—उसका मन बोल उठा! कमरे की भीतरी दीवार पर रग विरंगे भांति भाति के तरासे शीशे लगे थे। धरन मे ऐसे ही तरासे शीशों से फूल पत्ती की डिजाइन बनी थी। लगता था आकाश के तारो से पूरी दीवार सजायी गयी है। संगमरमर की फर्श पर काश्मीरी कालीन बिछी थी। पूर्व की ओर चदन की बड़ी पलंग थी जिसपर मोटे रेशमी गद्दे पर कई रेशमी तकियों के सहारे दीवानजो लेटे थे। पलंग पर बहुत हलके नीले रंग की रेशमी मसहरी थी जो इस समय ऊपर उठा दी गयी थी, उसका एक छोर लटक रहा था। पास खड़ी लौड़ी के पंखा झलने से वह छोर विचित्र ढंग से हिल रहा था। कभी दूर जाता और कभी लौड़ी के पास आकर उसकी श्वेत, श्याम तथा रतनार आँखों को अपनी नीली आभा से छिपा लेता और वह बड़ी आसानी से अपने सिर का धक्का देकर उसे हटा देती। ऐसा लगता मानों यमुना की कोई नीली लहर दो मछलियों पर आती और फिर हट जाती हो।

पलंग के पीछे की दीवार के दोनो ओर हिरणियो के सीगदार शिर टंगे थे। निर्जीव मुण्ड की सजीव आँखें दीवार मे लगे उस तरासे शीशों से कम चमक नही रही थी। खिड़कियो पर भी हल्के नीले रंग का परदा

था। जब हवा तेज आती परदे हट जाते और रोशनी से दीवार में लगे शीशे झिलमिला उठते।

जादव के कमरे में पहुंचते ही लौंडी ने अपनी ओर की मसहरी का परदा गिरा दिया और परदे के पीछे से पखा झलने लगी। दीवानजी ने जादव को देखते ही कहा—'आओ भाई आओ।' जादव आगे बढ़ा और पलंग के पास ही गद्दीदार चौकी पर बैठ गया। बातचीत आरम्भ हुई।

'तो, अभी तो आप रहिएगा न।' दीवानजी ने पूछा।

'जी नहीं आज ही चला जाऊंगा। केवल इसी काम से आया था।'

'हाँ, यदि काम न होता तो आप भला क्यों आते? बड़े गुमान के आदमी जो ठहरे। कितनी बार मैंने बुलाया था पर आप आये नहीं। अपना काम पड़ा तो कैसे दौड़े हुए चले आये।' दीवानजी ने व्यंग्य करते हुए कहा।

जादव झेंप गया। बोला—'क्या करूं दीवानजी, समय मिलता ही नहीं। आज भी यदि एक निरपराध नारी तथा बालक की रक्षा का भार न होता तो कदाचित् आपके श्री चरणों का दर्शन न कर सकता।'

जादव की बात सुनते ही दीवानजी चुप हो गये और कुछ सोचते हुए अत्यन्त गम्भीर हो बोले—'नारी. . ! तुम कहते हो इसलिए मैं उसे रख लूँगा, नहीं तो मैं व्यर्थ में आफत मोल लेना नहीं चाहता। मान लो, यदि ईडर वाले को पता चल गया कि बच्चा और वह औरत मेरे यहाँ है तब व्यर्थ ही उनसे मेरा भी सम्बन्ध बिगड़ेगा। समझदारी तो इसी में थी कि मैं उसे रखने से साफ इन्कार कर देता।'

'यह तो ठीक है महाराज, लेकिन विपत्ति की सतायी नारी है, उसकी रक्षा करना तो हमारा कर्त्तव्य है।' जादव ने कहा।

'लेकिन जादव, विपत्ति की सतायी और स्वयं विपत्ति बन कर आयी नारी को तुम्हारी तो आँखें पहिचान नहीं सकती।' इतना कहकर दीवानजी जोर से हँसे।

'यह ठीक है महाराज कि मै अनुभव, ज्ञान और अवस्था, सबमें आपसे छोटा हूं। जिसे आप समझ सकते हैं, उसे मै नही समझ सकता। जितनी शीघ्रता से किसी चीज को आपकी आँखें पहचान सकती है उतनी शीघ्रता से मेरी नही। पर इतना बड़े विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि वह निरपराध और सतायी हुई है उसके चरित्र मे किसी प्रकार का छल नही है।'

इतना सुनकर दीवानजी हँसे और बड़े विश्वास के साथ बोले,—'अरे जादव, स्त्री के चरित्र और पुरुष के भाग्य को देवता भी जान नही सकते तब भला हमारी और तुम्हारी क्या हस्ती है।'

'बात तो ठीक है महाराज, पर एक बात हर जगह लागू नही होती।'

'पर शास्त्र में लिखा है जादव—'

नदीनां शस्त्रपाणीनां नखिनां शृङ्गिणा तथा।
विश्वासो नैव कर्त्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च।

नदियों का, जिनके हाथ मे हथियार हो उनका, नखवालों का, सींग वालो का, स्त्रियों का और राजकुल के लोगो का विश्वास नही करना चाहिए।'

जादव मुस्कराया और कुछ हँसते हुए बोला,—'महाराज, विश्वास न करने वालो की सूची में स्त्रियों के साथ ही साथ राजकुल का भी नाम आया है। इसलिए आप. भी...।' जादव ने दीवानजी पर सीधा व्यंग्य किया।

'हाँ सो तो ठीक है ही। चाहो तो उसी में गिन लो। वह जो बालक है उसे तो तुम राजकुल का ही बता रहे हो न।' दीवानजी ने नहले पर दहला मारा।

जादव ने मात खायी और मुस्कराते हुए बोला,—'महाराज बातचीत में आपसे कोई पार नही पा सकता।'

अपनी बुद्धि की प्रशंसा सुनकर दीवानजी की तावदार राजपूती मूंछें दाहिने हाथ की अँगुलियों का सम्पर्क पाकर कुछ और खड़ी हो गयीं। उन्होंने सिर सहलाते हुए कहा,—'अच्छी बात है। तुम कहते हो तो वह मेरे यहाँ रहेगी ही। लेकिन उसे अच्छी तरह समझा देना कि कुछ ऐसा न करे कि उसके रहस्य का उद्घाटन हो जाय।'

'अच्छी बात है। मै उसे अच्छी तरह समझा दूँगा।'

इसके बाद इस प्रकार की बातचीत का सिलसिला टूट गया। फिर पंखा झलने वाली लौंड़ी की ओर संकेत कर दीवानजी ने कहा,—'पाशा लेती आ।'

और फिर जादव के साथ वे पासा खेलने लगे।

× × ×

दिन डूबने में अभी दो तीन घन्टे बाकी थे जब जादव अतिथि भवन में पहुँचा। सूर्य पश्चिम मे झुक चुका था। हवा काफी गर्म और तेज थी। अतिथि भवन के सभी बाहरी दरवाजे और खिड़कियों पर लगी खस की टट्टियाँ अभी हटायी नही गयी थीं। कुछ-कुछ देर पर उन पर पानी का छिड़काव भी हो जाता था। जोर से हवा के चलने की आवाज के बीच-बीच में दूर पहाड़ी के नीचे अपनी बोली में गाते गड़ेरियो का अलाप सुनायी पड़ रहा था, किन्तु वह भी कुहरे के पीछे दिखायी पड़नेवाले जहाज की तरह अत्यन्त अस्पष्ट एवं हल्का।

जादव तारा के कमरे के बन्द द्वार पर पहुँच कर अचानक रुक गया। दरवाजा पूरो तरह बन्द नही था, वह हल्के धक्के मात्र से खुल सकता था। पर भीतर से किसी के बातें करने की आवाज आ रही थी। जादव को विस्मय हुआ,—आखिर तारा के कमरे में दूसरा कौन है? वह दरवाजे के निकट खड़ा होकर सुनने लगा। एक औरत से तारा के बातें करने की आवाज अत्यन्त स्पष्ट सुनायी पड़ रही थी।

'···लेकिन बहिन, आप तो महाराज की अथिति है। आपकी सेवा करना हमारा कर्त्तव्य है।' इतना कहने के बाद ऐसा लगा जैसे उसने तारा के हाथ से कुछ लिया। जादव ने जरा झुककर दरवाजे के दराज से देखा, लौंडी ने तारा के हाथ से पंखा छीन लिया और फिर हवा करने लगी।

'अरे बहिन यह क्या कहती हो?' तारा बोली। 'मै दीवानजी की अतिथि होकर थोड़े ही यहाँ आयी हूँ। यहाँ तो उनकी सेवा करने आयी हूँ। यह हमारा भाग्य होगा कि महाराज मुझे ऐसा अवसर दें। यहाँ तुम लोगों के साथ रहकर हँस खेल कर जीवन के चार दिन बिता लूँ। बस इतना ही चाहती हूँ।'

तारा के वाणी की नाटकीयता उस लौंडी पर यथार्थ से भी अधिक प्रभाव कर गयी। वह जरा गम्भीर भाव से बोली—'अच्छा...अब समझी. .।' इतना कहकर उसने बगल में सो रहे राजकुमार की ओर संकेत करके पूछा,—'यह आपका कौन है?'

तारा की भाव भरी निगाह सोते हुए बालक की आकृति पर पड़ी। उसकी भोली आकृति पर अबोध शिशुता को स्निग्ध चांदनी जैसी पारदर्शक चादर पड़ी थी। वह थोड़े समय तक कुछ सोचने के बाद बहुत धीरे से बोली—'यह मेरा पुत्र है।'

इतना कहते कहते आँखें छलछला आयी। लौंडी बड़े आश्चर्य और कुतूहल से तारा की आकृति का यह भाव देखती रही। इसके पहले कि वह कुछ पूछने का प्रयत्न करे तारा ने स्वयं बात बनाते हुए कहा—'गहरी बीमारी से मेरा लाल बचा है बहन, शायद इसी से जब मै इसे गौर से देखती हूँ, मेरी आँखें भर आती हैं। ..कितना प्यारा मेरा लाल है बहन।' इतना कहकर उसने बालक का मुख चूम लिया। नीद में बालक थोड़ा कनमनाया।

'क्यों नही, बिल्कुल राजकुमार जैसा है बच्चा।' लौंडी बोली। तारा के कलेजे पर यह दूसरी चोट थी। उसके भावुक मन ने सोचा—यह

राजकुमार जैसा होकर भी अब राजकुमार नहीं है। उसकी आँखो के आँसू आखो के कोर मे ही झाँकते रह गये। कुछ रुककर लौंडी ने पुनः पूछा—'आपको और कितने बच्चे हैं ?'

'बस यही एक।'

'तभी तुम्हारा दिल मोम जैसा है। जरा सी जहा आच लगी कि पानी की तरह पिघला।'

जादव ने अच्छी तरह सुन लिया कि कोई विशेष बात नहीं है, तब उसने बाहर से ही बनावटी ढंग से हल्की आवाज में खाँसा जिससे भीतर के लोगो को किसी आदमी के आने की आहट लग जाय। फिर वह दन से दरवाजा खोलकर भीतर घुसा। लौडी हड़बड़ाकर पलग पर से उठ खडी हुई और अपना घाँघरा आगे से जरा सा उठाती हुई बगल से निकल गयी।

तब जादव सामने की काठ के सिंहासन जैसी कुर्सी पर जाकर बैठ गया और अगडाई लेते हुए बोला—'कहिए नीद पूरी हुई ? जी कैसा है ?'

'अब तो तबीयत हल्की हो गयी। एक नीद खूब सोयी। अगर उसकी आहट न लगी होती तो अब तक सोती ही रहती।'

'किसकी आहट ?'

'उसी लौडी की, जो अभी यहां से उठकर गयी है। बेचारी ने समझा कि मैं दीवानजी की अतिथि हूँ। इसीसे सेवा करने आ पहुची। पर मैंने अपने को अतिथि नही बताया। मैंने कहा कि मै भी तुम्हारी तरह दीवानजी की सेवा करने ही आयी हूँ। वह तो...'

जादव बीच मे ही बात काटते हुए बोला—'हाँ मैंने सारी बातें दरवाजे के बाहर खडे होकर सुन ली है।'

बस इतना सुनना था कि तारा की आकृति का भाव एक दम बदल गया। जादव का छिपकर बात सुनना उसे अच्छा नहीं लगा। उसका

दरबारी आत्म सम्मान जाग उठा। उसने जरा कुछ तीखे स्वर मे कहा,—'तो क्या आपका मुझपर अविश्वास था जो आप छिपकर मेरी बात सुन रहे थे ?'

'नही, नही। ऐसी बात नही !' जादव अत्यन्त विनम्र हो बोला,—'मै तो केवल यह देख रहा था कि आप कितनी सरलता से अपने को छिपाती है।'

'लेकिन यह गन्दी बात है।' तारा इतना कहना चाहती थी पर पता नही क्या समझ कर चुप रह गयी।

फिर जादव ने बातचीत का सिलसिला दूसरी ओर मोडते हुए कहा—'दीवानजी से बातें हुई थी। वह किसी प्रकार राजी हो गये है ?'

'उन्होंने हम लोगो के सम्बन्ध मे पूछा तो होगा ही।' तारा बोली—

'हाँ पूछा था। हमने सारी बाते सही सही बता दी। सोचा जब यहां रहना ही है तब छिपाने से फायदा क्या ?'

'अच्छा ही किया जो बता दिया।. सुनकर वे कुछ बोले ?'

जादव कुछ समय तक चुप रहा, पुनः कुछ सोचते हुए उसने गम्भीर स्वर मे कहा—'बालक से तो उनकी भी सहानुभूति है। पर वे सोचते है कि यदि रहस्य का उद्घाटन हो गया और ईडर वालो को मालूम हो गया कि बालक भाडेर में सुरक्षित है तब क्या होगा ? व्यर्थ में शत्रुता मोल लेनी पडेगी.... और वह ऐसा नही चाहते ?' इतना कहकर जादव अत्यन्त गम्भीर हो कुछ सोचने लगा। तारा भी गम्भीर मुद्रा में सोचती हुई जादव का चेहरा ही देखती रही।

'मैं ने तो कह दिया है कि रहस्य का उद्घाटन भरसक नही होगा . और जब कभी भी भेद खुलने की शंका भी लगेगी वह औरत बालक को लेकर चली जायगी। ईडर से आपका जो सम्बन्ध है उसे हम जरा भी बिगडने नही देंगे।' जादव ने कहा।

'तब उन्होंने क्या कहा ?'

'कहते क्या, चुप हो गये। बोले—'देखिए आप बीच में पड़े हैं, मैं कुछ कह नही सकता। बच्चे और उसके साथ आयी औरत को चाहिए कि वह छिपकर ही रहे। असलियत का पता न चले। इसी में हमारी और आपकी, दोनो की भलाई है।'

'सो तो है ही। मै ऐसी ही कोशिश करूँगी कि कोई हमें जान न पाये।' तारा ने गम्भीरता से कहा। उसकी आवाज बड़ी धीमी थी। यों त बातें ही धीरे-धीरे हो रही थी जिससे आस पास का कोई सुन न लें, फिर भी जादव बीच बीच में जोर से बोल उठता था। इसका बहुत कुछ कारण उसका जन्म जात स्वभाव था। तारा ने कई बार उसे संकेत से मना भी किया, पर आवेश में वह जोर से बोल पड़ता था। जादव एक बार उठकर झटके से कमरे के बाहर भी आया। तारा सोचती रह गयी कि आखिर बात क्या है ? उसने चारो ओर देखा कोई नही था—। केवल पास के विशाल खम्भे के ऊपर कार्निस मे कुछ गौरैये के बच्चे अपने घोसले मे बैठकर 'चूं चूं चूं' कर रहे थे। वह लौटकर आया और पुनः बातें शुरु हुईं।

'. लेकिन छिपकर रहना भी बड़ा कठिन है। एक प्राण की बात होती तो कुछ सम्भव भी था। आखिर आप हैं, छोटा बालक है! भला कब तक भेद न खुलेगा ?' जादव ने मन की शंका व्यक्त की।

'हाँ कठिन तो है पर जब पाण्डवो ने—जिन्हे सभी जानते थे—छिपकर अपने दिन बिता लिये तब मेरे भी दिन किसी न किसी प्रकार कट हो जायेंगे।. और अधिक दिन की तो बात है नहीं। हो सकता है, जल्दी ही परिस्थिति हमारे अनुकूल हो जाये।' इसके बाद वह थोड़ा मुस्करायी और जादव की आकृति पर निरन्तर बदलने वाला भाव देखती रही। वह पुनः बोली—'आप यदि हो सके तो एक काम और कर दें।'

'क्या ?' कुछ विस्मय से जादव ने पूछा।

'आप मेरे विषय में यह प्रचारित कर ८ कि यह अनाथ ब्राह्मणी है । अपने पुत्र के साथ दीवानजी की शरण में आयी है । यदि दीवानजी की कृपा हो गयी तो आप लोगो की सेवा कर दिन काट देगी ।. .और दीवान जी से भी कह दीजिए कि महल की दासियो को धार्मिक शिक्षा देने का कार्य मुझे दे दें तथा मेरे साथ भी वैसा ही व्यवहार करें जैसा अन्य सेवको के साथ करते हैं ।'

तारा की बात सुनते ही जादव जोर से हँसा और कुछ सोच-सोचकर वह कुछ देर तक हँसता रहा । उसे तारा के धार्मिक शिक्षा देने के कार्य के चुनाव पर हंसी आ रही थी । वह तो उसके बारे में अब तक केवल इतना ही जानता था कि यह ईडर की स्वामिभक्त दासी है । इसको भला इतना कहा ज्ञान जो दासियो को धार्मिक शिक्षा दे सके। वह कुछ बोला तो नही, पर तारा समझ गयी कि बात क्या है। उसने मुस्कराते हुए कहा,—'मैं समझ रही हूँ कि आपको इतनी हंसी क्यो आ रही है ।'

'नही नही कोई बात नही ।' वह मुस्कराता, हँसता और कहता रहा ।

'कोई बात क्यों नही, मै समझ रही हूँ कि आप मेरी बात को मजाक समझते हैं । पर आप विश्वास कीजिए मैंने जो कार्य अपने लिए चुना है वह सर्वथा मेरे योग्य है । ..कुँवरजी भले ही ब्राह्मण के पुत्र न हो पर मै ब्राह्मण की पुत्री हूं । आपको शायद मालूम न हो मेरे पूर्वज बड़नगर के नागर ब्राह्मण थे, विद्या और ज्ञान के धनी थे। मुझे धार्मिक शिक्षा देने का अधिकार माता के दूध से मिला है ।' उसने अत्यन्त गौरव, स्वाभिमान और आत्मसम्मान के साथ कहा ।

अब वह आश्चर्य से अवाक् रह गया । उसे अब यह महिला सृष्टि से भी अधिक आश्चर्यजनक एवं रहस्यमय मालूम पड़ी । उसने विस्मित स्वर मे पूछा,—'क्यो ? आपने तो मार्ग में बताया था कि मै गहलोत वंश की रक्षा करने वाली कमला के ही वंश की हूँ ।. .कमला तो भील थी ।'

तारा मुस्करायी और बोली—'सरदार, नदियों और महापुरुषों के मूल का पता लगा लेना आसान नहीं,.. और कौन कहता है कि कमला भील थी ?'

जादव चुप हो गया। उसे अब पता चला कि सचमुच वह तारा से परिचित होकर भी अब तक अपरिचित रहा है। उसने कुछ और जानने की इच्छा से पूछा,—"क्या अब भी आपके परिवार के लोग बडनगर में है ?"

"मेरा सगा तो अब कोई नहीं रहा, फिर भी मेरे कई रिश्तेदार वहाँ हैं, जो मुझे न जानते होंगे, किन्तु मैं उन्हें जानती हूं। उनमें से कपिल ज्योतिन्द्र आदि अपनी विद्वता के कारण अधिक प्रसिद्ध भी हैं। कदाचित इनके नाम आपने भी सुने हों।"

और का तो नहीं पर कपिल का नाम जादव जानता था। उसने स्वीकार किया। अब तारा के प्रति उसके मनमें पहले से अधिक श्रद्धा थी। वह अत्यन्त विनम्र स्वर में बोला,—"मुझे क्षमा कीजिये, मैं आपके विषय में बिल्कुल नहीं जानता था। दीवानजी से आपकी [illegible] अवश्य कहूँगा। आप जैसे चाहें वैसे यहाँ रह सकती हैं।"

"रहना क्या है ? जैसे भगवान रखेगा वैसे रहूँगी।" उसने जमुहाई लेते हुए कहा।

'जी-हाँ, आपके कहने के पहले ही मैंने इसकी तैयारी कर ली है।' वह जादव की बात समाप्त होने के पहले ही बोली।

'.... . .. .. .'

'आज से कुँवरजी मुझे माँ ही कहकर पुकारेंगे और मैं भी उसे बेटा या भोज के नाम से सम्बोधित करूँगी।'

'भोज...... ?'

'जी हाँ, ब्राह्मणों ने ग्रह नक्षत्रों की गणना कर इसका नाम कालभोज ही रखा था, पर इसे कोई जानता नहीं है। बड़े बालक का राशि नाम लेना अशुभ माना जाता है। इसलिए सदा इसे कुँवरजी के ही नाम से सम्बोधित किया गया। न महाराजा कभी नाम लेते थे और न महारानी।'

'आखिर उस ज्योतिषी को तो नाम मालूम ही होगा जिसने इसके राशि की गणना की थी.. आप चाहे माने या न मानें, पर मैं स्पष्ट कह देता हूँ कि यदि एक व्यक्ति को जरा भी इसका पता चला तो बहुत बड़ी आफत आ सकती है।' जादव ने सचेत करते हुए कहा।

'पर अब पुराने राज ज्योतिषी पं० भरद्वाजजी रहे कहाँ? वह तो आज से दो वर्ष पहले ही स्वर्ग सिधार चुके है।'

'अब आप ही समझिए। सब कुछ आपको ही झेलना है।' इतना कह कर वह उठ खड़ा हुआ और अपनी ढीली पगड़ी आधी खोल कर कसते हुए बोला,—'ठीक है अब आप आराम से लेटकर अपनी थकावट मिटाइये। मैं दीवानजी के पास जा रहा हूँ। आपने जो कुछ कहा है, उनसे कह दूँगा। है वे बड़े भले आदमी। मेरी बात टालना तो नहीं चाहिए, आगे भगवान जाने।' वह चलने को उद्यत हुआ।

'तो आप अब फिर मिलेंगे न?'

'क्यों अब आपको मेरी क्या आवश्यकता? सोचता हूँ, मिलकर लौट जाऊँ। शाम तक घर पहुंचना बड़ा जरूरी है।'

'तब मालूम कैसे होगा कि उन्होंने क्या कहा?' तारा गम्भीरता पूर्वक सोचते हुए बोली,—'अच्छा होता मैं उनकी राय जान जाती। जैसे कहते वैसे ही रहती।'

जादव तारा की बात सुनकर मुस्कराया। उसकी मुस्कराहट में अहं और विश्वास की मात्रा और किसी मनोभाव से अधिक थी। उसने कहा,— 'आप इतना सोचती क्यों है?...दीवानजी की ओर से निश्चिंत रहिए।

मेरा ऐसा उपकार उन पर है कि मेरा कहा वह टाल दें, ऐसा मैं नहीं समझता।'

तारा के मन की सुषुप्त जिज्ञासा अब प्रबल रूप मे जागी। अब तक वह मन-ही-मन सोचती रही कि जादव दीवानजी पर इतना अपना अधिकार क्यों व्यक्त करता है ? कहाँ यह साधारण भील सरदार और कहाँ वह माडेर के दीवान ! आखिर बात क्या है ? पर जब उनसे जादव के मुँह से 'उपकार' की बात सुनी तब वह अपने को रोक न सकी और बड़ी शिष्टता से बोली—'दीवानजी से आपका परिचय पुराना है क्या ?'

'पुराना तो नहीं है। फिर भी चार साल हो गये। ..वह भी एक विचित्र कहानी है।' इतना कहकर वह मुस्कराता हुआ कमरे में टहलने लगा और एकबार तारा की चारपाई के पास आकर पुनः काठ के सिंहासन जैसी कुर्सी पर जाकर बैठ गया। उसे देखने से ऐसा लग रहा था मानों वह कोई सुखद बात सोच रहा हो और यदि तारा चाहे तो वह उसे बता भी सकता है।

'क्या वह विचित्र कहानी मैं भी सुन सकती हूँ ?'

'अवश्य,...बात यह हुई कि एक बार दीवानजी शिकार खेलने अरावली की पहाड़ियों में दूर निकल गये थे। दिन भर कठिन परिश्रम के बाद भी उन्हें कोई शिकार दिखायी नही पड़ा। सन्ध्या हो गयी थी। पर अभी सूर्य नही डूबा था। वृक्षों की चोटियों पर पीली-पीली धूप चमक रही थी। दीवानजी और उनके साथियों ने सोचा कि कहीं निकट के गाँव में चलकर रात बिता लेनी चाहिए। कल फिर एक बार शिकार के लिए कोशिश की जायगी।' जादव इतना कह ही रहा था कि लड़ते-लड़ते एक गौरैया पक्षी उसके सिर पर गिर पड़ा। जादव का अचानक ध्यान बदला और हाथ पगड़ी पर गया। फिर वह चिंतित मुद्रा में बोला,—'लगता है कुछ अशुभ होनेवाला है। पक्षी पगड़ी पर ठोर मार कर उड़ गया।'

'पर आपने देखा कि गौरैया ने मारा है या गौरा ने ?'

'नही, इसका तो ध्यान नही दिया।...क्यो, क्या इसका भी कुछ प्रभाव होता है ?'

'हाँ क्यो नही। यदि गौरा ने मारा होगा तो आपका कही-न-कही अपमान होगा ?.... और यदि गौरैया ने मारा होगा तब आप राजा होगे।...अरे जाने दीजिए इन सारे ढखोसले को। जितना सन्देह कीजिएगा उतना ही यह सब होता है।' इतना कह कर तारा कुछ रुकी, फिर पहले की बात से सिलसिला मिलाते हुए बोली,—'हाँ तो उसके आगे क्या हुआ ? दीवानजी की तो बात ही छूट गयी।'

'हाँ तो वे लोग निराश होकर जगल से लौट रहे थे। आपस में बातें करते बडी मस्ती से लोग चले आ रहे थे। अगल-बगल की सुधि तो थी नही। इतने में क्या हुआ कि एक झाड़ी से निकल कर एक शेर पीछे से उन पर झपटा। यह तो कहिए कि कुछ भगवान की ऐसी मर्जी थी या संयोग ही था जो उसी समय मै भी उधर निकल आया। देखते ही मैंने शेर पर अचूक बाण मारा। वह गरजता हुआ जंगल में भाग गया।'

'तब तो आपने एक प्रकार से उनके प्राणों की रक्षा ही की।'

आत्मप्रशंसा सुनकर जादव की छाती फूल गयी, पर बड़े भाव से उसने दोनों हाथ ऊपर उठाते हुए कहा,—'वह सर्वशक्तिमान परमात्मा ही सबके प्राणो की रक्षा करता है। मेरी भला क्या हस्ती जो किसी के प्राण बचा सकूँ।—हाँ एक प्रकार से यश मिलना था, मिल गया।'

'तब तो दीवानजी ने आपको खूब पुरस्कार दिया होगा ?'

'तब से फिर मै उनसे मिला ही नही, पुरस्कार की क्या बात। कई बार उन्होंने मुझे बुलाया, पर मै कभी यहाँ नही आया केवल आपके ही साथ आया हूँ।' आत्मसम्मान में भीगी मुस्कराहट उसके अधरो मे दौड़ गयी। कुछ झुक कर वह पुनः बड़े गर्व के साथ बोला,—'जादव भला

पुरस्कार की परवाह करता है ?' इसके बाद उसने माँ। हाथ से नेत्र पोंछे। वह बरछी का तरह खड़ी हो गयी।

'तभी हमें यहाँ पर शरण मिल सकी और विश्वास है कि मेरे दिन भी यहाँ कट जायेंगे।' तारा एहसान भरे स्वर में बोली।

'सोचता तो मैं भी ऐसा ही हूँ।' फिर वह उठ खड़ा हुआ। 'अच्छा अब चलूँ समय अधिक हो गया!'

जादव नमस्कार कर चलने को हुआ। तारा दरवाजे तक उसे पहुँचाने आयी और बड़ी नम्रता से नमस्कार कर बोली,—'मेरे लिए आपको इतना कष्ट उठाना पड़ा। मैं किन शब्दों में आभार व्यक्त करूँ।'

जादव बनावटी हँसी से हँसा। 'भला इसमें आभार की क्या बात थी। अरे यह मेरा कर्तव्य था, मैंने किया।'

'मैं भला यह कैसे कहूँ।.... भेंट तो आपसे यदाकदा होती रहेगी न ?'

'क्यों ? अब मेरी आवश्यकता तो कदाचित् आपको पड़गी ही नहीं।'

"नहीं तो,- ऐसा कैसे हो सकता है ? आपका समय-समय पर आना अत्यन्त आवश्यक है। यहाँ तो मैं बाहरी समाचारों से सदा अनभिज्ञ रहूँगी। फिर कैसा पड, कैसा न पड़े ? जीवन के आकाश में छाये बादल कौन सा रंग बदलें। मै तो असहाय हूँ, कर क्या सकती हूँ। यहाँ तो बस आपका ही एक सहारा है।"

जादव ने कुछ गर्व का अनुभव किया। अत्यन्त नम्र हो मुस्कराते हुए बोला,—"अच्छी बात है यदि आपकी आज्ञा है, तो दूसरे-तीसरे अवश्य आया करूँगा।"

इतना कह कर जादव चला गया। तारा बिस्तर पर आकर पुनः लेट गयी और बहुत देर तक वह धरन की ओर एक टक देखती तथा पता

नहीं क्या-क्या सोचती रही। बगल मे पडा उसका बालक भोज खर्राटे भर रहा था।

× × ×

दो महीना बीत गया। प्रत्येक सबेरा तारा के जीवन में एक समस्या बनकर आता और सन्ध्या कहानी सी समाप्त हो जाती। परिस्थिति के झूले पर जिन्दगी झूलती रही। नियति कभी पेंग मार कर उसे ऊपर ले जाती और कभी नीचे। यही क्रम चलता रहा। दिन मे तो वह महल की महिलाओ और बच्चों को रामायण, महाभारत, उपनिषद आदि की कहानियाँ सुनाती हुई काट देती और रात वह स्वप्नो के उस विचित्र संसार में बिताती जो उसके लिए कभी मोहक तथा कभी भयानक होता। यह भयानकता कभी-कभी अपनी सीमा का उल्लंघन भी कर बैठती और तब परिणाम अत्यन्त गम्भीर हो जाता। एक रात की बात है। तारा अपने कमरे मे सोती सोती अचानक चीख उठी—।...और वह चीख भी विलक्षण थी, लगातार चीखती रही। रात आधी से भी अधिक जा चुकी थी। अगल-बगल के कमरे मे रहने वाली सेविकाएँ जाग उठीं। 'क्या बात है ? क्या हो गया मेरे ,बोलती और सोचती सब तारा के कमरे में आयीं और उसे देखकर अवाक रह गयी। उन्होंने देखा वह चारपायी पर बैठी है फिर भी चीख रही है। बगल मे उसका बच्चा भोज मस्त सो रहा है।

'अरे क्या बात है बाई, क्या हो गया ।' ऐसा कहती हुई कई ने एक साथ ही उसके कन्धे को झकझोरा। जब वह प्रकृतस्थ हुई, बोली—'कोई बात नहीं, यों ही सपना देख रही थी।' फिर उसने अपने बच्चे को सिर से लेकर पैर तक छुआ गोया वह देख रही हो कि सकुशल तो है। तब वह अपने कमरे मे आयी अन्य सेविकाओं को एक टक देखती रही। इस समय तारा के नेत्र विस्फारित थे। उसकी बरौनिया खड़ी थीं। बाल कुछ बिचित्र ढंग से खुले और उलझे थे। पश्चिम की खिड़की से पीले पड़ते चन्द्र की चाँदनी उसके बिस्तर पर आ रही थी।

'अब सो जाओ, बाई। तुम्हारी तबीयत इस समय कुछ ठीक नही मालूम होती।' एक महिला बोली।

'हां सोती हूँ।. .' इतना कहकर वह चुपचाप बिस्तर पर लेट गयी। सब सेविकाएँ बड़ी शान्ति से कमरे के बाहर निकल गयी।

ऐसी घटना केवल उसी रात्रि को ही नही घटी। कई बार ऐसा ही हुआ। पर इसकी कोई विशेष चर्चा नही हुई। हॉ कुछ विचारशील लोग इतना अवश्य सोचते थे कि जो महिला दिन में ऐसी उपदेशात्मक पवित्र कथा कहती है, ऐसी उच्च धार्मिक शिक्षा देती है, वह रात में इतने भयानक स्वप्न कैसे देखती है।

कुछ भी हो अब भांडेर में तारा के सम्बन्ध में लोग इतना ही जानते थे कि यह ब्राह्मणी है, योग्य तथा सच्चरित्र है। कुँवरजी भी अब केवल भोज था, मामूली काल भोज था—दासियो तथा सेविकाओं के बच्चो के बीच खेलने वाला। तारा उसे कभी भी आँख से ओझल नही करती थी। सदा अपने सामने ही रखती थी। एक क्षण के लिए भी यदि वह कहीं चला जाता, वह घबरा जाती थी। वह उतावली हो चारो ओर पता लगाने के लिए दौड पडती थी। उसको ऐसा घबाना कुछ लोगों को बहुत बुरा भी लगता था। एक सुहावनी सन्ध्या को उपवन में, जब दीवानजी टहल कर लौट आये थे और अन्धेरा बढ़ गया था, भोज को खोजते-खोजते तारा वहाँ पहुँच गयी। कुछ लोग वहां बैठकर बातचीत कर रहे थे। उन्होंने तारा को घबराई हुई देखकर पूछा—'क्या बात है, बाईजी।'

उसने घबराहट में उत्तर तो नही दिया पर वैसी ही आवाज में एक दूसरा ही प्रश्न पूछा—'आपने इधर कही हमारे भोज को देखा है?'

'नही तो. .क्यो, क्या हुआ?'

'करीब दो घड़ी से वह दिखायी नहीं पड़ रहा है...पता नहीं कहां चला गया।' 'इतना कहकर वह कुंज की ओर से मुड़कर पुस्करणी की

ओर बढी। वे आदमी वहीं बैठे बातें करते रहे,—'देखा आपने बच्चे के पीछे कैसी दीवानी रहती है ?'

'अरे भाई, क्यो न दीवानी रहे! वही तो उसका एक मात्र बच्चा है।—दूसरा बोला।

'तो इसका क्या तात्पूर्य कि सदा उसे आँखो मे लिये वह बैठी ही रहे। अरे, लडका है। इधर उधर खेलने के लिए निकल ही जायगा। इतना तो हमारे दीवानजी अपने कुँवरजी के लिए नही घबराते।' पहला पुनः बोला।

'पर इस समय तो रात हो गयी है। घबराना स्वभाविक है।'—तीसरे ने कहा।

'रात की ही बात नही है भाई, दिन मे भी यह ऐसे ही घबरा जाती है। .और मजा यह है कि वह बालक भी कम घुमक्कड नही है। मैने तो उसे कही एक जगह बैठा देखा ही नही ?'

'तभी तो वह इतना घबराती है।' दूसरे व्यक्ति ने कहा।

'क्या बात करते हो यार, अरे हम लोगो को भी लड़के है, वही एक बच्चे वाली नही है। मै तो समझ नही पा रहा हूँ कि आखिर वह उसे इतना प्राण से बढकर क्यो रखती है कोई विशेष बात तो नही।' पहला बोला।

'अरे होगी कोई विशेष बात अपने लोगो से मतलब।' इतना कह कर दूसरा बडे झटके से उठा और उसे हाथ पकड़कर उठाते हुए बोला—'अच्छा चलो उठो अब वह आ गयी होगी ?'

पहला तो उठ खड़ा हुआ, पर तीसरा बैठा ही रहा, वह बोला,—'कौन, भाई ?'

'अरे वही ऽ ऽ ऽ. .।' दूसरे ने आँखें मार कर बड़ी अदा से संकेत किया और फिर तीसरा भी मुस्करा पड़ा,—'चम्पावती ?' सब हँस

रहे। उनके शरीर का प्रत्येक रोम मुस्करा रहा था। फिर पहला कुछ निराशा में बोला—'अभी कहाँ आयी होगी, भाई। अभी तो वह महारानी की गुलामी कर रही होगी।'

'अजी चलो भी।' यहाँ खड़े-खड़े ही सब अनुमान लगा गये। समय हो गया है। अवश्य ही वह पुष्करणी के उस पार किसी कुंज में आकर बैठी होगी।'

'पर बाई भी तो उधर ही गयी है।'

'वह जाय, उससे इससे क्या मतलब। पर तुम चलो भी ना।' इतना कहकर दूसरा व्यक्ति ढकेल कर उन दोनों को पुष्करणी की ओर ले गया।

× × ×

भोज के प्रति तारा के अतिशय भावुक एवं आसक्तिपूर्ण प्रेम की चर्चा किसी न किसी रूप में अवश्य हुआ करती थी। बहुत से लोगों को उसकी यह मोहजन्य व्यग्रता बहुत खराब लगती। बहुधा कुछ दासियाँ आपस में भुनभुनातीं,—इसीका एक नये सिरे का लड़का है, जरा सा आँख से ओझल हुआ कि लगी घबराने। किन्तु खुले आम ऐसा कहने की किसी में हिम्मत नहीं थी। बालक के किले से बाहर निकलते ही लोग दौड़-धूप करते और यह कहे सुने जाते—"बेचारी विधवा ब्राह्मणी का एकलौता बेटा है। अन्धे की लकड़ी है। कंजूस की पूंजी है। वह घबराये नहीं तो क्या करे।"

मॉ से अलग होकर भोज अधिक तर घुड़साल की ओर जाता। घोड़ों को देखने में उसे विशेष मजा आता। इसके अतिरिक्त वह कभी-कभी किले के बाहर खाई में या पहाड़ी के निकट भी निकल जाता। इतने छोटे बालक को प्रकृति के मुक्त वातावरण में विचरते देखकर लोगों

को बड़ा आश्चर्य होता ! इनके अतिरिक्त वह कही नही जाता । इसीसे शीघ्र ही खोज लिया जाता । तारा खोजने वाले के प्रति आभार प्रदर्शित करती और उसका शुभ मनाती ।

बालक के हटते ही किसी तात्कालिक अनिष्ट की आशंका से तारा उतना नही घबराती थी जितना यह सोचकर कि यदि उससे किसी ने बात-चीत की और रहस्य खुल गया तो क्या होगा । इसीसे वह सदा उसके पास रहती । जब वह कही खेलने निकलता, तब भी वह उसका साथ देती ।

जादव भी कभी-कभी आ जाता था । किन्तु अब वह तारा से अधिक बातें नही करता । कुछ ही समय के लिये वह उससे मिलता था । मतलब की बातें होती थी । कुशल क्षेम पूछ लेता था । अधिक समय अब वह महल के अन्य लोगो से बातें करने मे बिताता था । लोग भी अच्छी तरह जान गये थे कि यह वही जादव है जिसने दीवानजी के जीवन की रक्षा की थी । इससे अब लोग उसका और भी सम्मान करते थे । जब दीवानजी ही खडे होकर उससे मिलते थे, तब उनके चाकरो का क्या कहना । वे भी जादव के प्रति अपार श्रद्धा एवं सम्मान व्यक्त करते थे ।

जादव इधर भाण्डेर की सुधि लेता उधर उसके आदमी ईडर की भी खबर रखते थे । प्रायः तीन चार दिनो पर किसी न किसी माध्यम से ईडर का समाचार जादव को मिल ही जाता था । दादू, राजू तथा मूँगा का निराश लौट कर वहाँ जाना, उनकी असफलता की भर्त्सना होना, अपमान तथा अपने प्रति लोगो की घृणा भावना से खीज कर भीलो को भरी सभा में उन लोगों का प्रतिज्ञा करना कि इस बार यदि हम लोग जायेंगे तो पता लगाकर ही लौटेंगे, नही तो फिर आप लोगो को जीवित मुख नही दिखावेंगे । यह सारी बातें जादव को मालूम हो गयी थी ।

पर आज गाँव मे लौटते ही उसे एक विशेष समाचार मिला ।

सन्ध्या हो गयी थी । जादव अपने दरवाजे पर ही चारपायी बिछा-

कर बैठा था और लकड़ी की बड़ी तकली पर भेड़ का ऊन कात रहा था। सामने से गाँव की मुख्य सड़क जाती थी। चरवाहे भेड़ चराकर लौट रहे थे। सन्ध्या की कालिमा कुछ बढ़ चली थी। उस कालिमा में दूर क्षितिज से आती काली भेड़ें ऐसी दिखायी पड़ती थीं, मानों रात लहराती और धरती पर बड़ी निराशा एवं व्यग्रता से लोटती स्वयं चली आ रही हो। उन भेड़ों में से कुछ के गले में बंधी घन्टियों का दूर से आती प्रकम्पित ध्वनि निर्जीव सुनसान में ऐसी मुखरित होती मानो क्षितिज पर धरती का छोर अनन्त की पूजा कर रहा हो। ज्यों ज्यों ये भेड़ें पास आतीं जातीं इन घन्टियों की आवाज तेज होती जाती। बीच बीच में चरवाहों का 'हो . हिन...हे ततई' आदि निरर्थक शब्द भी सुनायी पड़ता। इधर उधर भगने वाली भेड़ों को ऐसा ही कहकर ये चरवाहे बुलाते हैं।

जादव के सामने से जो भी चरवाहा अपनी भेड़े लेकर निकलता, वह अवश्य उसे श्रद्धापूर्वक नमस्कार करता और जादव भी दो शब्दों में हालचाल पूछ ही लेता। यही क्रम इस समय बराबर चल रहा था। प्रत्येक चरवाहा जादव के सामने आकर रुकता अवश्य था। गाँव का सरदार जो ठहरा। यह सरदारी उसके घर में पुस्तैनी चली आयी है।

इस बार एक बूढ़ा चरवाहा आया। जादव से उसका अच्छा परिचय था। उससे बड़े प्रेम से बातें भी होती है। जादव उसे आदरपूर्वक 'काका' कहकर सम्बोधित करता है। उसके निकट आते ही, जादव उसके कुछ बोलने के पहले ही बोला—'क्यों काका, हाल चाल तो ठीक है न ?'

'ठीक ही है।' उसने बड़ी अन्यमनस्कता से कहा।

'आज इतने दबे गले से क्यों बोल रहो चाचा।'—जादव ने पूछा।

'कोई बात नही बेटा।' इतना कहकर उसने अपने साथ के दोनों जवान लड़कों को सम्बोधित कर कहा,—'तुम लोग चलो मैं अभी आता हूं।' और वह फिर जादव की चारपायी पर जाकर बैठ गया। बातचीत होने लगी।

'आज ईडर की तरफ का गड़ेरिया मिला था। वह कह रहा था कि तीनो (दादू, राजू और मूंगा) फिर कुँवरजी का पता लगाने निकल पड़े है।'

जादव कुछ समय तक सोचता रहा, फिर बोला,—'इसका कुछ पता चला कि वे किस ओर गये है ?'

'ना, यह तो नही बता सकता।...देखो कल परसो तक कुछ न कुछ पता तो लगेगा ही।'

'और तो कोई नई बात नही है ?'

'और तो कोई बात नही है, पर वह कह रहा था कि तारा की लाश मिली है ?'

इतना सुनना था कि जादव हक्का-बक्का रह गया। उसे कुछ समझ में नही आया। उसने बड़ी व्याकुलता मे पूछा—'कौन तारा ?'

'यह तो मै नही जानता। पर वह कह रहा था कि कल महल के निकट एक कुएँ में से एक सड़ी लाश निकाली गयी है। लाश से दुर्गन्ध निकल रही थी। उसका सिर भी कटा था। वह पहचानी नही जा सकती थी, पर महल की एक दासी ने कहा कि यह तारा बाई की लाश है।'

यह सुनकर जादव फिर कुछ नही बोला। वह सोचता रहा। पुनः बूढ़े को जोर की खाँसी आयी और वह कुछ देर तक खाँसता रहा। फिर उसने वही जमीन पर थूककर गला साफ कर कहा—'लेकिन बेटा, मै यह नही समझ पाता कि तुम ईडर के समाचार के लिए इतने क्यों उत्सुक रहते हो...और उसपर बड़ी चिन्ता भी करते हो।'

'यो कोई बात नही है चाचा। केवल यही सोचता हूँ कि आखिर वह राज आपसी द्वेष के कारण बरबाद हो जायगा !...'

'पर उसे बरबाद होना ही चाहिए था, ऐसे विलासी राजा का राज जरूर बरबाद हो।' उसने थोड़े आवेश में कहा।

'विलासी था राजा, वह मारा गया। कुंवरजी ने भला किसका क्या बिगाड़ा है जो लोग उसके पीछे पड़े है।'

'हाँ, यह तो भूल है।...पर बेटा जब तक भगवान बचाने वाला है तब तक कोई किसी का कुछ बिगाड़ नही सकता।' इतना कह कर वह उठ खड़ा हुआ बोला—'देर हो रही है बेटा। अब चलूँ। फिर मिलूंगा।'

वह चला गया। अन्धकार के झीने परदे में लिपटा जादव बड़ी देर तक बैठा तकली पर ऊन कातता और सोचता रहा। तकली की गति से भी अधिक तेज उसका मस्तिष्क चक्कर काट रहा था। धीरे-धीरे अंधेरा और गाढा हुआ जादव उसमें खो गया।

× × ×

आज जब जादव भांडेर आया तब दिन का तीसरा पहर ढल चुका था। सूर्य पश्चिम की ओर झुक चुका था। किन्तु यह समय तो उसके आने का नहीं था। सदा वह प्रातःकाल आता और सन्ध्या को लौट जाता था, किन्तु, आज वह खड़ी दोपहरी में अपने गाँव से चला था। आकृति से भी अत्यन्त व्यग्र दिखायी दे रहा था। पसीने से तर था। प्रमुख द्वार पर जब उसका घोड़ा रुका तब वह भी हॉफ रहा था। लगता था, तेजी से दौड़कर आया है, कोई अत्यन्त आवश्यक कार्य है।

आते ही उसने महाराज के पास सूचना भेजी और मिलने गया। आज उसकी वार्ता कई घन्टे तक चलती रही। संध्या को महाराज भी घूमने नही निकले।

उधर तारा अंधेरा होते ही महिलाओं और बच्चों के बीच आयी। सभी उसकी राह देखते हुए महल के बड़े दालान में बैठे थे। भोज तारा के आने के पहले ही आकर वहां खेल रहा था। सामने एक ऊँची सी चौकी

पर मखमली गद्दी बिछी थी। उस पर रगीन मखमल के दो मसनद थे। उसी चौकी पर बैठकर तारा धार्मिक कथा कहती थी। इस समय चौकी के दोनो ओर चन्दन के ऊंचे दीवट पर घी के दो दीप ऊँची लव से जल रहे थे। चौकी के बायी ओर के दीपक पर एक फतिंगा कही से आकर मंडरा रहा था। भोज वही खेल रहा था। हाथ से फंतिंगा को भगाने की चेष्टा करता था, पर फतिंगा थोड़ा हटकर फिर वहीं आ जाता था। बालक को कोई बार निकट बैठी औरतों ने मना किया, एक बार उसकी बाह पकड़कर अपनी ओर खीचा भी, पर बालक नही माना। वह अपने खिलवाड़ में लगा रहा, दीपशिखा काँपती रही।

जब तारा आयी सम्मान मे सभी बच्चे तथा महिलाएँ उठकर खडी हो गयीं। तारा को देखकर भोज भी कुछ शान्त हुआ और ज्योंही वह गद्दी पर बैठी वह भी बगल में आकर बैठ गया।

वन्दना के बाद तारा ने कल की महाभारत की अधूरी कथा आज फिर आरम्भ की,. .'हा तो मै कल पूज्य भीष्म पितामह जी के सम्बन्ध में कह रही थी। वे अपने जीवन के अन्तिम दिन बिता रहा थे। उनकी शक्ति समाप्त हो गयी थी, शरशैया पर पड़े थे। किन्तु जब तक सूर्य उत्तरायण नही होता, तब तक यह मृत्यु लोक छोडना ठीक नही,—ऐसा वे सोचते थे और सूर्य के उत्तरायण की प्रतीक्षा में थे। जब सन्ध्या हो जाती थी और युद्ध समाप्त हो जाता था तो लोग सन्ध्या के कर्म से निवृत होकर दादा के पास आते थे। दादा उन्हें अपने जीवन के बहुमूल्य अनुभव सुनाते थे। उन्हें उपदेश देते थे।. कहते हैं कि जीवन के अन्तिम दिनों में मनुष्य के पास अनुभव का एक बहुमूल्य कोश रहता है। उस कोश से जितना भी रत्न प्राप्त हो सके उसे ग्रहण कर लेना चाहिए। चाहे वह मित्र हो या शत्रु...।

'शत्रु भला क्या उपदेश देगा, बाई।' पास बैठी एक बूढी महिला ने अपनी शंका व्यक्त की। तारा के कथा कहने की यह विशेपता थी कि

उसमें बातचीत भी चलती थी। किसी समय कोई भी शंका कर सकता था। तारा तत्काल उस शंका का समाधान करने की चेष्टा करती थी।

वृद्धा के बोलते ही तारा ने कहा,—'हाँ, माताजी, हमारे देश में यह परम्परा रही है कि वृद्ध और अनुभवी शत्रु भी जब मरने लगता है तब लोग उसके पास शिक्षा ग्रहण करने जाते हैं।. अरे और उदाहरण खोजने की क्या जरूरत, रावण को ही ले लीजिए! जब वह मरने लगा, महाराज राम ने स्वयं लक्ष्मण से कहा था कि जाओ, एक अनुभवी विद्वान पुरुष मर रहा है, उससे शिक्षा लो।...और लक्ष्मण ऐसा भावुक तथा क्रोधी व्यक्ति भी आखिर शत्रु के पास शिक्षा लेने के लिए गया ही।'

'सो तो है ही। शत्रु होने से क्या होता है? रावण कितना विद्वान था।' बीच में ही एक महिला बोल उठी।

'...हाँ तो इसी, भावना से लोग आते थे।' तारा ने पुनः कहना आरम्भ किया—'उसमें कौरव दल के भी लोग रहते थे और पांडव दल के भी। सब बड़े प्रेम से चुपचाप बैठकर उपदेश सुनते थे। एक दिन पितामह पुरुषों का कर्त्तव्य बताते हुए कहने लगे कि पुरुष वह है जो दूसरों का दुख देखकर दुखी हो। निर्बलों एवं असहायों की सहायता करें। पुरुष वह है जिसकी भुजाएँ अत्याचार के विरुद्ध फड़क उठती हों, जो पर स्त्री को माता के समान समझता हो.. "वे बोल ही रहे थे कि द्रौपदी बीच ही में विनम्रता पूर्वक बोली—"दादाजी एक बात पूछूँ?"

दादा के उपदेश के बीच में बोलने की किसी में हिम्मत नहीं, किन्तु द्रौपदी बीच में ही टोक बैठी। ऐसी धृष्टता! लोगों को बड़ा आश्चर्य था। किन्तु पितामह ने सदा की भाँति मुस्कराते हुए कहा—"हां-हां, पूछो बेटी।" लगता था वे समझ गये थे कि द्रौपदी क्या पूछना चाहती है।

"वह बोली,—दादा आप इस समय तो इतनी ज्ञान की बात करते हैं किन्तु आपका ज्ञान उस समय कहाँ था जब दुर्योधन की भरी सभा में मेरी

चीर खींची जा रही थी ? क्या मुझ पर अत्याचार नहीं हो रहा था ? आप भी तो थे सभा में । ..आपको याद होगा मैंने आपको भी सम्बोधित करके पूछा था कि दादा, आप ही धर्म की साक्षी देकर बताइए कि महाराज युधिष्ठिर ने मुझे अपने स्वयं हार जाने के बाद दाव पर लगाया था या पहले । इतना कहने पर भी आप चुप थे । द्रुपद राज की पुत्री, धृष्टद्युम्न की बहन, पाण्डवों की धर्म-पत्नी, पूज्य धृतराष्ट्र और आपकी कुल वधू क्या इसी योग्य थी कि भरी सभा में उसे नग्न किया जाय । जिस वेणी पर कभी ससार के समस्त ब्राह्मणों ने अवभृथ-जल छिडका था, उसे पापी दुःशासन ने पकड कर खींचा ।. और आप बैठे चुपचाप देखते रहे । .उस समय आपको क्या हो गया था, दादा ।' द्रौपदी ने पूछा ।

'पूछा तो खूब द्रौपदी ने बहिन ।' एक महिला बोली । तारा के कथा कहने का तार तम्य तब टूटा । भोज अब नींद में झूम रहा था । वह सामने मुँह के बल गिरने गिरने को हुआ । तारा ने उसे अपनी जाँघ पर लिटा दिया ।

'और बडे आवेश में उसने पूछा ।'—यह दूसरे महिला की आवाज थी ।

''आवेश मे न बोलती तो क्या करती, उस पर जो बीती थी ।'''और बहिन, द्रौपदी भी असाधारण विदुषी थी ।' तारा ने कहा ।

'तो फिर भीष्म पितामह क्या बोले ?'

'उन्होंने बडे महत्व की बात कही । सभा मे जितने लोग बैठे थे, सब समझ रहे थे कि दादा द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर कदाचित ठीक न दे पायेंगे, पर उन्होंने बहुत गम्भीर होकर बड़ा मार्मिक उत्तर दिया । उन्होंने कहा—बेटी, तुम ठीक कहती हो । उस समय दुराचारी के भोजन ने हमारी बुद्धि भ्रष्ट कर दी थी । मैं पापी का अन्न खाता था । उससे न्याय अन्याय तथा सत असत् का विवेक करने की शक्ति मेरी बुद्धि में नहीं रही । अब कई दिनों से इस शर-शैय्या पर पड़ा हूँ । अन्न का एक दाना भी पेट में

नही है। अब मेरी बुद्धि निर्मल है। इस समय मैं ठीक से सोच पा रहा हूँ।'

"द्रौपदी चुप हो गयी। और लोग भी इस उत्तर पर सन्न रह गये।" तारा की वाणी ने कुछ क्षणो का विश्राम लिया। इसी बीच एक महिला ने पूछा,—"क्यों बहिन अन्न का प्रभाव बुद्धि पैर भी पड़ता है।"

तारा बोलने ही वाली थी कि दूसरी महिला बोली, "क्यों नही बहिन! अन्न का प्रभाव तो बुद्धि पर पड़ता ही है। अत्याचारी के अन्न मे बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। सुना नही राजा महेन्द्र के अत्याचार एवं विलास से पीड़ित होकर प्रजा ने उसे मार डाला। अब उस अत्याचारी के अन्न का एक दाना भी वह ग्रहण करना नही चाहती।" उसने एक सांस में कहा। बात जैसे उसके पेट मे उबल रही थी। जरा सा अवसर पाते ही निकल पड़ी।

"यह कहाँ की बात है, बहिन।" तारा ने सब कुछ जानकर पूछा।

"अरे यही ईडर की।...सुना है, अत्याचारियो ने कुंवरजी को भी कही छिपा दिया है। लोग उसे खोज रहे हैं।"

'अच्छा, तभी कल महल के मुख्य द्वार का पहरेदार बात कर रहा था।' सामने बैठी महिला ने गम्भीर होकर कहा। फिर उसका बाया हाथ गाल पर गया और वह कुछ सोचने लगी।

'क्या बात कर रहा था पहरेदार?' तारा के स्वर में अपार उत्कण्ठा थी।

'वह कह रहा था कि तीन चार गुप्तचर इधर भी आये हैं। उनमें से एक तो यहाँ के कई लोगो से अच्छी तरह परिचित भी है।'

'उसका नाम क्या है?' तारा ने पूछा।

'नाम तो मैं नहीं जानती। अच्छा, पूछ कर बताऊँगी।'

शाह खर्च के हाथ से पैसा निकलने की गति भी औरत के पेट से बात निकले की गति से मन्द होती है ।

इसके बाद निकट ही बैठी दूसरी औरत ने भी कहा—"आज जब प्रातःकाल मै मन्दिर गयी थी, तब कुछ व्यक्ति वहाँ बात कर रहे थे । वे कह रहे थे कि कुछ लोग ईडर से यहाँ भी आये हैं ।" विचित्र कुतूहल एवं आश्चर्य था उसके स्वर में । तारा तो जैसे आवाक रह गयी वह सोचने लगी, यहां भी लोग पीछा करते आ ही गये । फिर अपनी परिस्थिति सोचते हुए उसने बड़ी चतुराई से कहा,—"अत्याचारी के वश का अवश्य नाश कर देना चाहिए । जब तक कुशा की जड़ समाप्त नही की जाती तब तक वह समाप्त नही होता ।" अब तारा पर किसी प्रकार की शंका नही हो सकती थी ।

हर परिस्थिति में अन्याय का विरोध करने वाले आखिर रहते ही है । एक स्त्री ने कह ही दिया—कोई जरूरी नही है कि अत्याचारी का पुत्र अत्याचारी ही हो । हिरण्यकश्यप का प्रह्लाद पुत्र ही था । विष से भी जीवन दान देने वाली औषधि बनायी जाती है ।" इस तर्क में बड़ी शक्ति थी । सब चुप रह गयी । तारा तो जैसे अपनी आवाज दूसरे के कण्ठ से सुन रही थी । फिर भी उसे अब अधिक देर तक बैठना मुश्किल था । कहानी का सिलसिला तो बहुत पहले ही टूट चुका था । उसने बातचीत का सिलसिला भी समाप्त करते हुए कहा—"कुछ भी हो बहिन, इससे हम लोगो से क्या मतलब । जो जैसा करेगा, वैसा भरेगा ।"

अन्त मे कुछ समय तक कीर्तन हुआ । इस समय भोज भी उठ बैठा । वह सत्संग में माँ के पास ही था । आज तारा पिछले दिनो की अपेक्षा अधिक चिन्तित दिखाई दे रही थी । उसके मस्तक पर पड़े सिकन मन की चिन्ता एवं व्याकुलता व्यक्त करने में अत्यधिक सफल थे ।

× × ×

रात आधी से अधिक जा चुकी थी। तारे आकाश में जग रहे थे। किले के चारो ओर पहरा पड़ रहा था। कुत्तों के भूँकने के बीच-बीच मे भेड़ियों की भयानक आवाज से निस्तब्ध रात्रि की छाती जैसे काप उठती थी। थोड़ी-थोड़ी देर पर पहरेदारो के सचेत करने का ऊँचा स्वर दूर की पहाड़ी से टकराकर गूंज उठता था।

अचानक किले के पहरेदार ने देखा कि कोई घुड़सवार बड़ी तेजी से पहाड़ी की ओर से इधर चला आ रहा है। पहरेदार सजग हुआ। उसने दूसरे पहरेदारो को भी संकेत से बुलाया और निकट आराम कर रहे दूसरे पहरेदारो को भी जगाया घुडसवार और भी निकट आ गया था। पहरेदार ने आवाज लगायी,—'कौन है?'

घोड़ा आगे बढता चला आ रहा था। उधर से कोई आवाज नही आयी। पुनः पहरेदार चिल्लाया—'कौन है.. ...सावधान.... .वहीं रुक जाओ।'

पर घुड़सवार दौड़ा चला आ रहा था। पहरेदार ने सोचा कि किले में खतरे की सूचना करें। उसने दूसरे सैनिक से कहा,—'कोई विशेष बात जरूर हैं।'

बड़े स्वाभाविक ढंग से मुस्कराते हुए दूसरा सैनिक बोला,—'हो सकता है, घुड़सवार बहरा हो। हमारी आवाज ही न सुन सकता हो।'

फिर पास के सैनिक हल्की हँसी हँस पड़े। पहले पहरेदार ने कहा—'आप लोगो को तो हर समय हँसी ही सूझती है।'

'आखिर हँसी तो है ही, कोई सेना नही है कुछ आदमी भी नहीं है। केवल एक घुड़सवार आ रहा है, और आप खतरे की सूचना देने को कहते है।' तब तक घुड़सवार और भी निकट आ गया। अब वह कुछ स्पष्ट मालूम पड़ रहा था। अरे यह तो जादव है! एक क्षण में उनकी धारणा और भी पुष्ट हो गयी। सभी पहरेदारों ने दूर से ही उसे सैनिक अभिवादन किया।

जादव मुख्य द्वार पर आकर घोड़े से उतरा । "बड़े गुम-सुम चले आ रहे थे सरदार ।" पहरेदार मुस्कराहट भरी आवाज में बोला ।

'मै सोच रहा था कि देखूँ मेरे न बोलने पर तुम लोग क्या करते हो ।' इतना कह कर जादव हंसने लगा । उस हंसी मे पहरेदारो ने भी साथ दिया ।

"यह तो अच्छी हँसी की सरदार ।...आज बड़ी रात में चले...कोई विशेष बात तो नही ?" यह ध्वनि जिज्ञासा एवं उत्सुकता से भरी थी ।

"नही कोई बात नही ।" घोड़े को थपथपाते हुए जादव बोला—"महा-राज तो सो रहे होंगे ?" पुनः उसने पूछा । "जी हाँ इस समय तो सोते ही होंगे ।"

"तो किसी प्रकार किसी लौंडी से मेरे आने की सूचना, किले में आयी नयी ब्राह्मणी के पास पहुँचाओ ।"

किले के सभी लोग इतना जानते थे कि जादव से ब्राह्मणी का परिचय है, उसके प्रति इसके पूज्य विचार हैं, यह उसकी हर प्रकार की सेवा के लिए तैयार रहता है । इससे अधिक दीवानजी के अतिरिक्त और कोई नही जानता था ।

किन्तु इस समय जादव की यहाँ क्या आवश्यकता ? कोई आकस्मिक आपत्ति तो नही ? किन्तु सोचने का समय नही है, पूछने की हिम्मत नही है । दीवानजी का कृपा पात्र होने के कारण जादव खूब तपता था । किसी को हिम्मत नही जो उससे कुछ विशेष पूछे ।

किसी प्रकार सूचना ब्राह्मणी तक भेजी गयी ।

तारा को नीद आज कुछ देर से आयी थी । लौंडी जब उसे जगाने पहुँची तब वह खर्राटे भर रही थी, किन्तु केवल एक ही आवाज मे उठ बैठी । जादव के आने का समाचार सुनते ही उसका हृदय धक से करके रह

गया। उसके आने का कारण जानने के लिए उसके मस्तिस्क में भूमिका सन्ध्या से ही तैयार हो चुकी थी। वह सब समझ गयी।

भोज को सोता छोड़ कर तारा पहिले बाहर आयी, फिर जादव को ले अतिथि भवन की ओर गयी। बाहर बात करना ठीक नहीं था। यों तो प्रहरियों के अतिरिक्त वहां कोई नही था, फिर भी परिस्थिति की भयंकरता वह सहने के लिए तैयार नही थी—और दीवार को भी कान होते हैं। फिर कानो कान कुछ किसी को भी मालूम हो यह कैसे सम्भव था?

आज अतिथि भवन में कोई अतिथि नही था। जादव के पहुंचते ही उसका यह अभाव दूर हो गया। वहां के प्रहरीने प्रमुख कर्मचारी को जगाया उसने शीघ्र ही द्वार पर आ जादव का अभिवादन किया और बोला—'आज बड़ी रात को चले सरदार।'

"हां, सन्ध्या को ही चलने वाला था, पर चलते चलते देर हो गयी।" इसके अतिरिक्त कर्मचारी और कुछ न पूछ सका, यों इतनी रात मे आने पर उसे भी कुतूहल अवश्य था।

भवन के प्रमुख कक्ष में शीशे के भीतर कुछ बत्तियां अब भी जल रही थी। ये रात भर इसी प्रकार जला करती थीं। उन दिनों रात मे काम समाप्त हो जाने पर भी सभी बत्तियां बुझा देने को परम्परा नही थी। कुछ न कुछ जला करती ही थी। लक्ष्मी का अभाव अशुभ माना जाता था। इसी से प्रत्येक कक्ष में प्रकाश अवश्य रहता था। किन्तु वह इतना नहीं, जो कार्य संपादन के लिए प्रर्याप्त हो।

कर्मचारी ने कक्ष में प्रवेश करते ही पूछा—"और बत्तियाँ जला दूँ सरदार।"

"नहीं, कोई, आवश्यकता तो नहीं मालूम होती।" जादव ने पलँग पर बैठते हुए कहा। तारा सामने ही काठ के एक छोटे से सिंहासन पर बैठ गयी कर्मचारी दोनो को देखकर मुस्कराता हुआ चला गया। नीरव

एकान्त में पुरुष और नारी का यह मिलन कर्मचारी के लिए वासनामय रहस्य था। उसने दोनो के चरित्र की स्वच्छता का अनुभव नही किया था। उस स्वच्छता के दर्पण में उसने अपनी तस्वीर देखी थी। मन की सारी मलिनता उसके अधरो पर मुस्कान बनकर बिखर गयी, किन्तु इस ओर न तारा का ध्यान गया और न जादव का। गंगा की धारा कभी आस पास के दूषित नालों की ओर ध्यान नही देती। वह तो आगे बढना ही जानती है। अनवरत विचारो के चक्कर मे पड़े तारा और जादव के मस्तिष्क को इतना अवकाश कहा जो वह इन छोटी-छोटी बातो पर विचार कर सकें।

युवक के जाते ही जादव ने बात शुरु की, "इस रात्रि में अचानक मेरे यहां आने का कारण तो आप समझ ही गयी होगी।"

"हाँ आपत्ति की सूचना मुझे कल सन्ध्या को ही मिल चुकी थी। मै आपको याद ही कर रही थी।"

"—तो अब क्या विचार है।"

"जैसा आप कहे।"

"मेरे विचार से तो अब यहाँ से कही सोच विचार कर चल देना चाहिए।"

"सोचना क्या है, बड़ नगर चले चलूंगी। और कही तो कुशल नही। किन्तु अचानक चल पड़ने से भी तो लोगो को सन्देह हो ही जायगा।" तारा चिन्तित स्वर में बोली।

जादव सोच में पड गया, फिर बडी गम्भीरता से बोला—'यह तो ठीक है। यहां एक दिन भी अब रहना खतरे से खाली नही है। लोगों को पता चल गया है कि कुंवरजी भाण्डेर के आसपास ही कही है। पर विचित्र बात यह है कि उन्हें आपके सम्बन्ध में बड़ा भ्रम है?"

'क्या ? मेरे सम्बन्ध में भ्रम कैसा ?'

'बात यह हुई कि ईडर में एक दिन एक कुंए से एक स्त्री की मडी लाश मिली थी उसका सिर कटा था। वह पहचानी नहीं जा सकती थी, पर महल की किसी पुरानी दासी ने बताया कि यह तारा बाई की लाश है। अब वे आपको मरा हुआ समझते हैं।'

'चलो अच्छा ही हुआ। एक बाधा तो टली।' तारा को जैसे कुछ सन्तोष हुआ। वह पुनः बोली,—"अब तो उन्हे और अधिक अन्धकार में रखा जा सकता है।"

'यही तो मै भी सोचता हूँ कि अब आधी बाधा यो ही टल गयी। पहले कुँवरजी और आप दोनो को छिपाना होता। पर अब तो आपको भगवान् ने ही छिपा दिया।' इतना कहकर जादव चुप हो गया। तारा भी सिर नीचा किये और अपनी ठुड्डी पर हाथ रखे बड़ी गम्भीरता से सोचती रही।

जादव ने पुनः कहा—'अब अधिक सोचने का समय नहीं। हमे शीघ्र ही कुछ न कुछ करना चाहिए। शायद कल ही ईडर के कुछ लोग दीवान जी से मिले और कुँवरजी के सम्बन्ध में बाते करें। तब और भयंकर स्थिति हो जायगी। एक ओर हमारा सम्बन्ध ? दूसरी ओर राजनीति, बेचारे दीवान जी क्या कर सकेंगे। ..वे किसी धर्म संकट में पड़ें इसके पहले ही हमें कोई न कोई रास्ता ढूँढना पड़ेगा।'

तारा ज्यों-ज्यों सोचती रही, उसकी चिन्ता बढती ही रही। चिन्ता इस बात की नही थी कि यहा से भी कही चलना पड़ेगा वरन् इस बात की थी कि आखिर इस प्रकार की भाग दौड़ की जिन्दगी कितने दिनो तक चलेगी। क्या बरसाती बादलों की भाँति कभी यहाँ और कभी वहाँ भागना ही पड़ेगा या शान्ति भी मिलेगी। वह चिन्तित नीचे देखती रही, जैसे वह धरती माता से ही अपने समस्याओं का समाधान पूछ रही हो।

बीच बीच मे खिड़की से दक्षिण-पवन का झोंका आता और शमा-दान में ज्योति-शिखा कांप उठती ।

अचानक बाहर किसी मनुष्य के होने की आहट लगी । जादव ने झट दरवाजे पर आकर देखा । बाहर अतिथि भवन का प्रमुख कर्मचारी टहल रहा था और ध्यान से अनुमान लगाने की चेष्टा में था कि भीतर क्या हो रहा है।

जादव उसे देखते ही जल उठा—'कहिए आप यहाँ कैसे ?'

उसे क्या पता था कि उसे सरदार देख रहा है ? वह इस अप्रत्याशित तीखी आवाज से जैसे चौक सा गया । वह क्या उत्तर दे । वह सकपकाया सा बड़ी दबी आवाज मे बोला—'जी, कोई बात नही । सोचा, आपको कोई कष्ट तो नही है देखता आऊँ ।'

'कृपा करके आप यहां से चले जाइए । मुझे कोई कष्ट नही है । व्यर्थ कष्ट मत दीजिए ।' वह भीगी बिल्ली की तरह जाने लगा । जादव ने पुनः वैसी ही रुखाई से तीव्र स्वर मे कहा—"क्या मै आशा करूं कि जब तक मै यहाँ रहूंगा तब तक आप मेरे कष्ट की चिन्ता कर यहा पधारने की कृपा नहीं करेंगे ?'

अब तो उस पर जैसे सौ मन पानी पड़ गया । किन्तु उसकी शंका तो पुष्ट ही हो गयी । उसके मन का पाप बुद्धि से बार बार पूछता रहा—"क्या बात है कि मेरी उपस्थिति से सरदार इतना नाराज हो गया ? आधी से भी अधिक रात बीत चुकी है । राजभवन की एक सेविका इस समय अतिथि-भवन में आकर पर पुरुष से इस प्रकार फुसफुसा कर बातें करें, क्या कोई रहस्य नही है ? मै यहा का प्रधान कर्मचारी हूँ क्या मुझे यह भी अधिकार नहीं है, जो मै उन्हे जाकर देख सकूं कि वे क्या कर रहे है ?...

आखिर यह अतिथि-भवन है या वेश्यालय ?

पर जादव ने सोचा कि यह कर्मचारी छिपकर हमारी बातें सुनने आया

है। अवश्य यह हमारा भेद जानने की चेष्टा में है। इसीलिए वह उस पर इस प्रकार नाराज हुआ, पर उसकी मनोवृत्तियो का उसे ज्ञान नहीं था।

जादव ने परिस्थिति वश उस कर्मचारी को समझने में और कर्मचारी ने अपने पतित संस्कारो के कारण जादव को समझने में भूल की।

जादव उसी आवेश में भीतर आया तारा से बोला—'देखा यहाँ और भी लोग हमारे पीछे लगे हैं।''

'तो क्या करूं? अब आप ही बताइए?' तारा लाचार होकर जैसे खीझ उठी।

''मै तो सोचता हूँ कि आप कल प्रचारित कर दीजिए कि मैं तीर्थ यात्रा करने जा रही हूँ। पहले बडनगर जाऊँगी और वहाँ कुछ दिन रह कर फिर देशाटन के लिए निकलूँगी।''

''किन्तु जब लोग कहेंगे कि आखिर इतनी जल्दी क्या है। तब क्या कहूँगी?' तारा ने पुनः पूछा।

''कह दीजिएगा कि बडनगर से कपिलदेव जी ने बुलाया है। तब आपको ऐसे स्थान पर ले चलूँगा जहाँ ईडरवालों के स्वर्गस्थ पूर्वजों की आत्मा भी पहुँच नही सकती।''

''...और यदि गुप्तचर पता लगाकर बड़ नगर पहुंचे तो?''

''उनके पहुँचने के पहले ही मै वहाँ जाकर कपिलजी से सारी बातें साफ साफ कह दूंगा। उनसे कोई पूछेगा तो वे कह देंगे कि वह अपने बेटे के साथ तीर्थ यात्रा करने गयी है।''

''अच्छी बात है।'' वह चिन्ता भरे स्वर में लम्बी साँस खींचते हुए बोली।

योजना बन गयी। दिन में किसी समय अब प्रस्थान होगा। चिन्ता सागर में डूबी तारा भगवान् को बारबार मन ही मन धन्यवाद देती रही

कि उसने जादव ऐसे योग्य सहायक से मिला दिया। नही तो ऐसी स्थिति में उसका क्या होता ? वह क्या करती ?"

बातचीत में कई घन्टे बीत गये। किले के मन्दिर में ब्रह्ममुहूर्त के समय भगवान् के जागरण के लिए घन्टे की आवाज के साथ शंखध्वनि आरम्भ हुई। आवाज सुनकर तारा उठी। भोज के जागने का समय हो गया था। हो न हो वह जाग भी गया हो। उठ कर जब वह मुझको खोजेगा तब क्या होगा ?—तारा ने सोचा। और वह जादव से विदा होकर चल पड़ी। अतिथि भवन का प्रमुख कर्मचारी उसे गौर से देखता रहा, जब तक वह उसकी आँखों से ओझल न होगयी। पता नही वासना और घृणा का कितना विचित्र मिश्रण उसकी दृष्टि में था।

कार्तिक के महीने में सूर्योदय के पहले ही स्नान का माहात्म्य है। किले के अधिकाश कर्मचारी जाग चले थे, भगवत् भजन करते हुए स्नान की तैयारी करने लगे। अब सोने का समय कहाँ ? जादव ने भी शरीर की थकावट स्नान करके दूर करने की सोची।

४

पहाड़ी की छाती पर यह पाराशर ग्राम है। चारों ओर ऊँची चोटियाँ है। बीच की चिकनी भूमि में ग्राम बसा है। पहाड़ी की चोटी पर घने जंगल हैं। जंगल पार कर ग्राम मे जाना आसान नहीं।

ग्राम में कई फर्लांङ्ग की दूरी पर झोपड़ियाँ बनी हैं। कई झोपड़ी मिलकर एक 'फला' कहलाता है। ग्राम मे ऐसे कई फला होते हैं। पराशर में ऐसे बारह 'फले' हैं। सभी एक दूसरे से दूर-दूर है पर आपत्ति के समय फला के सभी लोग एक स्थान पर जुट जाते हैं।

आज कार्तिक पूर्णिमा थी। रात शुरु ही हो रही थी। भोज को लेकर तारा और जादव घोड़े से ग्राम के निकट पहुँचे। जादव ने दूर से ही पहाड़ी को दिखाकर कहा—"अब हम अभिष्ट स्थान पर आ गये, किन्तु

थोड़ा चक्कर लगाकर पहाड़ी पर चढ़ना होगा, क्योंकि सभी स्थानों से रास्ता नही है। घने जगल में फसना ठीक नही।"

दोनो घोड़ा दौड़ाकर उत्तर की ओर से पहाड़ी के निकट आये। अब गाँव का कोलाहल मालूम हो रहा था। चिल्लाने, रोने गाने और जोर-जोर से बोलने का मिला जुला स्वर साफ सुनायी पड़ रहा था। तारा ने जादव से कहा—"लगता है, गांव में जोर का झगड़ा हो रहा है।"

जादव खड़ा होकर चुपचाप अनुमान लगाने लगा। झगड़े के समय वह किसी भील से मिलना ठीक नही समझता था यद्यपि वह स्वयं भी भील था। अपने जातीय स्वभाव को वह अच्छी तरह जानता था। क्रोध के समय प्रत्यक भाल की बुद्धि सो जाती है। उचित और अनुचित का उसे बिल्कुल ध्यान नही रहता। इसी से वह आगे बढ़ न सका।

किन्तु भोज का बालक होकर हर स्थान पर चुप रहना मनोविज्ञान के पडितों को ही नही, आपको भी खटकता होगा। कुतूहल और जिज्ञासा की चरम सीमा पर वाणी मे जड़ता आ जाती है। ऐसी जड़ता अपनी मात्रा से भी अधिक भोज में थी, पर वह इस अवसर पर बोल ही उठा—"झगड़ा हो रहा है तो क्या? चलकर मां उन लोगो को छुड़ा दो।"

कोलाहल लगातार सुनायी पड़ रहा था। आकाश मे फुटबाल सा चन्द्रमा बढता चला आया। पत्तियों से छनकर ठंडी हवा बहने लगी। कुछ शीत का भी अनुभव हो चला था। जादव अब तक सोचता खड़ा था। ओढ़नी मे सिकुड़ती हुई तारा बोली,—"अब शीत पड़ने लगी और पड़े भी क्यो नहीं। कार्तिक खतम जो हो चला।"

'कार्तिक?' जादव नें आकाश में विहँसते हुए चन्द्र की ओर देखा। 'तो क्या आज कार्तिक पूर्णिमा है?'

'हाँ' जादव जोर से हँसा। हम लोग अच्छे बेवकूफ बने। चलो कोई हर्ज नही।" उसने घोड़े की रास खींची और चला पहाड़ी चढने।

८

'क्यों क्या बात है ?' उत्सुकता बस तारा ने पूछा ।

उसने हँसते हुए कहा, "यह झगड़ा करने का नहीं त्योहार मनाने का कोलाहल है । आज भीलों का अत्यन्त प्रिय त्योहार है । बड़ा ही मनोरंजक एवं दर्शनीय उत्सव होता है । आज के दिन पूर्वजों की आत्माएं लोगों के शरीर में आती हैं ।"

"आत्माएं आती हैं ?" बड़े आश्चर्य से तारा बोली ।

बालक के मन पर तारा के आश्चर्य से भरे स्वर का विचित्र प्रभाव पड़ा । 'आत्मा' यह क्या होता है ? भूत है या प्रेत है ? कौन सी ऐसी वस्तु है, जो आती है ? भोज के मस्तिष्क में प्रश्नों की लम्बी शृंखला बनने लगी आखिरकार उसने पूछ ही दिया,—"आत्मा क्या है मां ?"

तारा कुछ उत्तर न दे सकी । उसने हँसकर जादव की ओर देखा । जादव ने समझ लिया कि तारा भोज को समझाने में अपने को असमर्थ और असफल पा रही है ।

झाड़ियों के बीच से जाने वाले मार्ग पर आगे बढ़ते हुए जादव बोला—'क्यों भोज कभी महल में मॉ के साथ परमात्मा का दर्शन करने गये हो ?'

हँसते हुए भोज ने उत्तर दिया—'हॉ, हाँ, जरूर गया हूँ ।'

'तो परमात्मा का मतलब क्या समझते हो ?'

भोज कुछ सोचने लगा किन्तु अपने मस्तिष्क पर बहुत जोर देने पर वह सोचते हुए बोला—'परमात्मा...मतलब भगवान् ।'

"यदि परमात्मा भगवान् को कहते हैं तो आत्मा छोटे भगवान् को कहते हैं । जादव ने अपने तार्किक ज्ञान का प्रयोग किया और सोचा कि हमें सफलता मिल गयी, पर ऐसा नहीं था ।

"तो क्या यहाँ छोटे-छोटे भगवान आयेंगे।" अत्यन्त प्रसन्न हो खिलखिलाते हुए भोज ने कहा,—"छोटे से राम, छोटे से कृष्ण, छोटे से शिव...ओहोऽऽऽ ..? माँ तब मै भी यहीं रहूँगा।" तारा जोर से हँस पड़ी। उसकी हँसी में जादव और भोज की भी हँसी मिल गयी।

जादव के उत्तर ने भोज के मन में अनेक प्रकार की शंकाओं को जन्म दिया। एक के बाद एक प्रश्न उसके मन में उठने लगे। उसे उन सबका उत्तर चाहिए। क्या जादव और तारा उसका उत्तर देने मे सफल हो सकेंगे? कभी नही। उनका तो प्रत्येक उत्तर भोज के मन में अनेक नई शंकाओं को जन्म देता। इन शंकाओ मे उसे वैसा ही आनन्द था जैसा भिखारी को उस स्वप्न मे मिलता जिसमे वह राजा बन जाता है। जिस प्रकार स्वप्न का राज महल आँख खुलते ही आलादीन के महल की तरह गायब हो जाताहै वैसे ही गाँव में पहुँचने पर भोज के कल्पना के छोटे-छोटे भगवान् गायब हो जायेंगे—और रहेंगे उनके स्थान पर मदिरा में मत्त अग्नि का खिलवाड़ करते हुए छोटे छोटे दैत्य। तारा और जादव दोनों इसे अच्छी तरह समझते थे। वे चुप थे।

भीलों में महुए की सुरा ने असुरावृत्ति उत्पन्न कर दी थी। वे हाथ में जलती मशाल लेकर नाचते, गाते और प्रलाप करते थे। कोई कहता मैं अमुक का पूर्वज हूँ। अमुक ने मुझे धोखा देखकर मारा है। मै अवश्य बदला लूंगा। उसके समूचे परिवार को कच्चा चबा जाऊँगा। उसका प्रतिद्वन्दी बोलता, तुझ में क्या हिम्मत है जो मेरी संतति को परेशान करेगा मैं तुझे इस मशाल की ज्वाला में भुन दूँगा। इसी प्रकार बात बढते-बढते लड़ाई भी हो जाती। किन्तु नशा समाप्त होते ही झगड़ा समाप्त हो जाता।'

कही झगड़ा और कही गाना बजाना विचित्र दृश्य था गाँव का। जादव ने पहाड़ी की चोटी से नीचे गाँव की ओर देखा। दक्षिण की ओर मशालों का जुलूस जैसा दिखायी दिया। वे उस ओर बढ़े।

कुछ ही गज आगे बढ़े होंगे कि एक भील ने आकर दोनों को रोका। उसका पैर लड़खड़ा रहा था, हाथ मे नगी तलवार थी। उसके निकट पहुँचने पर उसके मुँह से निकलती शराब की दुर्गन्ध का भी आभास हो जाता था।

वह कड़ककर अपनी देशज भाषा में बोला—'रुको'

दोनों रुक गये। तारा ने आश्चर्य से जादव की ओर देखा।

"जो कुछ हो सामने रख दो।" वह पुनः तड़पते हुए बोला।

जादव घोड़े से उतर कर सामने आया। तारा आश्चर्य एवं भय से विकलता का अनुभव करने लगी। भोज भी उस व्यक्ति के हाथ की लम्बी तलवार एवं ऐंठ देखकर सहम गया, किन्तु जादव मुस्करा रहा था मानो उसके लिए यह सब मजाक हो।

जादव ने सिर झुकाते हुए कहा—"हम सब आपकी सेवा में उपस्थित हैं।" फिर वह अत्यन्त निर्भीक भाव से कुछ आगे बढ़ा।

"रुको आगे बढ़ने की कोशिश मत करना। सोचते हो अपनी औरत को छोड़कर भाग जाऊँ...हॉ. .हॉ. .हॉ।" वह जोर से हँसा।

"ऐसे पुरुष को औरत रखने का कोई अधिकार नही जो उसकी रक्षा न कर सके।" उसने अपनी तलवार हवा में घुमायी और फिर नशे में झूम उठा।

जादव अब भी मुस्करा रहा था। एक वृक्ष की छाया में यह घटना हो रही थी, जहाँ चन्द्र की ज्योतित किरणें भी भूल भटक कर पहुँचती थी। इसलिए जादव की मुस्कराहट उस व्यक्ति के लिए अब तक अनजान थी।

वह बोलता गया,—"भील बिना परिश्रम के कुछ भी नहीं लेता। सिंह वृत्ति से जीविका ग्रहण करना उसका काम है। तुम्हें जीवित छोड़कर हम तुम्हारा कुछ भी नहीं लेना चाहते। तुम सब मरने के लिए तैयार हो जाओ। मुझे अपना कर्त्तव्य पालन करने दो।"

जादव अब भी मुस्करा रहा था। उसने तारा को घोड़े से उतरने का संकेत किया। तारा काँप उठी। हे भगवान क्या होने वाला है? फिर भी उसने जादव की आज्ञा का पालन किया। किन्तु उसका रहस्य समझ न सकी।

"किन्तु सरदार, मरने के पहले एक प्रार्थना करना चाहता हूँ।" जादव उस व्यक्ति से विनम्र बोला।

"बोलो क्या चाहते हो?" बड़ी शान से उसने कहा।

"यहाँ के 'गमेती'* से मिलना।"

'गमेती' शब्द सुनते ही उसके नसों में जैसे बिजली कौंध गयी। उसका नशा कुछ फीका पड़ा। वह विस्मय से बोला—'क्यों?'

गमेती मेरा साथी है, बचपन का साथी। यह इच्छा है कि एक बार मरने के पहले अपने उस बचपन के साथी से तो मिल लूँ।'

"अरे मेरे गाँव का सरदार इसका साथी!' भील प्रहरी के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह अप्रत्याशित भय से काँप उठा। उसने तलवार नीची की और जादव के चरणों की ओर बढ़ा,—बोला—क्षमा कीजिए। मैंने आपको पहचाना नहीं, मुझसे भूल हो गयी।

तारा यह नाटकीय परिवर्तन समझ न सकी। उसने देखा, कड़कती बिजली एक दम पानी बन गयी।'

जादव जोर से हँसा। 'कोई बात नहीं तुमने कोई नयी बात नहीं की...। यदि आज्ञा हो तो हम लोग घोड़े पर सवार हो जायें।'

* गमेती—भीलों के गाँव के मुखिया को कहते हैं।

युवक झेंप गया। कुछ बोल न सका। हाथ जोड़कर खड़ा रहा। ग्लानि और लजा से भीगी हँसी अधरों से टपक रही थी।

'अच्छा नमस्कार। गमेती के निवास स्थान पर पहुँचने के लिए किस मार्ग से जाना होगा ?'

पहले वह मारे लज्जा के कुछ बोल न सका। बायी ओर जाने वाले मार्ग पर उसने संकेत किया। फिर अपने को सभाले हुए बडी सावधानी से बोला—"दो घडी के बाद दूसरा आदमी पहरे पर आ जायगा। यदि आप रुक जाये तो मै आपको वहाँ तक पहुचा दू।"

'नही, ऐसा सम्भव नही। मुझे जल्दी पहुँचना है।'—जादव ने कहा। आदमी ने पुनः नमस्कार किया।

घोड़े आगे बढे। तारा को इस नाटक पर आश्चर्य था। वह बोली—

"यह बड़ा विचित्र लुटेरा था।"

"लुटेरा नही, पहरेदार था।"

"किन्तु उसने व्यवहार तो लुटेरे का ही किया।"

"यह तो उसकी जातीय विशेषता है। लूटना और खाना प्रत्येक भील का कार्य है।"

"..इस उत्सव के समय भी पहरेदार इतना सजग है आश्चर्य।"

"सजग रहना तो उनका जन्मजात गुण है। ऐसे कई पहरेदार इस पहाड़ी पर होंगे, सब में ऐसी ही सजगता दिखायी पड़ेगी।"

"हे भगवान एक विपत्ति तो टली। अब क्या और विपत्तियाँ आने वाली हैं ?"

तारा के भय मिश्रित आश्चर्य पर जादव हँसा। बोला,—"ये पहरेदार पहाडी के ऊपरी सिरे पर ही रहते हैं। हम लोग गाँव की ओर उतर रहे हैं। अब ऐसी किसी आपत्ति की आशंका नहीं।"

तारा को जैसे राहत मिली। पहाड़ो की असमतल उतराई घोड़ों के लिए उतनी घातक नही जितनी आज की दूध से धुली चॉदनी। इस चॉदनी में गढे खन्दक सभी ऊँचाई से देखने पर समतल ही मालूम पड़ते थे। बड़ी सावधानी से चलना था। जादव आगे-आगे रास्ते का अन्दाज लगाकर चलता था। तारा पीछे-पीछे थी।

सॉप जैसा टेढा-मेढा रास्ता कभी मखमली घास के बीच से और कभी घने वृक्षो की शीतल छाह मे से होकर जाता था। यों तो उतराई अधिक नही थी, किन्तु मार्ग चक्करदार था। इससे मीलो की दूरी तय करनी पड़ी। गति मंद होने के कारण अधिक समय लगा।

निश्चित योजना से लगाया सघन वृक्षो का यह एक बन है। जादव यहॉ आने के बाद रुका और घोड़े से उतर छोटे-छोटे पत्थरों के टुकड़ो के ढ़ेर से बने एक छोटे टीले की ओर गया। टीले के ऊपर एक बड़ा पत्थर लगा था। तेल में सिन्दूर मिलाकर उस पत्थर पर कुछ अंकित था, जो चॉदनी में साफ दिखायी नही देता था।

टीले की ओर बढते हुए जादव ने तारा को भी घोड़े से उतरने का संकेत किया। तारा ने छाती से चिपके भोज को हिलाया और पुकारा—'भोज।'

वह सो रहा था। जिस समय पहला पहरेदार उसे मिला था, उसी समय से वह सो रहा था। उसकी निंद्रा प्रगाढ थी। वह जाग न सका। एक बार 'हुँ' करके पुनः चुप हो गया। उसे छाती से चिपकाये वह उतर कर जादव के पास गयी।

जादव ने जमीन से दो पत्थर के टुकड़े उठाए। एक टुकड़ा तारा को देते हुए कहा—'इसे उस टीले पर फॅक दीजिए।' अजीब बात थी, तारा कुछ समझ न सकी, फिर भी उसने कुतूहल वश फेंक दिया। इसके बाद जादव ने उस टीले को श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया और अपने हाथ का पत्थर

उस पर फेंका। फिर वह अत्यन्त पूज्य भाव से घोड़े की ओर बढा—'अब चलिए .....।'

तारा इस समय एक ऐसे संसार में थी, जिसका प्रत्येक कण उसे रहस्य एवं कुतूहल से भरा मालूम पडता था। पग-पग पर उसके मनमें प्रश्न उठते थे। प्रत्येक के सम्बन्ध में जिज्ञासा थी। किसके सम्बन्ध में पूछे और किसके सम्बन्ध में न पूछे। किन्तु इस बार तो उसका पूछना जरूरी था। जादव भी प्रतीक्षा कर रहा था, आखिर अब तक तारा बोली क्यों नही, किन्तु मौन उस समय भंग हुआ जब तारा ने कहा,—'इस प्रकार उस टीले पर पत्थर फेंकने का प्रयोजन ?'

जादव ने सामान्य ढंग से कहा—'वहां धरती के नीचे प्रेत आत्मा सो रही है। जिनकी अकाल मृत्यु होती है भील उसे धरती में गाड देते हैं। उसकी समाधि पर एक पत्थर भी लगा दिया जाता है जिस पर सिन्दूर से मृत व्यक्ति की आकृति बनी रहती है। इसे यहाँ की भाषा में 'पालिया' कहते है। 'पालिया' के पास से निकलने वाले प्रत्येक राही का कर्त्तव्य होता है कि वह एक पत्थर का टुकड़ा उस पर फेंके। लोग कहते हैं कि ऐसा करने से वह प्रेतात्मा धरती के नीचे से निकल नहीं पाती। बराबर पत्थर से दबती ही जाती है।

'और मान लीजिए यदि प्रेतात्मा उसके नीचे से निकल आये तब क्या होगा ?' तारा ने हँसते हुए पूछा।

'अरे तब तो अनर्थ हो जायगा, पूरे गॉव का विनाश ?' जादव ने कहा।

'तब तो भील यह विश्वास करते हैं कि जीवित-तन में जो शक्ति नही रहती वह शक्ति मृत शरीर में होती है।'

'जी हाँ।'

तारा हँसी—'तो क्या प्रत्येक राही ऐसा करता होगा ?'

"जी हाँ।"

"तब तो इस पर पत्थर फेंकते फेंकते एक दिन अवश्य ऐसा आयेगा, जब पहाडी समाप्त हो जायेगी और यहाँ एक दूसरा ही पहाड नजर आयेगा।"

तारा जोर से हँसी। जादव को यह व्यंग्य अच्छा नही लगा। इसमें उसे अपने जातीय अपमान की गन्ध मालूम पडी।

जिस टीले को जादव के विश्वास की आँखो ने अत्यन्त पूज्य भाव से देखा था उसे तारा के आश्चर्य एवं परिहास भरी आँखो से निहारा। दृश्य एक था, पर दृष्ट दो थे और दोनों की दृष्टि में किसो प्रकार का सामंजस्य नही था।

विश्वास और तर्क में आग और पानी का अन्तर है। जादव के लिये यह विश्वास धर्म की परिधि के भीतर आ चुका था। वह अपने धर्म का अपमान सह नही सकता था, किन्तु चुप ही रहा। तारा ने उसकी मनः स्थिति का अनुमान लगा लिया। सोचा जब यहाँ रहना है तब सबसे मिलकर ही काम चलाना होगा। इसलिये यहाँ का रीति रिवाज भी जानना जरूरी है। ऐसा जादव को खेद पहुँचा कर सम्भव नहीं।

वह अत्यन्त गम्भीर हो विनम्रता से बोली—"तब तो इन पालियो की पूजा भी होती होगी।

उसने सिर हिलाकर कहा,—'हाँ यहाँ मेला भी लगता है। आज के दिन तो इसका विशेष महत्व है।'

उसने अपने को नियन्त्रित करते हुए कहा—'यह हमारा बड़ा भाग्य है जो हम इस अवसर पर यहाँ आये हैं।'

घोड़े आगे बढ़े चले जा रहे थे।

× × ×

जिस समय ये गमेती के द्वार पर पहुंचे उस समय कुछ व्यक्ति नाच-नाचकर विचित्र ढंग से ढोल बजा रहे थे। ऐसी ढोल जन्म के समय ही बजाई जाती है, जिससे आस पास के भीलो को समझते देर न लगी कि उनके सरदार के घर लड़का हुआ है। रस्म के अनुसार लोग भेंट देने के लिये सरदार के द्वार पर ही उपस्थित होने लगे। जादव को पूछने पर मालूम हुआ कि गमेती को पुत्री हुई है। और वह अपने गुरु को बुलाने गया है। दोनों दरवाजे से हटकर कुछ दूरी पर एक पेड के नीचे घोडे से उतरे।

इधर भीड़ बढती गयी। प्रत्येक 'फलो' से बड़े बूढे गमेती के द्वार पर आये। अपने गुरुजी को लेकर शीघ्र ही गमेती भी आ गया। यो तो भीलो में लड़की पैदा होना अधिक महत्त्वपूर्ण नही समझा जाता फिर भी इस समय सभी प्रसन्न थे। आज के इस मस्त वातावरण में और भी मस्ती आ गयी थी।

मदिरा मे बेसुध लोगो का अपनी भी सुधि न थी, फिर जादव और तारा की सुधि कौन लेता। वे पेड़ के नीचे ही घोडे बॉध कर विश्राम करने लगे। जादव ने इस भीड मे गमेती से मिलना ठीक न समझा।

सामने मखमली घास पर भोज को लिटा कर तारा एक वृक्ष के मोटे तने का सहारा लेकर बैठ गयी। जादव घोडे को लेकर घास पर टहलने लगा। घोड़ा मुलायम घास धीरे-धीरे चर रहा था और वह उसकी पीठ थपथपाता जाता था।

जब जादव टहलता-टहलता तारा के पास आया तो तारा अंगड़ाई लेते हुए बोली—'आखिर कब तक राह देखी जायगी। जरा आप बढकर देखें, यदि मौका हो तो मिल लिया जाय या अलग बुलाकर ही बातें कर लीं जाय।'

'पर अभी ऐसा मौका नहीं। अभी तो लोगों का आना आरम्भ हुआ। दो-तीन घण्टे ऐसे ही चलेगा। लोग आवेंगे 'गमेती' को उपहार

देंगे। वह उन्हे जलपान करावेगा और शराब पिलावेगा। तब कहीं वें हँसी, मजाक और हुल्लड़बाजी के बाद लोग जायेंगे।'

'तो जब इनके यहाँ बच्चे होते हैं तब ऐसा ही होता है।' तारा ने पूछा।

'होता तो ऐसा ही है, पर आज कुछ विशेष है। आज जो त्योहार ठहरा। ऐसा विश्वास किया जाता है कि आज दिन यदि किसी को लड़का पैदा होता है, तो उसके घर मे कोई महान और बहुत पवित्र आत्मा आती है। इसी से ऐसी खुशी और प्रसन्नता प्रदर्शित की जा रही है। . .अरे अभी बहुत दिनो की बात नही है जब देव जन्मा था तब भी मै यही था। कोई ऐसी बात तो नही थी''

'देव कौन?'

'देव गमेती का विचला लड़का है। बड़ा लड़का है बाली।'

'यदि ऐसी बात है तो हम लोगो को भी देखना चाहिए।' इतना कहकर तारा उठ खडी हुई। ये लोग गमेती के घर से दूर और एक किनारे पर थे, वरन् यह कहूँ कि रास्ते से भी हट कर थे तो भूल नही होगी। बहुत कोशिश करने पर भी यहाँ से गमेती के द्वार पर होने वाला कृत्य बिल्कुल नही दिखायी पड़ रहा था।

जादव ने तारा से कहा—'पर मेरे लिए तो कोई नयी बात नही है, हाँ, आपके लिए यह अब अवश्य कुतूहल पूर्ण होगा।...त चलिए फिर चला ही जाय।'

घोड़े वही बाँध दिये गये और लोग पैदल ही चले। इस बार भोज को जादव ने उठाया।

घर के निकट आते ही ढोल पर गाती हुई महिलाओं का मधुर स्वर सुनायी पड़ा—

'आंगण रे बीरा रोख घणा को
जै छड देखूं र.मेरो भातइ!

(मेरे आँगन में घणों का पेड़ है, उस पर चढ़कर मैं अपने भाई को देख रही हूँ ।)

सुनते ही जादव बोला—'देखा आपने ! यह गीत भी उस समय गाया जाता है जब पहलौठा बच्चा होता है और भाई उसे कपड़े पहनाने आता है ।. .पर इस समय गाया जा रहा है ।'

'गमेती इसे पहलौठा बच्चा से भी बढ़कर समझता होगा ।' तारा ने कहा ।

'तभी तो ।' इतना कहकर वह कूदा और एक बड़ा सा गड्ढा पार कर गया । तारा ने भी उसका अनुकरण किया । गीत का मधुर स्वर अब कुछ तीव्र सुनायी पड रहा था—

काकी भी आई मेरी ताई भी आई,
वा मेरी जामण घर रही ।
हिवड़ा रै समझाव र राखूं,
नैण झडन्ता रै लोगी ना रह्या ।

(हाय ! मेरी चाची भी आई और ताई भी आई, परन्तु मेरी माता तो घर ही रह गई । मैं अपने हृदय को तो किसी प्रकार संभाल लूंगी, परन्तु इन आँखों को कैसे समझाऊँ जो मूसलाधार बरस रही हैं ।)

दोनों चुपचाप गमेती के घर के पिछवाड़े की तरफ खड़े होकर देखने लगे । प्रत्येक ने शक्ति के अनुसार इस शुभ अवसर पर अपने सरदार को भेंट दी । तलवार, कृपाण, भेड, शराब कौडी और घुमची की मालाएँ—सब कुछ भेंट में मिलीं । आज कौन सी मृतात्मा शरीर धारण कर आयी है, इस विषय की चर्चा आपस में खूब जोरों से हो रही थी । इस बहस में कभी जोर की हँसी होती, कभी हो हल्ला, कभी कुछ गरमी आ जाती और एक दूसरे पर तड़प उठता । शराबियों की बहस में जो कुछ होता है वह सब हो रहा था । खूब शराब पीयी जा रही थी,

दो घन्टे तक यह सब चलता रहा। धीरे-धीरे लोग लौट गये। आकाश का चन्द्रमा जिसके जीवन मे इस तिथि को चमकना ही लिखा है, चमक रहा था। इसके बाद कामदिया भाट काठ का घोड़ा लेकर आया और गमेती के द्वार पर रखकर शीतला माता की स्तुति करने लगा। माता सबका कल्याण करें।

जादव उपयुक्त अवसर समझ कर सरदार से मिलन आया, पीछे की ओर आकर वह तलवार देते हुए बोला—'यह मेरी भेंट भी स्वीकार करो सरदार।" सरदार हक्का बक्का सा देखता ही रहा। फिर उसने तारा की गोद से भोज को लेकर सरदार को देते हुए कहा—"यह सम्मानित और महत्वपूर्ण भेंट महाराजा महेन्द्र की ओर से आपको दी जा रही है।"

'गमेती' को पहले तो लगा जैसे वह स्वप्न देख रहा है। वह शीघ्र कुछ समझ नही पाया। जब भोज को उसने अपनी गोद मे ले लिया, तब उसकी चेतना ने जादव को पहचाना। भोज का मस्तक चूमकर उसने जमीन पर खड़ा कर दिया, फिर जादव को छाती से लगाया, कुशल क्षेम और आने का कारण और अत्यन्त रहस्य दृष्टि से तारा की ओर देखता रहा।

जादव ने उसे दरवाजे से अलग बुलाकर आदि से अन्त तक सारी कहानी सुना दी। बड़े ध्यान से वह सुनता रहा, फिर मुस्कराता लौटा, तारा के चरण छूए और कहा—। 'मेरा बडा भाग्य है कि आज आप मेरे द्वार पर पधारी हैं। सचमुच मेरे घर कोई पवित्र आत्मा आयी है नही तो भला आप लोगों का दर्शन होता।. .मेरे दरवाजे पर राज पुत्र आया. . ओ ऽ ऽ . . मेरा भाग्य' मारे खुशी से जैसे वह उछल पडा।

तारा संकोच से जैसे सिकुड़ गयी। उसके अधरो की लाज भरी मुस्कान चाँदनी की मुस्कराहट से कम नही थी।

जादव बोला—"सरदार भेंट में मिली वस्तु प्राण से भी अधिक प्यारी होती है। जान देकर भी उसकी लोग रक्षा करते है।"

"इसमें क्या सन्देह ?"

"तो क्या मैं यह आशा करूँ कि मेरी दी गयी भेंट की रक्षा भी आप अपने प्राण की तरह करेंगे ?"

"अवश्य जादव, भोज अब हमारे लिये उतना ही प्यारा है जितना वालो और देव। अब तक मेरे दो ही पुत्र थे। अब इसे लेकर तीन हो गये। इनकी रक्षा में कुछ भी उठा न रखना तो हमारा धर्म है।"

"मुझे आपसे ऐसी ही आशा थी।" इतना कहकर जादव ने भोज को उठाकर चूम लिया और बोला—"भोज यहाँ तुम्हारे दो अच्छे दोस्त मिलेंगे।"

'अच्छा' प्रसन्नता में उसके दाँत खिल गये। वह बाल सुलभ स्वर में बोला—"आपने कहा था कि छोटे से भगवान मिलेंगे।" तारा तथा जादव हंस पड़े। गमेती के लिए यह रहस्य अबुझ था।

"हाँ हाँ जरूर मिलेंगे। देखोगे अपने छोटे से भगवान् को ?" जादव ने कहा। भोज ने सिर हिलाकर कहा—'हां'

जादव ने गमेती से संकेत से कुछ कहा। उसने भोज को उस कमरे में भेजवा दिया जहाँ उसकी प्रसूता स्त्री बिस्तर पर पड़ी कराह रही थी। बगल में छोटा सा शिशु रो रहा था। भोज ने छोटे से भगवान् को 'किहां किहां' करते देखा।

१

वर्ष के कई चरण पाराशर को रौंदते चले गये। नौ बार इस मौजी ग्राम पर बसंत मुस्कराया। इस बीच परिवर्तन ने अपना परदा गिराया भी, उठाया भी। बालक जवान हुए। जवानो के श्याम केशों पर शरद की चाँदनी जमने लगी। इन दिनों मे अनेक वृद्ध शोकाकुल वातावरण में अपने सगे-सम्बन्धियों को रोता छोड़ कर संसार से चले गये।

रोज सबेरा होता है। रोज शाम होती है। रोज रात आती है। दिन वैसे ही निकलता है, बढता है, चढता है, और ढल जाता है। उसमें कोई परिवर्तन नही होता, पर धीरे-धीरे सब कुछ बदल जाता है—और इतना बदलता है कि अनुमान लगाना भी कठिन हो जाता है। पहले जिसने तारा को देखा है—आज वह उसे फिर देखे तो बिल्कुल पहचान

नही सकेगा। अब तो वह बूढी दिखायी देती है। आकृति पर अनेक झुर्रियाँ पड़ गयी हैं। आँखें भी अपने चारो ओर गढे बनाने लगी है। बाल आधे से अधिक सफेद हो गये। कोई कह नही सकता था कि इतने कम समय में ही वह इतनी बदल जायगी। सचमुच उस फला के सभी लोगो को आश्चर्य था कि 'माता जी' (उस 'फला' के सभी लोग उसे 'माता' कह कर ही सम्बोधित करते थे) का स्वास्थ्य इतनी जल्दी-गिरता क्यो जा रहा है।

एक दिन जब जादव आया था और 'गमेती' के सामने आश्चर्य के साथ उसने तारा से यही प्रश्न किया तो तारा ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया था—'क्या कहूं, सरदार मै बूढी न बनूं तो क्या करूं? यहाँ सभी लोग मुझे 'माता' कहते हैं।' इतना कहने के बाद वह गमेती की ओर सकेत कर पुनः बोली थी—'जब ऐसे बुजुर्ग लोग भी मुझे माता कहेंगे, तब तो हमे बूढी बनना ही पड़ेगा।' तारा की बात पर सभी हंस पडे थे।

'अच्छा जी, तो आप बूढी हैं नही, बूढी बनी है।' इस बार ता और जोर की हँसी हुई थी।

तारा का यहाँ बडा सम्मान था। फला के लोगो की शिक्षिका थी। किसी बात पर जब धार्मिक व्यवस्था की आवश्यकता होती ता लोग व्यवस्था उससे लेते थे। उसे सब पूज्य मानते थे। कोई भी प्रत्यक्ष रूप से विवाद नही करता था। यह तो जादव था जो इस तरह की बातें हो गयी।

तारा चाहे जो कहे, पर सब समझते थे कि जिस वैभव और ऐश्वर्य में उसका जीवन बीता है उसका रंच-मात्र भी इस जंगल मे उपलब्ध नहीं है। फिर नाना प्रकार की चिन्ताएँ भी रहती हैं। इसीसे उसका स्वास्थ्य ऐसा बिगडता जा रहा है। लोग भरसक प्रयत्न करते है कि उसे किसी प्रकार का कष्ट न हो, पर ऐसा सम्भव कहाँ? राजकीय उपवन की फूली फली

डालियो पर चहकनेवाली वह सारिका आज जीवन के उजाड खंड मे बैठकर कंकड़ बीन रही था ।

फिर भी वह प्रसन्न थी । उसे केवल इस बात पर प्रसन्नता थी कि उसने अपना उत्तरदायित्व अच्छी तरह निबाहा है । इतने दिन हो गये पर भोज को किसी ने नही जाना । ईडर में भी शान्ति है । वहाँ से तो आये दिन लोग आते ही रहते है, पर कोई विशेष बात तो नही लगती । अब आग राख के नीचे दब गयी । कोई बात नही । यदि भगवान् ने चाहा तो एक न एक दिन वह ज्वालामुखी बनकर अवश्य फूटेगी । तारा ऐसा ही कुछ सोचती है ।

और भोज, वह भी अपने को बहुत कुछ भूल चुका है । याद करने पर भी बड़ी कठिनाई से कुछ बाते उसे याद आती है । वह भी बहुत धुँधली-धुँधली, जैसे घने बादलों के भीतर कोई टिमटिमाता तारा दिखाई दे रहा हो । उन याद आयी बातो में वह कोई संगति भी मिला नहीं पाता । तारा उसे ऐसा अवसर ही नही देती कि वह अपने पिछले जीवन के सम्बन्ध में कुछ सोच सके । दिन भर उसे व्यस्त रखती है । ब्रह्म मुहूर्त मे ही उसे वह जगाती है । फिर तुरन्त स्नान कर वह सन्ध्या पूजा पर बैठ जाता है कभी-कभी जब रात में वह अपने मित्रों के साथ अधिक देर तक नॉच गाने की मस्ती में जाग जाता है, तब उसकी नीद प्रातःकाल नही खुलती । तारा जगाते-जगाते परेशान हो जाती है, पर भोज बिस्तर छोडने का नाम नही लेता । तब कभी-कभी खीझ कर वह दो एक हाथ जमा भी देती है । वह भुनभुनाता उठता है—'मॉ तू तो परेशान कर देती है । अभी से जागकर क्या होगा ? देख कितनी रात है ।'

तब तारा उसे छाती से लगा लेती और पुचकारते हुए बडे प्यार से कहती—'बेटा अब रात कहाँ है । घडी भर में तो पौ फटेगी । यह ब्रह्म बेला है । इसमें सोने से बुद्धि खराब होती है ।' मॉ का यह मीठा उपदेश

सुन कर भोज भुन-भुनाकर रह जाता है और अपनी दिनचर्या में लग जाता ।

उधर आकाश मे शुक्र निकलता और इधर भोज सन्ध्या-पूजा और भोजन से निवृत्त होकर अपनी मोटी लाठी उठाता । वंशी लेता । तारा के चरण छूता । तारा उसे छाती से लगा कर चूम लेती और पुराने कपडे मे बाँध कर रोटियाँ देते हुए कहती,—'देखो बेटा, सन्ध्या को जल्दी ही लौटना !. और जहाँ तक हो बाली और देव के साथ ही रहना ।. .... समझा ?' ये बंधे हुए शब्द थे जिसे गाय चराने जाते समय तारा नित्य ही भोज से कहती थी । माता का ममता भरा हृदय बालक को अबोध शिशु ही समझता है चाहे वह कितना ही बडा क्यों न हो जाय । तारा का मोह अब भी उसे बालक ही समझता था, यद्यपि अब वह १२ वर्ष से अधिक का हो चला था । पर लगता था जैसे सोलह-सत्रह वर्ष का जवान हो । भीलों के बीच रहने पर भी वह अपने गौर वर्ण, प्रशस्त ललाट, पुष्ट स्कंध के कारण उनसे बिल्कुल भिन्न दिखायी पडता था जैसे कोयले की खान मे कोई हीरा हो । जब गाय चराने जाते समय वह बड़ा डण्डा कन्धे पर रखता, फटे और मटमैले कपडे को सिर पर लपेटता और घुटने तक ऊंची धोती पहनकर वंशी बजाता चल पड़ता तब गाँव भर के लोग उसे देखते रह जाते ।

जब भोर का पहला तारा अपनी आभा बिखेर कर धरती पर चू पड़ता तब वह घर से निकलता और प्रत्येक द्वार से लोगों की गाय लेता और जंगल की ओर चला जाता । जिधर भी जाता उधर प्रशंसा होती । जवान, वृद्ध, युवा सब एक स्वर से कहते,—'भगवान लड़का दे तो ऐसा दे कि देखकर जी खुश हो जाय ।' कोई कहता 'बेचारी को एक ही लड़का है । जैसे शीतला माता ने दिया है वैसे वह उसे जिलावे ।' जवान लडकियाँ तो बहुधा उसके सम्बन्ध में चर्चा ही किया करती थी । कोई कहती—'देखो जी कैसी अच्छी वंशी बजाता है ।' कोई कहती—'अरे जी तुम केवल कान

से ही सुनती हो, आँखो से भी देखा है। कितना सुन्दर है।' और किसी किसी के मुख से तो उसे देखकर केवल एक 'आह' निकलती है, जो धीरे से आकाश के हृदय में विलीन हो जाती, जिसे न कोई देख सकता, न सुन सकता। वह वृद्धों के लिए गौर-वर्ण का श्याम था। युवको के लिए वह वशी वाला राम था। वयस्क लड़कियो के लिए अंग वाला अनंग था। पर वह क्या है—उसे केवल गमेती और तारा के अतिरिक्त उस ग्राम का और कोई नही जाता था।

तारा उसके निर्माण मे कुछ उठा नही रखती। वह स्वयं उसे शास्त्र की शिक्षा देती है। शस्त्र की शिक्षा देना 'गमेती' के जिम्मे है। उसने उसे धनुर्विद्या में प्रवीण कर दिया है। भाला और तलवार चलाना भी वह अच्छी तरह जानता है। उसकी बुद्धि कुशाग्र है, हर वस्तु को आसानी से अच्छी तरह समझ लेता है। पर अभी उसमे लड़कपन है। कभी-कभी अपने मन की जिद या अल्हड़पन में कुछ न कुछ अंड-बंड कर ही बैठता है।

अभी कल की बात है।

भोज प्रातःकाल अधिक देर तक सो गया। तारा ने उसे कई बार जगाया पर वह नही उठा। यो ता रात को अपनी मंडली में हुड़दगा मचा कर अधिक देर से नहीं आया था, फिर भी वह अभी तक सो रहा है। क्या बात है? रोज तो समय से ही उठ जाता था। उसे विशेष जगाने की भी आवश्यकता नही पड़ती थी—आज क्या बात है?—तारा सोचने लगी। वह पुनः भोज की खाट के पास गयी। उसकी खाट खुली दालान में बिछी थी। प्रातःकालीन वायु मंद-मंद बह रही थी। भोज खर्राटे लेता पड़ा था। वह निर्विघ्न सो रहा था। तारा ने आकाश की ओर देखा—धीरे-धीरे आकाश पर सफेदी चढ़ रही थी। दूर के कुएँ पर कोलाहल सुनायी पड़ रहा था। लगता है वहाँ काफी भीड़ हो गयी है। तारा की निगाह पुनः भोज की ओर गयी। सोचा तबीयत तो खराब

नही है। उसने शरीर छूकर देखा। ऐं कुछ मालूम तो नही पड़ता। फिर झकझोर कर जगाया—'क्या बात है बेटा, उठो। देखो कितना सवेरा हो गया।.. आज सन्ध्या-पूजा नही करोगे क्या ?'

उसकी नीद टूटी। उसने आकाश की ओर देखा और अनुभव किया कि सचमुच देर हो गयी है। फिर तारा को प्रणाम कर अंगडाई लेते हुए बोला,—'माँ तू तो सोने में भी आफत कर देती है ?'

'अरे अब कितना सोयेगा, बेटा. .उठ तो। जल्दी से स्नान कर सन्ध्या पूजा करो।'

'मै सन्ध्या नही करूँगा। मुझे थोडा और सो लेने दे।' इतना कह कर उसने करवट बदल ली।'

'अरे ऐसा क्यों बेटा।' उसने आश्चर्य से चकित होकर कहा। उसे ऐसा लगा जैसे उसकी शिक्षाओं का भोज पर कोई गहरा असर नही पड रहा है। उसे अपनी इस असफलता पर बड़ी चिन्ता हुई। उसने अब उसे और भी झकझोर कर उठाया। वह उठ बैठा। दौडकर वह पानी ले आयी। उसका मुँह धुलाया और फिर बोली—'देखो बेटा ऐसा कभी मत कहना कि मैं सन्ध्या नहीं करूँगा।' तारा ने बड़ी गम्भीरता से उसे साव-धानी करते हुए कहा मानो वह किसो बहुत बडे रहस्य की ओर संकेत कर रही हो।

'क्यों माँ क्या सन्ध्या करना बहुत जरूरी है ?' भोज ने वैसे ही अल्हड़पन में पूछा।

'हाँ बेटा,...तुम ऐसी बात क्यो करते हो ? आज तुम्हे क्या हो गया है ?' सचमुच तारा को आज भोज पर विस्मय था। वह पुनः बोली,—'कल तुम गये कहाँ थे आखिर ? रात को भोजन भी नहीं किया। जल्दी सो भी गये ? फिर भी तुम्हारी नीद नही खुल रही है।' इस बार उसकी आवाज पहले से कड़ी थी।

भोज का दिमाग अब कुछ ठिकाने आया। पर पता नही क्यो वह चुप था।

तारा इस बार कड़की—'बोलते क्यो नही ? चुप क्यो हो ?'

भोज की अब हिम्मत नही कि चुप रह जाय उसने बड़ी दबी जबान में कहा,—'कल बाली के साथ दूसरे 'फला' में गया था।' इतना कहने के बाद चुप हो जमीन देखने लगा।

'किसके यहाँ ?'

'सोमरन के यहाँ। उनके लड़के को लड़का हुआ था।'

'तो तुमने वही खाया भी ?'

'हाँ और. पी. या. भी।' बहुत ही धीरे से और दब कर अपराधियो जैसी आवाज मे वह बोला।

'हाँ . हाँ, वह तो मैं समझ ही गयी।. .नही तो तुम्हारी बुद्धि इतनी भ्रष्ट न होती . मैने कई बार कहा है कि यह अवस्था तुम्हारी शराब पीने की नही है, पर तुम मानते ही नही हो. .तो भोगोगे भोज। मै फिर एक बार कहे देती हूँ कि यदि तुम मेरी बात नही मानोगे तो मै कही चली जाऊँगी।' बस तारा के पास यह अन्तिम अमोघ अस्त्र था जिसे वह शायद कभी-कभी ही छोड़ती थी जब समझ जाती थी कि अब भोज नही मानेगा।

इतना कहना था कि भोज हाथ जोड़कर बड़े द्रवित स्वर में बोला—, 'माँ तुम कही मत जाओ अब मै कभी ऐसा नही करूँगा ?' फिर चुपचाप निगाह नीची किये खड़ा रहा। पुनः तारा बोली,—'अच्छी बात है ..चलो स्नान करो।' भोज स्नान करने के लिए बढा, किन्तु तारा उसे रोकते हुए पुनः बोली,—'देखो अब कभी मत कहना कि सन्ध्या नही करूँगा।...सुना।'

'जैसे स्नान करने से तुम्हारा शरीर स्वच्छ होता है, उसको बल मिलता है वैसे ही सन्ध्या करने से मन शुद्ध होता है, आत्मा को बल मिलता

है।...और मन की शुद्धि तन की शुद्धि से कही अधिक आवश्यक है।... पता नही सन्ध्या न करने का गंदा विचार तुम्हारे मनमें कैसे उठा ?'

'यो ही माँ। मैने सोचा कि यहाँ तो कोई सन्ध्या नही करता तो फिर मै ही क्यो करूँ।'

'पर बेटा, तुम्हें तो राजा बनना है। तुम राजगद्दी के मालिक होंगे। ऐसे ऐसे हजारो लाखो 'फला' तुम्हारे शासन में होंगे।.. भला यहाँ का और भी कोई राजा बन सकता है। तब तुम अपनी बराबरी दूसरो से क्यो करते हो ?' तारा ने भोज को उसके सुनहले सपने की याद दिलायी और वह उसमे खो गया।

एक वीर-माता जैसे अपने पुत्र मे सदा महत्वाकांक्षा का बीजारोपण करती है, वैसे ही तारा भी सदा उसे याद दिलाती रहती है कि तुम्हे राजा बनना है।

दोपहर होते-होते भोज अपनी गायों को लेकर जंगल में पहुँच जाता था। यह जंगल 'फला' के पाँच छः कोस उत्तर में पड़ता है। इस फला के कुछ भील भी अपनी भेड़े लेकर इसी जंगल में पहुँचते हैं। पश्चिम की ओर निकट ही एक दूसरा जंगलों का खंड और भी है, अधिकांश लोग उधर चले जाते है। पर यह जंगल कुछ उजाड़ हैं, एक बड़ा चराहगाह समझिए। जानवरो के पानी पीने के लिए भी यहाँ कोई प्राकृतिक व्यवस्था नही है।

बाली और देव दोपहर के आसपास ही जंगल में भोज से मिल जाते हैं और फिर दोस्तो का दोस्ताना रंग जम जाता है। न बाली और देव को अपनी भेड़ो की धुन रहती है और न भोज को अपनी गायो की। तीनों मिलकर आसपास के किसी घने वृक्ष के नीचे बैठ जाते है और दोपहर का भोजन करते हैं। खाते तो तीनो अपना भोजन अलग-अलग हैं, पर करते

हैं सब साथ और आपस में बाँट कर। फिर लगती है आपस में गप्पें लड़ने। इसके बाद कभी तीनों पत्थर की छोटी-छोटी गोटियो का खेल खेलते है।' कभी भोज बंशी बजाता है और दोनो आराम से वृक्ष के तने के सहारे लेटकर आनन्दपूर्वक सुनते है। और नही तो इधर उधर की बातों मे दोपहरी बीत जाती है। इनकी बातों का विषय बड़ा विचित्र होता है। कभी भूत प्रेत की चर्चा होती। कभी इस पर बातें चलती कि शीतला माता की सवारी 'फला' में किन-किन पर आती है। कभी बाली शिकार की अद्भुत चमत्कार पूर्ण कहानी कहता। पर ये सारे विषय उनकी बातचीत मे गौण स्थान ही पायेंगे। मुख्य स्थान उन बातों का रहता जिनमे वे अपने समवयस्कों की आलोचना करते। अमुक लडका क्या कहता है। वह हमारे गोल का है या नही। अमुक लडकी कैसी हँस मुख है। रोज रोक कर किसी न किसी बहाने बात तो कर ही लेती है और भोज को वह कैसी मुस्कराती नजर से देखती है।

इनके अतिरिक्त कभी-कभी शिकार का भी कार्य क्रम बनता है। यह कार्य क्रम एक दिन पूर्व ही निश्चित किया जाता है, जिससे दूसरे लोग अपने-अपने घरो से धनुष-बाण लेते आते है। दोपहर के भोजन के पश्चात् यह तय होता है कि किधर शिकार के लिए चला जाय।

आज भी शिकार खेलने का ही कार्यक्रम था। भोजन समाप्त कर बात छिड गयी कि आज किधर चला जाय।

'समय तो डेढ दो घन्टे जरूर लग जायेंगे, पर मेरा विचार है कि साधु मढी की ओर चला जाय, उधर मृगों का झुण्ड का झुण्ड मिलेगा।' बाली ने कहा।

'पर मै इतना चल नही सकता, आज मेरे पैर मे चोट है।' भोज ने दाहिना घुटना दिखाते हुए कहा। 'कैसे चोट लगी भाई।' दोनों ने बड़े गौर से देखा।

'वह सामने जो धौरी गाय चर रही है न। उसी को बचाने के फेर मे गिर पडा। नही तो वह कूएँ मे गिर जाती। उस समय तो कुछ मालूम नही पडा, पर इस समय पीडा हो रही है।'

'धे. तुम भी क्या कहते हो भोज। जरा सी चोट है और चला नही जायगा। रुको तुम मै अभी आता हूँ।' इतनी कहकर बाली निकट की एक झाड़ी मे गया। और शीघ्र ही कुछ पक्तियाँ तोडकर ले आया। 'लो तो देव।' उसने कुछ पत्तियाँ देव के हाथ पर रख दी और एक एक पत्ती भोज के घाव पर रगढने लगा। भोज 'सी सी' करता रह गया और बाली ने एक के बाद एक, सारी पक्तियाँ रगड डाली। तब बोला,—'लो अब चलो। देखते-देखते पीडा खतम हो जायगी।'

'पर साधु मढी बहुत दूर है भैया। लौटते-लौटते तो एक दम रात हो जायगी। कैसे जानवर इकट्ठे किए जायेंगे और कैसे घर चला जायगा मेरा तो बिचार है कि इस जगल के उत्तरी ओर चलिए मृग मिल ही जायगे।' देव ने कहा।

बात भी वास्तव मे ठीक ही थी। बहुत देर हो गयी थी। सबने देव का प्रस्ताव मान लिया। फिर भोज ने पेड की ऊँची डाल पर बैठकर ऊँचे स्वर से बंशी बजानी आरम्भ की। बंशी की ध्वनि सुनकर गायें वही एकत्र होने लगी। इसके बाद वह पेड से उतरा और आठ दस नटखट गायो को रस्सी उसी पेड़ के तने में बांध कर बोला,—'क्या करूँ बाली भइया ये सब इतनी घुमक्कड़ हैं कि जहाँ जरा सा हटिए कि अदृश्य हो जाती है। फिर घन्टो खोजते रहिए भला इनका पता तो चले।' इतना कहकर उसने अपना बडा डण्डा उठाकर कन्धे पर रखा और जिस कपड़े में रोटी बाँधकर लाया था उसे दो तीन बार अच्छी तरह हवा में झटकारा।

'करते तो ठीक हो पर एक ही तने मे मत बाधो। नही तो ये आपस मे ही लड़ना शुरु करेंगी।' बाली ने कहा।

'हाँ यह तो बात ठीक है।' इतना कहकर भोज ने खोलकर उन्हे तीन चार पेडो के नीचे कर दिया। उसके इस काम मे बाली और देव दोनो ने उसका हाथ बटाया। फिर भोज ने कहा,—'देखा बाली भइया उस धौरी गाय का कही पता नहीं है।' पुनः उसने चारो ओर दृष्टि दौडायी और कहा—'लगता है कही रम गयी। अब घण्टो परेशान करेगी।'

'क्या बेकार सोचते हो यार।' बाली भोज के कन्धे पर हाथ रखकर कहता रहा,—'अरे सन्ध्या तक कही न कही से आ ही जायगी।'

इसके बाद तीनो जंगल के उत्तरी भाग की ओर चल पड़े। कुछ दूर चलने के बाद बाली ने बातचीत के सिलसिले मे कहा,—'अरे भोज, हम लोग तो रस्सी लाना ही भूल गये।'

'पर कोई आवश्यकता तो नही मालूम पड़ती।' भोज ने बड़े साधारण ढंग से कहा।

'आवश्यकता तो नही है, पर हो सकता है जरूरत पड ही जाय। . . शिकार का मामला है पता नही कब और किस जानवर से सामना हो जाय। अपने सामान से तो हमेशा तैयार रहना चाहिए।' बाली अवस्था और अनुभव दोनो मे सबसे बड़ा है। वह अपने अनुभव के आधार पर बड़ी गम्भीरता से कहता रहा,—'अब जो हो गया सो हो गया। पर आज हम लोग एक ही स्थान पर रहेगे अलग-अलग नही जायँगे।'

बाली रस्सी का फन्दा फेंक कर जानवर फंसाने में बड़ा प्रवीण है भोज को यह कला नही आती। उसने बाली से पूछा,—'क्यो बाली, मान लो तुमने रस्सी फेंकी और जानवर नही फँसा तो?'

'नही फँसा तो नही फँसा, अरे इसका क्या जवाब है। अब तुम्ही समझो, मान लो तुमने वाण मारा और जानवर को नही लगा तो?' बाली की बात सुनकर दोनो हँस पड़े।

'मेरे कहने का तात्पर्य यह था कि यदि फन्दे में जानवर नही फँसा ता वह उल्टे ही चोट करेगा।' भोज ने मुस्कराते हुए कहा।

'सो तो है ही। आप किसी प्रकार जरा सा भी असफल हुए जानवर उल्टा चोट करेगा और तुमने बाली को क्या समझ रखा है, भोज। अभी तक बाली का एक भी फन्दा कभी चूका नही है'—बाली इस बार जरा रोब में बोला। फिर चलते-चलते उसी आवेश में उसने कन्धे से धनुष उतारा और उसकी प्रत्यचा ठीक करते हुए रुक गया।

'चलो-चला मैने बहुतो का देखा है, जो डींग मारते तो थकते नहीं पर जब काम पड़ता है तब उनकी नानी याद आ जाती है।' भोज ने मजाक करते हुए कहा।

बाली को यह मजाक अच्छा नही लगा। उसने नाराज होकर कहा,—'अच्छा देखो किसकी नानी याद आती है।' इतना कहकर वह आगे होकर कुछ तेजी से चला।

'अच्छी बात है। आज यही तो देखना है। मै और देव चुपचाप केवल बैठूँगा पहले तुम ही लक्ष्य साधना। देखना एक बाण मे जानवर अवश्य गिरे।'

'नही तो?'

'नही तो, आँखो पर पट्टी बाँध कर यहाँ से 'फला' तक चलना पड़ेगा।' भोज ने कहा। देव मुस्काने लगा। उसने पूछा—'मान लो यदि हम तीनों का लक्ष्य चूक गया तो क्या हम तीनो पट्टी बाँध कर चलेंगे?'

'हाँ। और नही तो क्या?' भोज ने कहा।

'तब तो रात भर हम लोग जगल में चक्कर ही खाते रह जायेंगे?' देव बोला।

'तभी तो मजा आयगा, तब पता चलेगा कि किसकी नानी मरती है।' बाली ने मुँह चिढ़ाते हुए कहा।

'तब भाई मै इस प्रतियोगिता मे नही रहूँगा ।' देव ने अपनी लाचारी व्यक्त कर दी ।

'तुम रहो चाहे न रहो । आज हमारे और भोज के बीच निर्णय हो जायगा ।' बाली वैसी ही ऐंठ मे बोला ।

'हमे सहर्ष स्वीकार है पर याद रहे, एक ही बार मे जानवर को गिराना पडेगा ।' भोज ने और जोर देकर कहा ।

ये लोग इस प्रकार बात करते चले जा रहे थे कि सामने से एक हिरण छलाग मारता चला गया । बाली और भोज तो अपनी बातचीत में ही लगे थे । उनकी निगाह उस पर नही पडी । केवल देव ने देखा । वह चिल्लाया—'अरे वह देखो जानवर ।' उसका इतना कहना था कि जानवर पश्चिम की ओर झाडियो मे लुप्त हो गया ।

'तुमने देखा भोज ।' बाली ने पूछा ।

'नही मेरी तो दृष्टि नही पडी, पर. .कुछ बडी. तेजी से खडखड़ाहट अवश्य हुई है ।' भोज दक्षिण-पश्चिम के कोने पर संकेत करते हुए कहता रहा,—'मुझे लगता है । उधर ही कही गया होगा ।'

'तो क्या मै झूठ बोलता हूँ ।. अरे मैने जब एक बार कह दिया कि वह उधर ही गया है तब भला माथा पच्ची करने को क्या आवश्यकता है ।' देव ने जरा बेरुखाई से कहा ।

तीनो उसी झाडी की ओर बढे । झाड़ी के पास पहुँचकर बडे आहिस्ते से धीरे-धीरे बिना कुछ बोले वे आगे बढते रहे जिससे यदि झाडी मे जानवर हो, तो उसे जरा भी आहट न लगे ।

झाडी के पास पहुँच कर तीनों ने अपने धनुष कन्धे पर से उतारे और उसकी प्रत्यञ्चा ठीक की । फिर आँखें गड़ा-गडा कर उन्होंने झाडी मे जानवर खोजना आरम्भ किया । कही कुछ दिखायी न दिया । उन्होंने कई बार बाण से झाड़ी को खडखडाया भी, पर किसी विशेष प्रकार की

कम्पन न हुआ और न यही भान हुआ कि इसमे जानवर है। फिर वे थोडा दक्षिण-पश्चिम की कोण मे और आगे बढे। इस सघन झाडी के पास पहुंचते ही झाडी खड़खड़ायी। वे समझ गये कि भीतर जानवर है। अतएव वे शीघ्र ही पीछे चले आये—और यहाँ तक पीछे आये जहाँ तक एक छलाँग मे मृग मार नही कर सकता। फिर तीनो अलग-अलग तीन पेड़ की आड़ में खडे हो गये।

भोज और बाली के वृक्ष पास-पास थे। देव कुछ दूर पड़ गया था, किन्तु बिल्कुल रक्षित स्थान मे था। वहाँ जानवर दो छलांग मे भी नही पहुँच सकता था। दिन का तीसरा पहर धीरे-धीरे समाप्त हो गया था। सूर्य पश्चिम में अत्यधिक झुक गया था। धरती पर परछायी काफी लम्बी पड़ रही थी।

झाड़ी में जानवर एक बार फिर कनमनाया जैसे वह बाहर निकलने का हो। बाली ने सकेत से भोज से कहा,—'पहले तुम बाण चलाओ।' पर भोज ने स्वीकार नही किया। उसने साकेतिक भाषा से ही उत्तर दिया,—'मै क्यो पहले बाण चलाऊँ। बाजी तो तुमने लगायी है। तुम्ही पहले बाण मारो।'

आखिरकार भोज की बात बाली को माननी पड़ी। वह पहले बाण चलाने को तैयार हुआ और अपना शर-संधान कर खड़ा हो गया। भोज ने भी धनुष पर बाण चढाया। दोनो निशाने की ताक मे लग गये।

कुछ समय के बाद मृग झाड़ी से निकला और छलांग भर कर वह आगे बढे इसके पहले ही बाली का अचूक बाण लगा। बाण लगते ही मृग और भी तेज गति से आगे बढा। बाली भोज को सम्बोधित करते हुए बोला,—'देखा, कैसा सटीक निशाना बैठा?'

'पर जानवर गिरा कहाँ? बात तो एक बार में जानवर गिरा देने की की थी।' इतना कह कर उसने कान तक अपने धनुष की प्रत्यञ्चा खीची

और अत्यन्त तीव्र वाण चलाया। लगते ही मृग गिर पड़ा। पर बाली जोर से चिल्लाया,—'यह बेईमानी है भोज तुम्हे ऐसा नही करना चाहिए।'

'इसमे बेईमानी क्या है? जानवर गिर गया तो बेईमानी है। न गिरता तो ईमानदारी होती। क्या बात करते हो यार।' भोज पेड की आड़ से हटा और उस जानवर की ओर बढा।

'यह बेईमानी नही तो और क्या है? तुमने अँगूठे से वाण चलाया है?' बाली ने कहा।

'तो इससे क्या हो गया?'

'अँगूठे से वाण चलाना लोग दोष मानते है। बाबू जी भी दो अँगुलियो से खीच कर ही वाण मारते हैं .और जब कभी हम लोगो को ऐसा करते देख लेते है तब बहुत बिगड़ते भी हैं।'

'पर काकाजी ने हमे तो कभी नही रोका और न कभी माँ ने ही कहा कि अँगूठे से वाण नही चलाना चाहिए। .मै समझ रहा हू यह सब तुम्हारी चालबाजी है। अब देखते हो कि मै हार गया हू तो बेईमानी बताते हो।' भोज ने ऐसे कहा जैसे वह झगडा करने के लिए तैयार हो। उसने पुनः कहा—'अच्छा भाई, चाहे ईमानदारी हो या बेईमानी पर गिराया जानवर को हमी ने।'

'कौन कहता है कि तुमने नही गिराया।. क्यो देव, बोलते क्यो नही? क्या अँगूठे से बाण चलाना ठीक है?' बाली ने अपनी गवाही के लिए देव से पूछा। देव ने भी बाली की बात को पुष्टि ही की।

देव छोटा अवश्य है, पर वह दोनो से अधिक गम्भीर और शान्त है। वह छोटी-छोटी बातो में झगडा करना पसन्द नही करता। वह बड़े बूढ़ों की तरह समझाते हुए बोला—'खैर जा भी हो, पर भाज भैया ने जान-

वर आखिर एक वाण से गिरा ही दिया। अब बेकार झगड़ा करने से लाभ क्या ?'

उसकी बात से दोनो कुछ शान्त हुए और मृग को अत्यन्त पास आ देखा वह अपनी आखिरी साँसे गिन रहा था। भोज ने बड़ी निर्दयता से उसकी छाती पर एक लात और जगायी। वह अपनी चारो टाँगे जमीन पर पटकने लगा और कुछ देर तक छटपटाता रहा। उसे देखने से ऐसा लग रहा था जैसे उसके प्राण पखेरू उड़ना चाहते हो पर किसी ने उनके पंख काट दिये है। और वे फड़फड़ा रहे है ? बुझने के पहले दीपक की लौ की तरह अब मृग की सांस भभकने लगी।

बाली अपने हार की खीझ मिटाने के लिए पुनः नाक विचकाकर भोज से बोला,—'अरे यह तो मेरे ही वाण से घायल हो गया था। तुमने न भी मारा होता तो यह गिरता ही।'

'अच्छा बाबा मान गया तुमने ही इसे मारा। . मुझे नही मालूम था कि हारने के बाद तुम रोने लगोगे, नही तो मै बाजी लगाता ही नही।' इतना कहकर वह मृग के पास से हट गया और पुनः बोला,—'लो तुम्ही ले जाओ इसे नही तो तुम्हारी जान निकल जायगी।'

'मेरी जान क्यो निकले ? निकले तुम्हारी जान।' इतना कहकर वह लौट पड़ा और कुछ दूर जाकर बोला—चलो 'फला' मे मै बाबा से पूछता हूँ कि अँगूठे से निशाना मारना चाहिए या नही।' इसके बाद वह बड़ी तेजी मे आगे बढा और बिना भोज तथा देव को लिए ही लौट पड़ा।

'जा जा तेरी यहाँ परवाह कौन करता है। यदि तू पुछवायेगा तो मै भी पुछवाऊँगा।' भोज भुन भुनाया और मृग को उठाकर ले चलने की व्यवस्था के सम्बन्ध मे सोचने लगा।

'रस्सी होती तो हम दोनो आदमी इसे बाँधकर आसानी से ले चलते।' देव बोला।

'अब नही है, तो क्या करूँगा !' इतना कहते हुए उसने बशी धनुष और लकडी देव को थमायी तथा बड़ी बहादुरी से मृग को अपनी पीठ पर लाद लिया। उसकी पुष्ट तथा यौवन के द्वार पर अगड़ाई लेती हुई माश पेशियॉ चरमरा उठी। फिर भी उसने अदम्य उत्साह का परिचय दिया और मुस्काराता चल पड़ा। 'लेकिन भैया, इस तरह भला कहॉ तक ले चलोगे।'

'अजी, आगे चलकर किसी गाय की पीठ पर लाद दूंगा।' उसने यौवन की मस्ती में वैसे ही अल्लड़पन से कहा और मौज में चलता रहा। पीछे-पीछे देव था। कभी-कभी मृग का शव उसकी पीठ पर खसक जाता। वह किसी पेड़ के तने या शिला का सहारा देकर उसे ठीक कर लेता।

× × ×

रात हो गयी। 'फला' के करीब-करीब सभी चरवाहे अपनी-अपनी भेडे लेकर लौट आये, पर अभी तक कही भोज का पता नही। तारा अपने घर के बाहर खडी एक टक उसकी राह देख रही है। क्या हो गया आज जो इतनी देर कर रहा है—वह सोचती, और सोचते-सोचते रास्ते में कुछ आगे निकल गयी। फिर भी कुछ दिखायी नही दिया। सारा रास्ता बाल विधवा के बृद्धावस्था के उन दिनों की तरह सुनसान है जिनमें एक निराश जीवन की गर्म उसांसों के अतिरिक्त और कुछ नही रहता।—केवल दूर पर 'फला' की झोपडियों से निकलते धुएँ की हल्की तथा कांपती मीनार दिखाई पड रही है। जो आकाश से बरसती चॉदनी में काले 'जिलेटिन' कागज की तरह पारदर्शक है तथा जो हवा में फडफडाती मालूम होती है।

उसने ऊँची पहाड़ी पर चढकर फिर अपनी निगाह बहुत दूर तक दौडायी। कही कुछ दिखायी न पडा। फिर उसने अपनी झोपड़ी की ओर

देखा। द्वार पर खड़ी उसे एक औरत दिखायी पड़ी। औरत जैसे किसी को खोज रही हो। तारा को ऐसा लगा। वह उलटे पॉव लौटी।

'क्या है बहन ?' तारा ने उसके निकट आकर कहा।

'क्या अभी तक भोज नही आया! गाय दूहने की बेला हो चली।' वह बोली।

'नही बहन, अभी तक तो नही आया। देर तो काफी हो गयी है अब तो आ जाना चाहिए। पता नही कहॉ फस गया।' तारा ने गहन चिन्तित मुद्रा मे कहा। फिर दोनो कुछ समय तक खड़ी सोचती रही। कुछ देर के बाद तारा ही बोली,—'लगता है 'गमेती' के लड़कों के साथ कुछ करने लगा होगा।'

'पर अभी आते समय मैने देखा था। बाली अपनी माँ के साथ अपने घर के दरवाजे पर बैठा था।' युवती बोली।

अब तारा अधिक घबरायी। क्या बात है कि बाली आ गया और भोज नही आया। अनेक प्रकार की बात उसके मनमे आने लगी। कहॉ चला गया ? क्या हो गया ?—वह बहुत देर तक खड़ी सोचती रही। इस बीच वह औरत भी नमस्कार कर चली गयी, पर इसका भान तारा को न हुआ। वह अपने विचारो में खोयी-खोयी उस औरत को सम्बोधित करते हुए बोली—'क्या आपने सचमुच देखा है कि बाली आ गया है।' पर औरत हो तब तो जवाब दे। तारा ने उसे अगल-बगल देखा, कही वह दिखायी न दी। तब उसने सोचा कि वह चली गयी है।

फिर वह अपने घर मे गयी। दीवार पर देखा धनुष नही है। लगता है कही शिकार खेलने दूर निकल गया। फिर भी आ जाना चाहिए अब तो काफी रात हो गयी। ऐसा तो नही कि कही जानवर के चपेट में आ गया हो फिर क्या किया जायगा ? चलूं बाली से पूछूं। हो सकता है, उसे मालूम हो। ऐसा विचार वह बड़ी शीघ्रता से घर के बाहर निकलने

की हुई। पर चलते समय घाघरे की तेज हवा लगकर दीपक बुझ गया। किसी काम के लिए जितनी जल्दी करो उतनी ही देर होती है। उसके पहले सोचा कि जल्दी से 'गमेती' के यहाँ से होती आये। फिर विचार बदला। नहीं, अँधेरा घर छोड़कर नहीं जाना चाहिए।

तुरन्त उसने अँगीठी में फूस डालकर दो-तीन बार जोर-ज़ोर से फूंका। ज्वाला उत्पन्न की। फिर दीपक की बत्ती बढ़ाकर दीया जलाया और उसे दीवट पर अच्छी तरह जमाकर घर के बाहर निकली।

रास्ते में पहले दोहन का घर पड़ा। बूढ़ा दोहन मचिया पर बैठा अँधेरे मे बाजरे की सूखी रोटियाँ चबा रहा था। उसने लपकी बढ़ी चली जाती तारा को एक नजर से ही पहचान लिया, बोला,—'क्यों माताजी, अभी भोज नहीं आया क्या? गाय दूहने की बेला टली जा रही है।'

'नहीं भाई, अभी तो नहीं आया।' बस इतना कहकर तारा आगे बढ़ी। वह जिधर-जिधर से भी जाती और जो-जो दिखायी देखा। सभी बस एक यही प्रश्न पूछता था क्योंकि गाय दूहने के आसरे सब बैठे थे। तारा भी सबको एक प्रकार का नकारात्मक उत्तर देती बढ़ी चली गयी।

शीघ्र ही वह गमेती के द्वार पर पहुँची। वहाँ खाट बिछाये 'गमेती' की औरत और बाली बैठे थे। तारा ने पहुँचते ही बाली से पूछा,—'क्यों बाली, आज भोज अभी तक नहीं आया।'

इतना सुनकर भी बाली एक दम चुप गाल फुलाये बैठा रहा। उसकी माँ तारा के पहुँचते ही उठ खड़ी हो गयी थी। उसने तारा को चारपाई पर बैठाया। पर बाली जहाँ और जैसे बैठा था वैसे ही रहा! जरा-सा भी टस से मस न हुआ!

तारा ने पुनः पूछा—'अरे आज कहीं भोज की खबर-वबर है? .. दिन मे तो तुमसे मिला ही होगा।'

'मै क्या जानूं भोज को।. मुझे कुछ भी नही मालूम है।' बड़े रुखे पन से बाली ने जवाब दिया।

'अरे आज इस तरह क्यों बोलते हो बाली? भोज से झगडा कर बैठे हो क्या?' तारा बोली।

पर बाली ने कुछ उत्तर नही दिया, बल्कि तुनककर उठकर वहा से चला गया। तब उसकी माँ ने कहा—'बहिन लगता कुछ ऐसा ही है। जब से आया है, गाल फुलाये बैठा है। लाख पूछती हूं, कुछ बताता भी नही है।...अभी तक देव भी नही आया है।'

'अच्छा, देव भी नहीं आया है। तब तो जरूर ही यह उन लोगो से लडकर आ गया है। वे बेचारे कही न कही फंस गये होंगे।' फिर तारा ने सन्तोष की हल्की सास ली और कहा—'चलो दोनो साथ ही है। अगर अलग-अलग होते तो और भी जी घबराता।'

'यह तो है ही। मै भी अभी तक घबरा रही थी, अब मालूम हो गया, साथ ही होंगे।. .क्या बताऊं बहन! कई बार मैंने मना किया, समझाया कि बेटा आपस में लड़ा मत करो। पर मानते ही नहीं। जब देखो तब झगडा ही करके बैठते हैं।'

'क्या करोगी बहन, ये लड़के है। इन्हे न झगडा करते देर लगती है और न दोस्ती करते। इनकी दोस्ती तो पानी की लहर की भाँति होती है जहाँ जरा सी हवा लगी कि आकाश में तन गयी और फिर क्षण मे ही शान्त हो पानी मे सो जाती है।. .अभी सब लड़े है, कल देखना सब फिर दोस्त हो जायेंगे।' इतना कहते हुए वह चारपायी से उठ खड़ी हुई और बोली—अच्छा बहन, चलती हूं। भोज और देव मे से जो भी पहले आ जाय, उसे मेरे यहाँ शीघ्र भेज देना।'

'अच्छी बात है मै आते ही भेजूंगी।'

पुनः उसने चलते हुए कहा,—'आज...बालो के पिता जी नही दिखायी पडे।'

'आज वह भी अभी तक नही आये।'

× × ×

जब थोडी अधिक देर हो गयी और भोज नहीं आया तब लाचार होकर तारा ने अँगीठी में लकडी लगायी और आँच तेज की। बैठे बैठे क्या करें ? तब तक खाना ही बना डाले। इससे मन भी बहल जायगा और कुछ समय भी कट जायगा। और यदि मान लो तब तक भी वह नही आया तो वह पुनः! 'गमेती' के यहाँ जायगी और उससे उसका पता लगाने को कहेगी। यह सोच वह आटा गूंथने लगी। सामने रखे दीपक की लौ रह रहकर काँप उठती थी। हवा पहले से कुछ तेज बह रही थी।

अचानक बाहरी दरवाजे की खटक सुनायी पडी। कोई आया क्या वह दन से उठी। हाथ में आटा लगा ही था। दरवाजे पर गयी। देखा गाय खडी है। उसने इधर उधर देखा, कोई दूसरा दिखायी नही पडा। उसने समझा भोज कही हँसी करने के लिए छिप गया है, क्यो कि वह बहुधा अपनी माँ को परेशान करने के लिए ऐसा किया करता था। तारा ने बाहर चारो ओर देखा कोई दिखायी नही दिया। फिर उसने भोज के लिए पुकार लगायी। कही से कोई उत्तर न मिला।

विचित्र बात है, गाय भी आ गयी पर उसका कहीं पता नहीं। वह बढकर दोहन के द्वार पर पहुँची। 'क्यो भाई गाय आ गयी ?' उसने पूछा।

'हाँ गाय तो आ गयी ? क्यो, क्या बात है।' वह बोला।

'अभी तक भोज नही आया। पता नही कहाँ रह गया।' तारा ने अपनी व्यग्रता प्रकट की।

'पर इधर भी तो नही दिखायी पड़ा।' उसने सोचते हुए कहा— अभी थोड़ी देर हुआ केवल गाय टहलती हुई इधर दिखायी पड़ी।

तब तारा मन मारे पुनः! लौटी। सोचा घर चलू और अँगीठी बुझाकर तब उसे खोजने निकलूँ। इस बार दोहन की बडी लड़की चम्पा भी उसके साथ थी।

चम्पा भोज की मित्र है। उसकी उसके साथ खूब-पटती है। छोटेपन से ही दोनो साथ रहते थे, खेलते थे। अब वय और यौवन की मादक आँधी दोनो को प्रत्यक्ष रूप से अधिक मिलने नही देती पर प्रच्छन्न रूप से अब दोनों पहले से और भी अधिक निकट आ गये है। अब भी दिन में वे एक बार कोई न कोई बाहना निकालकर मिलते अवश्य हैं। और जिस दिन नही मिल पाते उस दिन चम्पा को लगता है जैसे आज कोई बडी बात हो गयी है। मन कुछ सूना-सुना सा रहता है। हृदय उसीको ढूढता है आँखें उसी को खोजती है।

आज भी वह भोज से दिन में मिल नही पायी। तारा की बातें सुनकर तो उसकी व्याकुलता और भी बढ गयी। वह तरह-तरह की बातें पूछते भोज के घर तक आयी।

तारा ने आकर देखा कि उसके घर का दरवाजा खुला है और जमीन पर किसी आदमी के पैर के भीगे चिह्न बने हैं। तारा उसे देखते ही भीतर घुसी। चम्पा के मुँह से निकला। लगता कि भोज भैया आ गये हैं। वह भी तारा के पीछे पीछे बुलबुलो सी फुदकती भीतर आयी। भीतर आकर देखा, भोज धनुष की प्रत्यंचा खोलकर उसे दीवार पर लटका रहा है। माताजी को देखते ही वह उनके चरणो पर गिर पड़ा। माता न उसे हृदय से लगा लिया। उसने देखा उसका सारा तन पानी से भीगा है? कुछ जरा जोर जोर से हाफ भी रहा है, पर बिल्कुल स्वस्थ एवं प्रसन्न दिखायी पड़ता है। माँ की छाती से लगकर भी वह चम्पा की ओर देखकर

मुस्कराया। उसकी मुस्कराहट बड़ी मादक थी। चम्पा के अधरों पर भी चमक आ गयी। वह चुपचाप जमीन की ओर देखती रही थी।

फिर तारा उसके भीगे तन पर हाथ फेरती हुई बोली,—अरे तू तो बिल्कुल भीग गया है भोज।

भोज माँ से अलग हुआ और अपने सिर में बंधा कपड़ा खोलकर तन पोछने लगा। माँ ने पुनः पूछा—आखिर तुम भीग कैसे गये ?'

भोज पहले चुप था और कुछ कहने में हिचकिचाया। बाद में सारी कहानी धीरे-धीरे सुना दी। तब तारा और भी आश्चर्य से बोली—'तो क्या उतनी दूर से मृग को तुम अपनी पीठ पर ही लाद कर ले आये ?'

'क्या करता माँ ?...पहले मैंने सोचा कि किसी गाय की पीठ पर इसे बाँध दूँ। पर कोई गाय इसे बंधवाने को तैयार ही न हो। जहाँ बाँधने लगूँ तहाँ वह भड़क जाती थी।' 'क्यों न भड़क जायगी। माँस लादना गाय का काम तो है नही वह तो बैल का काम है ?' तारा के इस व्यंग्य पर चम्पा खुलकर हँसी। भोज भी समझ गया कि माँ मुझे बैल बना रही है। पर कुछ बोला नही केवल हँस कर रह गया।

पुनः भोज बोला—तब मैंने सोचा कि—अपनी पीठ पर ही इसे ले चलूँ। वह तो कहो कि देव बेचारा साथ था। रास्ते भर मदद करता रहा।.. वह न होता तो शायद मृग मैं यहाँ तक न ले आ सकता।

'पर मृग है कहाँ ?' तारा ने पूछा।

'काका 'गमेती' के द्वार पर रख आया हूँ।...वहीं देव ने मेरी सारी पीठ धोयी मृग का रक्त लग गया था।' इतना कहकर भोज कपड़े बदलने लगा।

'पर बेटा देख, चाहे तू शिकार खेलने जाया कर, चाहे जो कर, लेकिन दीया जलने के पहले ही आ जाया कर।...मेरी तबीयत बहुत घबराने लगती है।' तारा ने कहा।

'हाँ-हाँ माँ मैं जरूर आ जाया करूँगा, पर आज ऐसा फँस गया कि देर हो गयी।. .क्यों माँ अँगूठे से वाण नही चलाना चाहिए ?'

'क्यों ?...अँगूठे से कैसे ?...मैंने तुम्हारा मतलब नही समझा।' तारा बोली।

'ऐसे माँ ऐसे।' भोज ने अँगूठा और तर्जनी मिला कर वाण चलाने की मुद्रा दिखायी।

'क्यों ? क्या हुआ है ऐसे वाण चलाने में ?'

'पर बाली कहता है कि ऐसे चलाने में दोष पड़ता है।'

'कहता होगा बालो।...पर मेरे समझ में तो नही आता।' इतना कहकर तारा फिर आटा गूँधने जाने लगी। उसके पीछे-पीछे चम्पा भी चली। पर भोज ने चम्पा का हाथ धीरे से पकड़ लिया और अपनी ओर खीचते हुए धीरे से बोला,—'रुक मै भी चलता हूँ।' फिर उसे और अपने निकट खीचा।'

'अरे क्या करते हो ? माँ देखेंगी तो क्या कहेगी ?' वह हाथ छुड़ा कर भागने लगी।

'अरे रुक तो।' वह पुनः बोला। 'नहीं नही मै यहाँ नही रहूँगी। आना हो तो बाहर आओ मै वही खड़ी हूँ।' इतना कह कर वह चली गयी।

थोड़ी देर में कपड़े बदल कर भोज भी बाहर निकला। तारा ने उसे रोका और कहा—कहाँ जा रहे हो ?...अरे दिन भर के भूखे प्यासे आये हो; खाकर तो कही जाओ।'

'पर माँ मैं अभी आता हूँ।. काका के यहाँ जा रहा हूँ। इस समय मैं निर्णय करा के ही रहूँगा कि अँगूठे से वाण चलाना चाहिए या नहीं ?'

'इसमें इतनी जल्दी की क्या बात है ? थोड़ा रुक जाओ खाना बना कर मै भी तुम्हारे साथ चली चलूँगी।' तारा ने कहा।

'लेकिन माँ, हम में और बाली में बाजी लगी है। हमने शपथ ली है कि जब तक निर्णय न हो जायगा तब तक भोजन न करूँगा। इस बार राजपूती स्वर भोज के कण्ठ से निकला।

'ओ हो ऽ ऽ तुम लोग भी गजब करते हो। जरा-जरा सी बात पर बाजी लग जाती है। शपथ भी ले ली जाती है।' एक क्षण रुककर वह पुनः बोली,—'अब भला तुम्हे कौन रोक सकता है? जाओ लेकिन जरा जल्दी आना।'

'अच्छा माँ!' वह नमस्कार कर चला गया।

चम्पा मार्ग में ही खडी थी। भोज ने पहुंचते ही उसका हाथ पकड़ लिया। चम्पा के तन में एक विशेष प्रकार की बिजली दौड गयी। दोनों में कुछ देर तक धीरे-धीरे बातें हुईं। जिसे उस समय के सुनसान के अतिरिक्त और किसी ने नही सुना और उस समय के गहन अन्धकार के अतिरिक्त उन दोनों को किसी ने नही देखा।

× × ×

आज 'गमेती' के द्वार पर अच्छी बाल मण्डली जुटी थी। गमेती अभी भीतर था। बाहर बालक आपस में ही बातें कर रहे थे। बाली अपना जन-मत बनाने के पक्ष में था। उसने सभी भील बालो से चर्चा की और सबने एक स्वर से कहा कि भोज का पक्ष गलत है। 'कभी अँगूठे से बाण नहीं चलाना चाहिए। हम लोग कोई भी नही चलाते। और यदि भोज ने चलाया है तो बेईमानी की है।' ऐसी धारणा सभी भील बालो की थी।

सोचने की हिम्मत नही होना सबसे बडी गुलामी है, सोच नही पाना मूर्खता है और सोचना नही चाहना सबसे बडा अन्धविश्वास है। इस समय भील बाल सोचना बिल्कुल नही चाहते थे। वह परम्परागत चले आये

अन्धविश्वास से प्रभावित थे। फिर भी भोज अपना बौद्धिक तर्क देता रहा,—'भगवान ने सभी अंग बनाये है। अंगूठा भी बनाया है अंगुली भी बनायी है। तब अंगुली से वाण चलाना चाहिए और अंगूठा से नही, यह धारणा कोरी मूर्खता है।

'तो इसका मतलब है कि हमारे बाप दादा काका आदि मूर्ख है ?' एक बालक बोला।

'भला मै यह कैसे कहूं ?' भोज ने कहा।

'तो आप क्यो कहते हैं कि मूर्खता है।' कई लडको ने एक साथ जरा रोष से कहा। मामला धीरे-धीरे गरम होता जा रहा था। तब तक गमेती घर के बाहर आया। आते ही उसने झौ-झौ का बिकराल रूप देखा। क्या तुम लोगो ने झौ-झौ मचा रखा है। इतना कहता हुआ गमेती खाट पर बैठ गया। फिर बाली और भोज ने अपना-अपना पक्ष उपस्थित किया।

सब कुछ सुन लेने के बाद 'गमेती' हँसा और बोला,—'तुम दोनों का कहना ठीक है।'. बाली को वाण चलाने मे कभी अगूठा नही लगाना चाहिए...और यदि भोज ने अंगूठे से वाण चलाया तो गलत नही किया है।'

'क्यों ?' गमेती की ऐसी दोहरी बात सुन कर सब आश्चर्य में पड़ गये। पहले उन्होंने सोचा काका भोज का पक्ष ले रहे है। 'नही बाबा ऐसा कैसे होगा ?' बाली बोला।

गमेती ने कहा,—'बात यह है कि हम लोगों के एक बड़े ही प्रसिद्ध पूर्वज हो गये हैं, एकलव्य। उनकी कथा तो तुम लोग जानते ही होगे ?'

'हाँ हाँ मुझे माताजी (तारा) ने एक दिन सुनायी थी एकलव्य की कथा।. .वह तो हमी लागों की तरह भील था। बड़ा अच्छा धनुष चलाता था।' बालकों में से एक बोला।

'हॉ तो उसके गुरु थे द्रोणाचार्य ।. उसने अपना अंगूठा अपने इस गुरु को दे दिया था। केवल अंगुलियों से बाण चलाना है ।. .जब हमारे पूर्वज ने अपना अँगूठा गुरू दक्षिणा मे दे दिया। तब हमे बाण चलाने में अंगूठा लगाने का अधिकार नही है ।

'तब भोज क्यो अँगूठे से बाण चला सकता है ?'—बाली ने पूछा ।

'भोज भील नही है !' गमेती बोला ।

'ए ऽऽ भोज भील नही है !' सभी भील बालों को आश्चर्य हुआ। वे अब तक उसे भील ही समझते थे। पर इस रहस्य का उद्-घाटन होते ही वे एकदम शान्त हो गये। उन्होंने आज एक छिपी बात जानी थी। इससे उन्हे कोई प्रसन्नता न हुई। वह अपने से भोज को किसी प्रकार अलग करना नही चाहते थे। पर क्या करते यह उनके वश की बात नही थी ।

२

अभी सबेरा होने में देर थी। भोज उठकर स्नान करने जा ही रहा था। तारा अब तक सोयी तो नहीं थी, पर विस्तर पर पडी करवटें बदल रही थी। अचानक तुरुही और ढोल की विचित्र आवाज़ सुनायी पडी। बहुत देर तक ये वाद्य बजते रहे। 'फला' में तो कनमनाहट पहले से ही शुरु हो गयी थी, पर इस प्रकार की आवाज सुनकर पूरा फला जाग उठा। तारा ने भी विस्तर छोडा और भोज के पास आकर बोली,—'लगता है कोई मर गया है।'

'मालूम तो ऐसा ही होता है।' भोज बोला, क्योंकि सब जानते हे कि इस प्रकार का बाजा किसी के मरने पर ही बजाया जाता है, पर अभी निश्चित नही मालूम था कि मृत्यु किसके घर हुई है। तारा शीघ्र ही अपने

पड़ोस में दोहन के घर गयी। दोहन भी अपनी मोटी लकड़ी ले कहीं जाने की तैयारी कर रहा था। तारा ने पहुँचते ही उससे पूछा,—'किस के यहाँ मृत्यु हुई है, दोहन भाई ?'

'कुछ ठीक तो नही कह सकता, पर लगता है कि मंगला की बहू चल बसी। उसने सिर पर पगड़ी बाँधते हुए कहा,—'और कोई तो फला में बीमार था नही !'

'क्या हुआ था उस बेचारी को ?' तारा ने पुनः पूछा।

'कोई विशेष बात तो नही थी।. पेट मे बच्चा था। करीब एक महीने से बुखार आ रहा था।' फिर उसने गहरी साँस ली और बडी वेदना पूर्ण स्वर में बोला—' इस जीवन का क्या ठिकाना ? आज है, कल नही है। एक न एक दिन तो हम सबको चलना है। देखो किसकी पारी कब आती है ?' बूढे दोहन के मनमें इस समय ऐसे ही दार्शनिक विचार आ रहे थे। तारा ने भी उसकी हाँ में हाँ मिलाया,—'ठीक कहते हैं, भाई ! जाना तो सबको है। 'इतना कहकर वह चुप हो गयी और कुछ रुक कर पुनः बोली—तो कब तक मंगला के घर पहुँचना चाहिए ?'

मै तो अभी जा रहा हूँ, पर घड़ी भर से कम नही लगेगा लाश उठने में ? .. अभी कमेरिया आयेगा...और फिर वह गर्भवती थी, बच्चा निकाला जायगा।' फिर वह एक क्षण के लिए रुका और बोला,—'यदि आपको आना है तो आप पौ फटने के बाद ही आइए।'

अविलम्ब तारा वहाँ से लौटी। अभी आकाश पर नाम मात्र को सफेदी आयी थी। तारों की रोशनी कुछ थोड़ी ही फीकी पड़ी थी। गाय बैलो को सानी देने के लिए लोग कूऐ पर से पानी ला रहे थे। जब तारा घर के निकट आयी, तब उसने देखा दक्षिण पश्चिम के कोने मे जाने वाली सकरी पगडंडी पर 'कामरिया' जा रहा है। उसके एक हाथ मे मिट्टी की एक सुराही है और दूसरे में मिट्टी का छोटा घोड़ा।

तब तक भोज सन्ध्या-पूजन पर बैठ चुका था। तारा भी चुपचाप आकर अपनी चारपायी पर लेट गयी। कुछ समय तक आकाश देखती और कुछ सोचती रही। अचानक गीता के कुछ श्लोक गुनगुनाने लगी।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा—
न्यन्यानि संयाति नवानि देही।

वायु की मन्द लहरियो पर तैरता हुआ तारा के कंठ का मन्द-मदिर मधुर स्वर बडा आकर्षक था, पर वह अधिक दूर तक फैल नही पाता था।

तारा ऐसी ही गुनगुनाती और सोचती पड़ी रही। थोडी देर मे पूजन समाप्त कर भोज आया और बोला,—'पता लगा माँ, कहाँ आर किसकी मृत्यु हुई है ?'

'सुन तो रही हू कि मगरा के वद्ध का देहान्त हो गया।' इतना कह कर वह फिर गुनगुनाने लगी। ऐसा लग रहा था मानो वह जिस विचार धारा मे खोयी है वह उससे अलग होना नही चाहता आर न तो वह अपने चिन्तन में किसी प्रकार का व्यवधान हो पसन्द करती है।

भोज उसी चारपायी पर बैठ गया और माँ का सिर सहलाते हुए बडे प्रेम से बोला,—'माँ मै भी तुम्हारे साथ मगला के घर चलूगा।'

'नही-नही, ये सब बेकार की बातें मत करो। खाना खालो और गायो को लेकर जंगल की ओर जाओ।...धीरे-धीरे समय हो चला है। तारा ने झिझकते हुए कहा। वह किसी प्रकार के उत्सव मे ता बिना कहे उसे ले जाती है पर एसे अशुभ अवसरो पर वह उसे ले जाना ठीक नही समझती। फिर भी भोज जिद करता ही रहा। जब वह उसके जिद से अत्यन्त खीझ उठी तब उसने कहा—'आखिर मंगला के यहाँ चलोगे तो गायो को लेकर कब जाओगे ?'

'थोड़ी देर ही हो जायगी माँ, तो क्या होगा ? आज दिन चढ़े ही जंगल चला जाऊगा।'

अब तारा क्या कहे ? बालक के प्रेम भरे हठ के सामने उसे झुकना पड़ा।

थोड़ी देर बाद तारा ने एक कपड़े मे बजरा बाँधा और मंगला के घर आयी। साथ मे भोज भी था। बाजरे की पोटली की ओर संकेत कर भोज ने पूछा,—'यह क्या होगा माँ ?'

'सब तुम्ही जान जाओगे ?' इतना कह कर वह मुस्कराने लगी।

मगला के द्वार पर इस समय काफी भीड़ थी। 'फला' के सभी घर से एक दो प्राणी अवश्य आये थे। गमेती भी अपने दोनों बच्चे बालो और देव को लेकर उपस्थित था। द्वार के एक ओर मिट्टी की सुराही रखी थी। दूसरी तरह मिट्टी का घोड़ा रखा था। बीच मे कामरिया बैठा था। लोग आते थे और भर मुठ्ठी अनाज कामरिया को देते थे। कामरिया दोनो हाथो की अंजली बनाकर उसे लेता था। फिर कुछ भुनभुनाता था और मृत प्राणी का नाम लेकर बड़े जोर से चिल्लाता था। वहाँ खड़े लोग अपना मस्तक झुका लेते थे। तब अंजली का आधा अनाज सुराही पर और आधा अनाज घोड़े पर वह छिड़क देता था। जो भी आता सभी अनाज देता और तब वह एक सधा सधाया कृत्य करता था।

निकटतम सगे सम्बन्धियो की आँखें आसुओं से भरी थीं। अभी शव घर के बाहर नही आया था। लोग बाँस की अर्थी बना रहे थे। भीतर से महिलाओं के रोने की तेज आवाज आरही थी। जिन मे मंगला के दोनो पुत्रों की आवाज सब से तेज, तीखी और वेदना से भरी थी। सुनकर हृदय फट जाता था।

जब तारा आयी तो लोग सामने से एक किनारे हट गये सिर झुकाये और मातम की सूरत बनाये वह आगे चली गयी। फिर उसने और भोज दोनो ने कामरिया को अनाज दिया। उसने कृत्य सम्पन्न हुआ।

धीरे-धीरे लोग बढते ही गये और जब सूर्य अच्छी तरह निकल आया तब तक तो बहुत से लोग जुट आये। जब लोगो का आना बहुत कुछ कम हो गया तब गमेती ने अपनी कमर से कटार निकाली। कटार देखते ही भोज कुछ चकराया उसके छोटे जीवन मे यह सब देखने का पहला अवसर था। उसके लिए यहाॅ का हर कृत्य रहस्य से भरा और आश्चर्यजनक था। वह बहुत सी बातो के सम्बन्ध मे जानना चाहता था पर लोगो को अत्यन्त शान्त और गम्भीर देखकर कुछ बोल न सका किन्तु कटार देखने के बाद भी वह अपनी जिज्ञासा दबा कर रह जाय यह सम्भव नही था। उसने कटार की ओर लक्ष्य करके तारा की कान मे धीरे से कहा—'यह क्यो माॅ।'

'इस समय चुप रहो।' इतना कह कर तारा ने उसे शात कर दिया। वह आश्चर्य का पुतला चुप चाप खड़ा रहा।

तब तक तारा की दृष्टि भीड़ के पीछे, खड़े एक आदमी पर पड़ी। वह पूरी तरह दिखायी तो नही पड़ता था, केवल एक आॅख और सिर पर बँधा मुरेठा दिखायी दे रहा था। उतने से ही तारा पहचान गयी। 'अरे यह तो जादव है।'—उसका मन धीरे से बोल उठा। पर इस समय उसको यहाॅ क्या आवश्यकता कोई विशेष वात तो नहीं! आया भी है बहुत दिन पर।' ऐसा ही वह सोचती रही। उसकी इस चिंतन मुद्रा ने उसे यहाॅ से बिल्कुल अलग कर दिया था। सामने क्या हो रहा है?—यदि अब उससे कोई कहता तो कदाचित वह ठीक न बता पाती।

जब लोग घर के भीतर जाने लगे तब भी वह मूर्तिवत् चुपचाप खड़ी थी। अन्त में गमेती को कहना ही पड़ा,—'माताजी भीतर चलिए। तब कही वह भीतर गयी। भोज उसके जाने के पहले ही भीतर आ

गया था। भीलो मे परदा बिल्कुल नही होता। लम्बे चौड़े चौक और लम्बी दालान में सब औरत मर्द साथ खड़े हो गये। मृत नारी का शव बीचो-बीच चौक में उत्तर-दक्षिण सुला दिया गया।

कामरिया ने गमेती के हाथ से कटार लेकर शव के पेट में भोंक दिया। मंगला के दोनो बच्चे ज़ोर से चीख पड़े। औरतों का भी रोना कुछ तेज हुआ। इसके बाद लोग बाहर निकल आये।

तारा बाहर आ गयी थी, पर भोज अब भी भीतर था। तारा की आंखो ने पुनः जादव को भीड़ मे से खोज ही लिया। उसकी मुद्रा शोका-कुल थी। उसकी बगल मे एक वृद्ध और भी खड़ा था। तारा ने उसे देखते ही एक दम पहचान लिया और अपार आश्चर्य में डूब गयी। उसने फिर-फिर उसे देखा, यह वही सत्यनारायण तो है, महाराज महेन्द्र का पुरोहित! भोज के पिता का पुरोहित! किन्तु यह अब तक जीवित है, आश्चर्य! कैसे ईडर वालों ने इसे छोड़ दिया।.. पर कितना बदल गया। अब तो एक दम बूढा लगता है। आकृति पर कैसी झुर्रियाँ पड़ गयी हैं...बाल वर्फ जैसे सफ़ेद हो गये है। पर इतने दिनो के बाद आज आखिर यह कैसे दिखायी पड़ा। कोई बड़ा रहस्य अवश्य है?—तारा का मस्तिष्क सोचता रहा और मन चकराता रहा। कोई नयी राजनीति तो जन्म नही ले रही है? फिर कुछ सोचती हुई उसने अगल-बगल देखा। भोज दिखायी नही पड़ा। किन्तु बाली पास ही खड़ा था। उसने उससे भोज के बारे में पूछा।

'वह घर में है।'—बाली बोला। फिर वह घर मे गयी। वहां कामरिया मृत प्राणी का पेट चीरकर बच्चा निकाल रहा था। भोज बड़े गौर से यह जघन्य दृश्य देखने में तन्मय था।

पहुंचते ही तारा ने उसका कान पकड़ा और उसे बाहर ले आयी। वह बड़े क्रोध मे थी। इस समय उसने भोज से कुछ कहना ठीक नहीं समझा। केवल रह रहकर उसे आँखो से तरेरती रही।

तारा की दृष्टि बार बार जादव और उसके साथ आये नये आगन्तुक पर पडती रही। वह उन्हे इस समय देखना नही चाहती थी, पर बरवस उसकी निगाह उधर पड जाती थी। वे दोनों भी कुछ रुक-रुककर उसे निरन्तर देखते रहे। एक बार तो जादव ने भोज की ओर तर्जनी से संकेत कर उस व्यक्ति से कुछ कहा। तारा इसे देखती रही। शायद जादव भोज को उसे पहचनवा रहा है।—तारा ने सोचा।

अब 'कामरिया' ने गर्भ का बच्चा निकाल लिया था। उसे एक धवल वस्त्र में लपेट कर वह बाहर ले आया। यहाँ मंगला ने उसे अपने हाथ पर लिया और गाडने के लिए पहाडी के पास चला। दो तीन निकट सम्बन्धियो को छोडकर बाकी सभी औरत मर्द मंगला के पीछे गये।

उस नये बूढे व्यक्ति ने जादव से पूछा,—'अब इस बच्चे को क्या करेंगे?'

'इसे ले जाकर पहाडी पर गाड देंगे।'

'और इसकी माँ का क्या होगा?'—उसने पुनः पूछा।

'वह जलायी जायगी।' जादव ने उत्तर दिया। उस बूढे व्यक्ति ने विस्मय से सिर हिलाया। उसके मुख से केवल इतना निकला—'बडे विचित्र हैं ये लोग!' फिर वह चुप हो गया।

'बात यह है कि भील लोग जिसकी अकाल मृत्यु होती है, उसे गाडते हैं। . मौत से तो मरी है बच्चे की माँ। पर बच्चे की अकाल मृत्यु हुई है। यदि माँ न मरती तो बचा न मरता. .।' जादव ने वृद्ध को समझाते हुए कहा। वृद्ध चुपचाप सुनता रहा। बाद में कुछ सोचते हुए बोला,—'लगता है तारा द्वार पर ही रह गयी। भोज भी दिखायी नही देता है।'

जादव ने चारो ओर देखा। सचमुच वे लोग थे नहीं। वृद्ध की शंका को उसने पुष्ट किया।

बच्चे गाड़ कर जब तक लोग लौटे तब मंगला के स्त्री की भी अर्थी तैयार हो चुकी थी। उसे अच्छी तरह नहलाकर कपडे में लपेट दिया गया था। आते ही लोगो ने अर्थी उठायी। आगे आगे कामरिया के साथ मंगला का छोटा भाई चला। वह मुठ्ठी भर-भरकर सरसों जमीन पर विखेरता चलता था। उसके पीछे मगला का बडा लड़का एक हाथ मे मिट्टी के बर्तन में आग और दूसरे में एक बडा सा लड्डू लेकर चल रहा था। उसकी अवस्था मुश्किल से आठ या नौ वर्ष के आस पास होगी। उसकी आँखे जल से भरी थी। रह रहकर आसुओं की बूंदे मुलायम कपोल पर से ढुलक जाती थी मानो कमल की गुलाबी तथा स्निग्ध पॅखुडियो पर से ओस के मोती फिसल रहे हो। मिट्टी के पात्र में अग्नि अच्छी तरह जल नही रही थी। उसका धुआँ बालक की आँखों में लग रहा था। इससे उसकी आँखें और भी लाल हो गयी थी। उसका दोनों हाथ फंसा था। बेचारा बिल्कुल परेशान हो गया था। बीच-बीच में दूसरे लोग आ आकर आग को फूक मारकर सुलगा देते थे, पर कुछ देर के बाद वह ज्यों कि त्यों हो जाती थी।

उषाकाल की गुलाबी आभा वाले शिशु के बदन पर ढुलकते आँसू के नीचे से उठता धुआँ उस प्रज्वलित ज्वालामुखी के समान मालूम पड़ रहा था जिस पर बादल घनघोर वर्षा किया करते हैं। पर न आग बुझी और न आखों ने बरसना ही बन्द किया।

उस वृद्ध राज पुरोहित को यह अच्छा नहीं लगा। उसने जादव से कहा,—'उसकी माँ तो मर ही गयी अब इस बेचारे को क्यो मारे डाल रहे है लोग। अरे कोई दूसरा आदमी लेकर आगे-आगे चलता।'

'पर ऐसी परम्परा नही है। जब तक मृत प्राणी का बालक है तब तक इस आग और लड्डू को दूसरा नही ले सकता।'

औरत मर्द सभी इस शव यात्रा में चल रहे थे। कोई किसी से बात नही करता था। ऐसे अवसर पर बात करना अत्यन्त अशिष्टता समझी जाती

है, फिर भी जादव और वह वृद्ध बात कर ही रहे थे। पर लोगों ने विशेष ध्यान नही दिया। जिन लोगों का ध्यान गया भी उन्हे भी कोई विशेष नही खटका। यह समझ कर कि दूर के लोग है उन्होंने कुछ कहा भी नही।

वृद्ध ने पुनः जादव से जमीन मे बिखरी सरसो की ओर सकेत करके पूछा,—'इसे इस तरह से छीटने का क्या तात्पर्य है सरदार ?'

इस बार जादव मुस्कराया और कुछ समय तक मन-ही-मन मुस्कराता रहा, फिर बोला,—'गर्भवती स्त्री के मरने पर उसका एक सगा-सम्बन्धी ऐसे ही आगे-आगे सरसों बिखेरता चलता है।. ऐसी परम्परा है।'

'वाह रे परम्परा, आखिर इसका कुछ मतलब भी होगा।' वृद्ध अपने मन की नही, बुद्धि की संतुष्टि चाहता था।

'बात यह है कि भीलो का ऐसा विश्वास है कि गर्भवती स्त्री की आत्मा कभी-कभी अपने घर लौट कर आती है। ये सरसो इसलिए बिखेरी जाती है कि जब कभी भी वह आत्मा लौटकर आवे तब वह सरसो बिनने में ही उलझ जाय। घर तक पहुँच ही न सके।' इतना कहकर जादव बहुत धीरे-से हँसा। उसे भी अपने इस अन्धविश्वास पर हंसी आ रही थी।

उस शव यात्रा के जलूस मे ये दोनो व्यक्ति बातचीत करते-करते सबसे पीछे हो गये थे। वृद्ध सत्यनारायण का सारा जीवन राजदरबार में बीता था। वह सूर्य्यवंशी राजा महेन्द्र का पुरोहित था। उसके बाप, दादा-परदादा आदि भी इस राजवंश मे पुरोहित रह चुके थे। उसने भीलो का जीवन इस प्रकार निकट से नही देखा था। इसी से उसे बड़ी जिज्ञासा थी और इस समय तो उसकी जिज्ञासा बच्चों जैसी हो गयी थी। वह हर एक बात जानना चाहता था। वह लाख प्रयत्न करने पर भी चुप नही रह सकता था। पर सब कुछ पूछने के बाद भी वह भोज के सम्बन्ध में ही सोचता रहा। इधर उधर की बातें करने के बाद आखिर उसने पूछ ही दिया,—'कुँवरजी तो .' वह पूरी बात कह भी नही पाया था

कि जादव ने उसके हाथ की हथेली पकड़ कर जोर से दबा दी और साव-धान करते हुए बोला,—'पुरोहितजी, यहाँ उसे कुँवरजी मत कहिए।... यहाँ सभी उसे भोज पुकारते हैं। कुँवरजी तो कोई जानता भी नही।' इतना कहने के बाद पुनः उसके कान मे कुछ बहुत धीरे-धीरे उसने कहा।

'अच्छा, तो तारा ने बडी बुद्धिमानी से काम किया है।' पुरोहित जी मुस्कराते हुए बोले।

तब तक शव श्मशान पर आ गया। नदी के किनारे यही मुर्दे जलते हैं। अर्थी उतार कर लोगों ने कुछ क्षणो तक अपनी थकान मिटायी। फिर सगे-सम्बन्धियों ने चिता के लिए लकडी सजायी। उस पर शव रखा गया। शव के ऊपर भी कुछ लकडियाँ चुन दी गयी। तब मंगला के पुत्र ने चिता मे आग लगायी। उसने आग से भरा वह मिट्टी का बर्तन उसी चिता पर फेंक दिया और लड्डू जमीन में पटक कर छोड़ दिया। थोड़ी देर बाद चिता धू-धू कर जलने लगी।

तब धीरे-धीरे लोग वहाँ से चलते बने। भोज को लेकर तारा भी लौट पड़ी। दिन काफी चढ आया था। धूप तेज हो गयी थी। चैत्र के महीने की धूप थी जरा सा लगते ही जी तिलमिला जाता था। तारा बड़ी तेजी से अपने घर लौट रही थी। वह भोज से बोली,—'देखो व्यर्थ में रुके न। क्या मिला यह सब देखने से...यदि गये होते तो अब तक जंगल पहुँच गये होते।...'

भोज चुप था। उसकी इच्छा सचमुच आज जंगल जाने की नहीं थी। वह सोचता यदि एक दिन गाये नही ही चरेंगी तो क्या हो जायगा। पर माँ से कुछ कहने की हिम्मत नही थी।

आप सोचते होंगे कि तारा भोज को जल्दी से जल्दी जंगल भेजने के लिए ही इतनी शीघ्रता से दौड़ी चली आ रही है, पर बात वास्तव मे यह नही है। जब से उसने सत्यनारायण को देखा है तब से वह एक दम घबरा

उठी है, पर ऐसे जगह फँसी थी जहाँ से शीघ्र निकलना कठिन था। मौका मिलते ही वह चल पड़ी। सत्यनारायण और जादव को भी वह साथ ही ले आती, पर भोज के सामने ही उससे कुछ बातचीत हो ऐसा वह चाहती नही थी।

× × ×

भोज को जल्दी से भोजन कराया और कुछ रोटियाँ मे घी नमक लगा कर, कपड़े में बाँधकर पोटली बनायी। उसे भोज को देते हुए बोली,—'देखो, धूप काफी तेज निकल आयी है। कही दूर मत जाना और हो सके तो आज सन्ध्या होने के पहले ही चले आना।'

भोज माँ का चरण छूकर चलने को हुआ तब तक जादव और सत्यनारायण आ ही पहुँचे। तारा ने मुस्कराते हुए दोनो का उचित अभिवादन किया। भोज इस नये आगन्तुक को बड़े कुतूहल से देखता रहा। जादव को तो वह पहचानता है। वह कई बार यहाँ आया है, पर दूसरा वृद्ध व्यक्ति उसके लिए बिल्कुल अनजान था। जादव ने तुरन्त भोज से पूछा,—'कहो भोज कैसे हो ?. इन्हे पहचानते हो ?'

भोज एक टक उस व्यक्ति को देखता रहा और मुस्कराते हुए उसने नकारात्मक ढंग से सिर हिला दिया।

तब तारा बोली—'नही पहचानते, मत पहचानो।...चलो पुरोहितजी का चरण छुओ।'

उसने झुक कर चरण छुआ। पुरोहित ने उसे छाती से लगा लिया और बोला—'बेटा बड़े हो। अपने पिता की गद्दी लो।' इतना कहते-कहते पता नही क्यो उनकी आँखें डबडबा आयी। भोज बड़े ध्यान से उन आँखो में कुछ खोजता रहा। फिर कुछ देर के बाद उसने माँ की ओर

देखा। माँ ने आँखों से ही भोज को चले जाने का संकेत किया। वह चला गया।

फिर तारा दोनो को लेकर भीतर दालान में आयी और चारपायी पर उन्हे बैठाते हुए बोली,—'बड़े दिनो पर मिले पुरोहितजी। मै समझती थी कि कदाचित् इस जीवन में अब आपसे भेंट न हो ?'

'मुझे भी लगता ऐसा ही था, पर ईश्वर की कुछ ऐसी कृपा थी कि तुमसे भेंट हो गयी।' इतना कहकर वृद्ध चारपायी पर लेट गया। तारा ने तुरन्त एक तकिया लाकर उसके सिरहाने लगा दी—और अँगीठी पर दूध रख आयी। फिर उन लोगों की चारपायी के सामने एक मचिया पर बैठकर बातें करने लगी,—'अब तो आप बिल्कुल बदल गये पुरोहितजी ! एकदम बूढे दिखायी देते है।. .आखिर आपकी वय ही क्या होगी ? बहुत होगा तो मुझसे एक दो साल बडे होंगे। . पर दाँत एकदम टूट गये। बाल बिल्कुल सफेद हो गये। आकृति पर कैसी झुर्रियाँ आ गयी। .लगता है अस्सी वर्ष के बूढे बाबा हैं आप।' तारा की बात सुनकर जादव हँस पडा, पर पुरोहितजी की आकृति पर एक हल्की मुस्कराहट ही आयी और विलीन हो गयी, जैसे आकाश में चमकने वाली बिजली क्षण में चमक कर विलुप्त हो जाती है। फिर उनका चेहरा अत्यधिक गम्भीर हो गया। बडे वेदना-भरे स्वर में वह रुक-रुक कर बोलते रहे, 'हाँ, बाल तो आपसे आप पके हैं, पर दाँत टूटे नही तोड़ डाले गये है।' बात यह हुई कि ईडर वालो को पक्का सन्देह हो गया कि कुँवरजी को हमी ने कही हटाया है। ..फिर उन्होने मुझे खूब सताना शुरू किया।....मैंने अनेक कसमें खायी, उन्हे बड़ा विश्वास दिलाया कि मैने उसे नही छिपाया, पर वे मानते नही थे। सब एक स्वर से कहते थे कि यह राज पुरोहित का ही काम है।. .'

'उनका कहना तो ठीक ही था।' तारा मुस्कराते हुए बोली। 'यदि

आपने महारानी से न कहा होता और मेरे साथ ईडर की सीमा तक न आये होते तो कदाचित् कुँवर जी जीवित न बचते।'

'हाँ इसीलिए तो मेरी मरण हुई। वे सभी कहते थे कि जिस समय महारानी सती हुईं और महल का कोना-कोना खोजा गया उस समय इस पुरोहित महाराज का कही पता नही था। पर दूसरे ही दिन ये ईडर में दिखायी पड़े। जरूर यह राजकुमार को कही छिपाकर चला आया था। ...फिर साम दाम दण्ड—ऐसी कोई भी युक्ति बाकी नही जिसके द्वारा मुझसे कुँवर जी का पता लगाने की कोशिश न की गयी हो।...उसी समय मेरे दाँत तोड़ डाले गये। मुझे खूब मारा गया। यहाँ तक कि मेरे पैर की एक हड्डी भी खसक गयी। आज तक चलने मे कष्ट होता है। फिर भी आज जब मैंने कुँवर जी को देखा मेरा सारा दुःख और कष्ट दूर हो गया। अब तक वह जीवित तो है।'—उनकी सारी झुर्रियाँ प्रसन्नता में मुस्करा उठी।

'इसमें क्या सन्देह? आपकी सहनशीलता और इनकी (जादव की ओर संकेत कर वह बोली) कृपा से ही कुँवरजी की रक्षा हो सकी है।'

'हाँ-हाँ, जादव ने बडी मेहनत की है। हमारा राज-परिवार इनके परिवार को कभी भूल न सकेगा।'

बूढा बोला,—'हाँ—देखो, कभी-कभी ऐसे आदमी काम आते हैं जिनसे कभी का कोई सम्बन्ध ही नही रहता।...यही जादव से हम लोगों का क्या सम्बन्ध था या राजवंश का क्या सम्बन्ध था, पर बेचारे ने जो कुछ किया यदि राजवंश एहसान चुका सकता!'

जादव अब तक अपनी तारीफ बैठा सुन रहा था फिर बड़ी नम्रता से बोला—'अरे इसमे मेरा क्या था। सब ईश्वर ने ही किया है।'

'ईश्वर तो करता ही है पर माध्यम तो मनुष्य ही होता है।'

फिर तारा दो पात्रों में दूध ले आयी और दोनो को दिया। गरम दूध की चुस्की लेते हुए जादव ने पुरोहित जी से पूछा—'जब आप को इतना कष्ट था, तब आपने ईडर छोड क्यो नही दिया ?'

'अरे भाई छोड सकता तब न छोड़ता। चौबीसो घन्टे उनकी दृष्टि मुझपर रहती थी। यह तो साल भर हुआ कि वे मेरी ओर से उदासीन हो गये है। इसके पहले वह एक-एक बात की सूचना रखते थे कि मै क्या कर रहा हूँ और किससे मिल रहा हूँ। और मैं ईडर छोड़ने के पक्ष में था भी नही। मै चाहता था कि कष्ट चाहे जितना सहूँ पर रहूँ यही।' यह देखता रहूँ कि ये लोग क्या करते है, कौन-कौन सी योजनाएँ बनाते है। बीच-बीच में अवसर मिलते ही मै कुछ काम भी कर डालता था।

'ऐसी स्थिति में भी आप काम कर ही लेते थे! आश्चर्य होता है।' जादव ने कहा।

'इसमें आश्चर्य की क्या बात है ?' अरे वह देखो .उसका नाम याद नही आ रहा है।—' वह सिर खुजलाते हुए कुछ समय तक सोचता रहे। फिर अचानक बोले—'हाँ याद आया शकुन्तला को तुम जानती होगी तारा।'

'हाँ हाँ, बहुत अच्छी तरह। 'वह बेचारी सदा मेरा साथ देती थी कैसी है अब वह ?'

'अब है कहाँ ? वह तो मर गई।'

'अरे यह कैसे ? तारा को जैसे महान आश्चर्य हुआ।

'कैसे मरी यह तो नही कह सकता, पर एक दिन उसकी सड़ी लाश महल के कूएँ से निकाली गयी। उसका चेहरा पहचाना नही जा सकता था।' 'बस हमको मौका मिला और हमने प्रचारित करा दिया कि यह तारा

की लाश है जिसका परिणाम यह हुआ कि आज ईडर का एक व्यक्ति स्वप्न में भी यह नही सोच सकता कि तारा जीवित है ।' उनकी अनुभव से भरी आँखो ने जादव की ओर देखा मानों वह पूछ रही हो कि कहो मैने कैसा किया ।

'खूब, मै आपकी बुद्धि और योग्यता की प्रशंसा करता हूँ ।' जादव ने कहा ।''

'इसमें क्या सन्देह !' तारा बोली ।

फिर कुछ समय तक और इधर उधर की नयी पुरानी बातें होती रही । बहुत दिनों के बाद बिछुड़े हुए साथी मिले थे । एक-एक घटना स्वप्न की तरह आँखो के सामने आती गई । फिर उसकी चर्चा चल पड़ती थी । घन्टो इसी तरह की बातें होती रही । पुरोहित जी बड़े आराम से लेटे थे । उनकी आँखें झप रही थी । रात को अधिक जागे जो थे । किन्तु जादव चलना चाहता था उसे रात्रि तक अपने घर पहुँचना था ।

'आप आराम कीजिए । अब मै चलूँ ।' जादव बोला ।

'क्यों आपको इतनी जल्दी क्या है ?' तारा ने कहा ।

'अभी गमेती' के यहाँ भी थोड़ा रुकूँगा, फिर सोचता हूँ आज ही रात तक घर भी पहुँच जाऊं ।'

यों जैसी आपकी इच्छा । मैं तो सोचती थी कि भोजन करके ही जाते । . .अच्छा उनसे मेरा नमस्कार कह दीजिएगा । तारा ने कहा ।

'किससे ?'

'अरे नाम याद नही आ रहा है ? वह साँवला-सा तगड़ा व्यक्ति. . जिसके यहाँ मैं एक रात रही, जिसने आपसे मेरा परिचय कराया था ।'

'अच्छा अब समझा ।...कह दूँगा आपका नमस्कार ।'

'भोज का भी कहिएगा ।...अच्छी तरह तो है ?'

'हाँ, है बड़ी अच्छी तरह ! भोज का भी नमस्कार कह दूँगा ।' फिर वह मुस्कराया और मुस्कराता रहा । कुछ रुक कर उसने पुरोहित जी को सम्बोन्धित करके कहा,—'अभी तो आप रहेंगे ही ।'

'नही, मेरा बिचार नागाह्रद जाने का है । बहुत दिनो के बाद ईडर की भूमि ने मुझे छोड़ा है । सोचता हूँ, जरा घूम लूँ ।'

'अवश्य घूमिए ।. .ईश्वर ने चाहा तो जल्दी ही भेंट होगी ।' फिर वह नमस्कार कर चला गया । 'तारा द्वार तक उसे पहुँचाने आयी । बाहर मध्याह्न का सूर्य्य अपनी पूरी तेजी से चमक रहा था । झिलमिलाती धूप मे सामने की प्रकृति काँपती दिखायी देती थी ।

× × ×

अभी तक पुरोहितजी की नींद टूटी नही थी । वे चारपायी पर पडे खर्राटे ले रहे थे । दिन का तीसरा पहर भी ढल रहा था । धूप पीली पड़ गयी थी । सन्ध्या अत्यन्त निकट थी । तारा भोजन बनाने की तैयारी मे थी कि अचानक 'भड़' से दरवाजा खुला । घबरायी हुई चम्पा दौड़ी आयी । तारा के पास आकर वह खडी हो गयी । वह बड़ी तेजी से हाँफ रही थी । जैसे कुछ कहना चाह कर भी घबराहट मे कह नहीं पा रही थी । फिर उसने अपने को संभालते हुए कहा,—'माताजी आपने कुछ सुना ?'

'नही तो !'

'आज भोज भैया ने एक विदेशी घुड़सवार को मार डाला ।'

'हैं यह क्या ?'. .तुझे कैसे मालूम ?'

'अभी-अभी दादा कह रहे थे ।. अरे सारे फला मे झुनगुनी हो गयी है ।. .बाली भइया भी दौड़ा आया है ।. गमेती काका भी अपनी बड़ी तलवार लेकर गये हैं ।...हमारे दादा भी धनुष लेकर जा रहे हैं । उसने

इतनी बातें एक साँस में कह डाली। अब भी उसका हाँफना बन्द नही हुआ था।

'अच्छा तू जल्दी से जा और दादा को रोक, मै अभी आती हूँ।'

वह दौड़ती चली गयी। तारा ने सोचा कि वह पुरोहित जी को जगाये। वह दालान में गयी। उसने देखा पुरोहित जी अब भी गहरी नींद मे सो रहे हैं। फिर पता नही क्या सोचकर बिना जगाये ही लौट आयी और बाहर से दरवाजा खीच कर दोहन के घर पहुंची।

दोहन धनुष लेकर जा ही रहा था कि तारा को देखकर रुक गया। 'क्या बात है दोहन भाई।' तारा बोली। 'सुना है कि कुछ अरबी लोग इधर आये हैं। ये हमें लूटते हैं। हमारी बहू बेटियो को बेइज्जत करते है। उनमें से दो हमारे 'फला' के भी पास आ गये थे। एक शुकू की लड़की को बलात अपने घोड़े पर बैठाकर ले जाना चाहता था।' अपने धनुष की प्रत्यञ्चा वह कसता जाता और कहता जाता था। पास में ही चम्पा खड़ी थी। उसने उसे सम्बोधित करते हुए कहा—'जा देख तो पाटे पर और तीरें भी होंगी, जल्दी से ले तो आ।

'तब क्या हुआ।' तारा ने पुनः पूछा।

'उसने उसका हाथ पकड़कर घसीटा। उसने 'गुहार' लगायी। पास ही भोज अपनी गायें चरा रहा था। आवाज सुनते ही उसने खीचकर बाण मारा।...ऐसा अचूक निशाना, वाह वाह ..कि सीधे जाकर गले मे ही लगा और वह तुरन्त गिर गया।'

चम्पा ने तीर लाकर दये। उसने शीघ्र ही सबकी नोकें देखी और फिर उसे कमर मैं बाँध लिया। चलते हुए एक बार पुनः तारा को सम्बोधित कर कहा,—'मै तो समझता हूँ कि यदि यही दशा रही तो आपका बेटा एक न एक दिन बहुत बड़ा धनुर्धारी होगा।'

अपने बच्चे की प्रशंसा सुनकर किस माँ को प्रसन्नता नहीं होती।

फिर तारा तो माँ से भी कुछ अधिक थी। पर यह केवल प्रसन्न होने का समय नही था। उसने पुनः पूछा—'दूसरे अरबी सैनिक का क्या हुआ ?'

'अरे वह तुरन्त भागा, भला वह हम लोगो के सामने टिक सकता है।' उसकी छाती उत्साह में फूली जा रही थी और चरण आगे बढे चले जा रहे थे।

उसके चले जाने के बाद तारा धीरे-धीरे लौटी और सोचती रही—भोज ने किया तो बड़ा अच्छा काम। ईश्वर ने चाहा तो जरूर दोहन की बातें सत्य होगी। पर इस समय यह करने का अवसर नही था। कुछ समय तक अभी आर उसे शान्त रहना चाहिए था। जो सैनिक मारा गया है उसके साथी जरूर भोज का पता लगाने की चेष्टा करेंगे।. और तब हो सकता है रहस्य खुल जाय। आग पर इतने दिनो तक जमायी राख उड़ जाय और हमारा सारा प्रयत्न व्यर्थ हो जाय।

इन्ही विचारो में डूबी वह घर आयी। सन्ध्या हो गयी थी दूर से ही उसने देखा कि द्वार पर पुरोहित जी अपनी छोटी और मोटी लकडी के सहारे टहल रहे हैं। आते ही उन्होंने उससे पूछा,—'कहाँ चली गयी थी तारा ?'

'अरे कुछ मत पूछिए पुरोहित जी...।' फिर तारा ने सारी कहानी कह सुनायी।

ध्यान से सुनने के बाद पुरोहित जी बोले—'क्या करोगी तारा आज देश की हालत बडी खराब है। अरब वाले लगातार सिन्ध पर आक्रमण करते आ रहे हैं। उनकी शक्ति अब और भी बढ गयी है। श्री हर्षराज के मरने के बाद सिन्ध को हालत दिन प्रति दिन बिगडती चली जा रही है। श्री हर्षराज की मृत्यु के बाद उसका ब्राह्मण मत्री चचा गद्दी पर बैठा। चच भी मारा गया, उसका बेटा दाहिर भी मारा गया...और अन्त में रानी स्वयं अरबो का सामना करती हुई मारी गयी। यह सब केवल दो तीन वर्षों में हुआ। अब तो उनका जोर बहुत हो गया है। वे महाअग्नि

की विकराल लपटों की तरह बढ बढकर बहुत दूर-दूर तक छापा मारते हैं ।. तुम्ही समझो, कहाँ सिन्ध का मकरान और कहाँ पाटण, बडनगर ईडर और नागहृद इतना कहकर वह रुका और कुछ सोचते हुए पुनः बोला—'और देखो आज दो अरबी सैनिक इधर भी आ गये । . पता नही क्या होने वाला है ।' उसके मस्तक पर चिन्ता की तीन गहरी रेखाएँ उभर आयी मानो त्रिपुंड लगा हो ।

'अच्छा तुम बैठो । मै अभी पहाडी के पास जाता हूं । देखूँ क्या बात है ।' इतना कहकर वह भीतर पगडी बाँधने के लिए आया । तारा ने उसे रोकना चाहा,—'रहने दीजिए अब तो भोज के आने का समय हो गया है । आज मैंने उससे जाते समय ही कह दिया था कि जरा जल्दी आना ।'

'मान लो उसे देर हो गयी तब ?'

'पर आप के लिए यह स्थान भी तो बिल्कुल अपरिचित है । कहाँ जाइएगा ? क्या करिएगा ?'

'तारा जब मै इस ससार में आया था तब संसार भी मेरे लिए अपरिचित था ।' इतना कहकर वह जोर से हँसा । बड़ी शीघ्रता से भीतर गया और पगड़ी बाँधकर चल पड़ा ।

किन्तु जल्दी ही पुरोहित जी लौटे । तारा भगवान शंकर की प्रतिमा के सामने घी का दीप जला चुकी थी । अँधेरा बढ चला था । जब वह पिछवाड़े दालान में गई तब बाहर कही से गाय के गले में बंधी घंटी की आवाज सुनायी पड़ी । गायें आ गईं । भोज भी आता होगा । यह सोच कर तारा घर के बाहर आयी । भोज कही तो नही दिखायी पड़ा । हाँ पुरोहित जी आते दिखाई पडे ।

'भोज भी आ रहा है। उसको लोग गमेती के द्वार पर ले गये हैं।' आते ही पुरोहित जी ने कहा और बाहर पड़ी खाट पर ही बैठ गये।

'मेरी राय मानो तो तुम इस स्थान को छोड़ दो ?' वह पुनः बोले।

'क्यो, क्या बात है ?' तारा ने पूछा।

'मै आज प्रातः काल से ही सोच रहा हूँ और इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ।' फिर उन्होने अपने हाथ का डण्डा चारपायी के सिरहाने रखा और पगडी खोली। और बड़े आराम से कुछ लेट कर तथा कुछ बैठे-बैठे बोलते रहा,—'इसमे सन्देह नही कि यहाँ कुँवर जी के जीवन की सम्पूर्ण सुरक्षा है, पर हमे उसका जीवन ही नही चाहिए। हमें तो उसमे ऐसा ओज और पराक्रम चाहिए जिस के द्वारा वह महाराज महेन्द्र की गद्दी को सुशोभित कर सके। राजा होने के लिए केवल वल और शक्ति की ही आवश्यकता नही होती। पशुओ में भी बल और शक्ति होती है, पर वह राज तो नही कर सकते। मै समझता हूँ कि यहाँ रहकर कुँवरजी एक अच्छा पशु बन सकता है। तुम्हारे साथ है इसलिए बहुत होगा तो अच्छा आदमी बन जायगा। ' फिर उन्हे खाँसी आ गयी। लगातार वह कुछ समय तक खाँसते रहे। लगता है ऋतु परिवर्नन के कारण उनका स्वास्थ्य कुछ खराब हो गया है। तारा ने कहा,—'रुकिए पानी लाती हूँ।' शीघ्र ही पानी और अपने बैठने के लिए छोटी सी मचिया लेकर आयी। अब तक तो वह खडी-खडी ही पुरोहित जी की बातें सुन रही थी।

'तुम्ही सोचो दिन भर तो वह जंगल मे भीलों के साथ रहता है। संध्या को जब आता है, तब वह या तो 'गमेती' के यहाँ चला जाता है या अपनी बाल भील मण्डली मे नाचता, गाता और मौज लेता है। तुम्हारे साथ तो उसे रहने के लिए समय ही नही है जो तुम उसमे कुछ उच्च संस्कार भर सको।'

'यह बात तो ठीक है। लेकिन मै भरसक प्रयत्न करती हूँ कि वैदिक संस्कार उस में पड़े।'

'यह तो मै स्वयं सोचता हूँ। पर जिसके साथ बालक एक घन्टे रहेगा उसका अधिक प्रभाव पडेगा या उसका पडेगा जिसके साथ वह प्रतिदिन दस घन्टे बिताता है।'

'......' तारा चुप थी।

'इसी से मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि तुम्हे यह स्थान शीघ्रातिशीघ्र छोड देना चाहिए और किसी ऐसे स्थान में चलना चाहिए जहाँ सात्विक प्रवृत्ति और उच्च विचारो के लोग हो. . यहाँ तो मै केवल एक दिन के लिए आया हूँ मेरा जी ऊब गया। कैसे गन्दे रूप से वह अन्त्येष्टि सम्पन्न हुई। मरी हुई नारी का पेट चीर कर बालक निकाला गया। कैसा जघन्य दृश्य! राम . राम छी छी।' उसकी झुरियो तक से घृणा टपक पडी। बातचीत का सिलसिला बिल्कुल बदल गया।

'प्रातःकाल मंगला की बहू का काम खतम हुआ या इसके बाद भी ये लोग कुछ करते है?'—उन्होंने पूछा।

'अभी तो आज के तीसरे दिन ये लोग जाकर श्मशान पर उसकी अस्थियाँ चुनेंगे और नदी मे उसका विसर्जन करेंगे। इनका ऐसा विश्वास है कि जब तक अस्थियाँ नदी मे डाली नही जाती तब तक मृतात्मा धरती पर ही रहता है और यदा-कदा घर भी लौटा करता है।. इसके बाद अब पडने वाली पहली होली, दिवाली या रक्षा बन्धन के दिन इन के यहा 'सोग भोगणा' होगा।'

यह 'सोग भोगणा' क्या है?'

'सोंग भोगणा' एक प्रथा है। उस दिन मृत प्राणी के सगे सम्बन्धी एक स्थानपर बैठकर उसका स्मरण कर खूब रोते है। बाद में यह शोक विस्मृत किया जाता है और सामुहिक रूपसे खूब शराब दी जाती है।. जब तक 'सोग भोगणा' नही होता मृतात्मा के घर वाले नाच गाने या किसी आन्दोत्सव मे भाग नही लेते।

'बाप रे बाप' हर काम में शराब ! हर काम मे मॉस...मै सच कह रहा हूं तारा, यदि तुम भोज की भलाई चाहो तो यह स्थान अविलम्ब छोड़ दो ।' पुरोहित जी ने कहा ।

'पर चलूं भी तो कहॉ चलूं । कोई ऐसा स्थान मिलना भी तो चाहिए, जहॉ सुरक्षा भी हो और भोज के संस्कार भी सुधरें तारा ने कहा ।

पुरोहित सत्यनारायण कुछ देर तक सोचते रहे फिर बडी गम्भीरता से बोले,—'क्यो, नागह्रद हो चली चलो । यहॉ से कोई दूर भी नही है । शैव ब्राह्मणोंकी बस्ती है । पूर्ण सात्विक वातावरण मिलेगा । मेरा वहॉ के बहुत से लोगो से परिचय भी है ।'

नागह्रद का नाम सुनकर तारा कुछ रुक कर बोली—'. .लेकिन पुरोहित जी भोज मे जो सस्कार बैठने थे वह तो बैठ गये । अब क्या उसमे कोई परिवर्तन हो सकता है ?'

'क्यो नही ! . मै तो समझता हूॅ कि अभी बहुत कुछ हो सकता है ।'

पुनः तारा कुछ विचार कर बोली'—' .पर जैसा मै सोचती हूॅ, भोज यह स्थान छोड़ना जल्दी पसन्द नही करेगा ।'

'हॉ ऽऽ, अब इसी से समझो, कितना मोह है उसे इस गॉव से, यहॉ की अध परम्परा से, यहॉ के लोगो से । वह इन्हे अपना समझता है । अपने को उन से जरा भी भिन्न नही समझता । ...तुम्ही देखो रंग रूप को यदि छोड़ दिया जाय तो भोज और इन असभ्य भीलों में अन्तर ही क्या है ?'

काफी अंधेरा हो गया था । बातचीत बडे गम्भीर वातावरण में चल रही थी । तभी तो तारा गाय दुहना तक भूल गयी । पर जब भोज को लेकर बाल मडली दरवाजे पर आयी तब पुरोहित और तारा उठकर घर मे चले गये उनकी बातचीत वही समाप्त हो गयी ।

आज भील बड़े प्रसन्न थे जैसे उन्होंने कोई महान युद्ध ही जीत लिया हो। सब भोज के साहस और अचूक निशाने की प्रशंसा करते अघाते नहीं थे। इस बाल मंडली में केवल बालक ही नही थे। युवा और वृद्ध भी दिखायी पड़ रहे थे–बिल्कुल एक अच्छा छोटा सा जलूस हो समझिए। उनकी खुशी देखकर ऐसा लग रहा था जैसे आज गहरे में छनेगी और रात भर नाच गाना होगा।

प्रशंसा वह हवा है जो महत्वाकाक्षा के गुब्बारे को फुलाकर खूब बडा कर देती है। भोज की महत्वाकांक्षा भी अपनी चरम सीमा पर थी। वह महान स्वप्न देख रहा था।

× × ×

पुरोहित उसके दूसरे ही दिन चले गये। तारा कहीं जाने वाली है। यह समाचार पूरे फला मे बिजली की तरह फैल गया। किन्तु कहाँ जायगी और क्यो जा रही है। इस सम्बन्ध में लोग बिल्कुल नही जानते थे। कई बार लोगो ने तारा से पूछा भी, पर वह बिना उत्तर दिये केवल मुस्कराकर रह जाती थी। अभी तक इस सम्बन्ध में उसकी एक मात्र गमेती से बातें हुई हैं। गमेती पहले तो राजी न हुआ। बाद में उसने सोचा कि दूसरो पर अधिकार ही कितना! जब तक इनका अन्न जल यहाँ था तब तक तो ये रहे, अब यदि जाते है तो इन्हे रोक कौन सकता है? वह मोह तथा ममता भरे स्वर में केवल इतना बोला'. मुझे याद है जिस दिन मेरा छोटा बेटा प्रभु हुआ था, उस दिन आप लोग आये थे। आज वह कितना बडा हो गया। करीब ९, १० वर्ष तक हम लोग साथ रहे। अब कैसे कहूँ कि आप चली जाइए .किन्तु मैं आपको रोक भी तो नही सकता, आखिर आप पर मेरा अधिकार क्या? .'

गमेती आगे कहता रहता पर तारा बीच में ही बोली—'नहीं सरदार

ऐसा मत सोचिए। हम लोगो पर आप का पूर्ण अधिकार है। यह आपकी कम कृपा नही थी कि नौ वर्ष आपकी शरण में सुरक्षित पडे रहे। इस उपकार का बदला कभी भला हम दे सकते है ?'

'खैर...अब आप जिसमे अपना भला समझें, भोज का भला समझे वही करें।' इतना कहकर गमेती कुछ सोचने लगा।

'ऐसा लगता है आप हम लोगो के चले जाने से नाराज ही होंगे।' तारा बोली।

'ना. ना...आप कभी ऐसा मत सोचिए।...सचमुच मैं बहुत प्रसन्न हूं. .और उस दिन मै और भी प्रसन्न होऊगा, जिस दिन भोज के सम्बन्ध मे मैं जो कुछ सोचता हूँ सब सत्य हो जायगा।'

तारा चुप ही थी। मौका देखकर बडी चतुरता से मुस्कराते हुए उसने कहा—'पर एक बड़ी समस्या है सरदार।'

'क्या ?'

'भोज राजी ही नही होता नागह्रद जाने के लिए।'

'तो पहले आप उसे राजी कीजिए।'

'मैने उसे बहुत समझाया पर वह नही मानता। मेरा विचार है यदि आप मेरी सहायता करें, तो कदाचित वह मान जाय।'

'भला मुझसे जो हो सकेगा मै अवश्य करूँगा।'

'आप कर तो सकते हैं पर कदाचित इतना ही कहकर तारा चुप हो गयी।

'क्यों, ऐसी क्या बात है ? मै वचन देता हूं कि अवश्य आपकी सहायता करूंगा। यदि किसी वस्तु की जरूरत हो, तो आप उसे अवश्य मांगे ?'

'माँगू ?'

'हाँ हाँ जरूर माँगिए । आप इतनी प्रतिज्ञा क्यों कराती हैं ?. भील केवल एक बार कहता है ।'

'भोज केवल एक शर्त पर चलने को तैयार है कि बाली और देव भी उसके साथ चले ।' इतना कहकर तारा दाँतों के नीचे जीभ दबाकर थोड़ा मुस्करायी, फिर आँखें गड़ाकर धरती देखती रही ।

'गमेती' सोच में पड़ गया । वह बहुत देर तक सोचता रहा । गम्भीर समस्या उसके सामने थी । जो उसके दिल के टुकड़े थे, जिन्हें उसने कभी अपनी आँखों से ओझल नहीं किया था, आज वह उन्हीं दोनों बच्चों के सम्बन्ध मे क्या उत्तर दे ? वचन भी दे चुका है, अपनी जाति का स्मरण कर उसने वचन दिया है । इस गहन जटिलता में व्यग्र होकर वह बोला—'खैर, कल सबेरा होने के पहले ही आप आइए मैं व्यवस्था करूँगा ।' इतना कहते-कहते उसका गला भर आया । आँखों मे बादल छा गये, पर बरसे नहीं, केवल मधुर निनाद करते रहे । रात्रि के अन्धकार मे उन आँखों की भावाकुल भाषा पढ़ी तो न जा सकी, पर उनकी आन्तरिक वेदना का अनुभव तारा को हो गया ।

'गमेती' चारपायी से उठा और भीतर चला गया । न बोला, न तारा को नमस्कार किया । उसके सामने ही बाली और देव भेड़ें लेकर आये थे । उनसे भी उसने कुछ नहीं कहा । वे बेचारे प्रश्न वाचक चिन्ह की भाँति शान्त खड़े रहे ।

तारा उन बच्चों को पुचकार कर चल पड़ी । यदि वह वहाँ रुकती तो कदाचित वे बेचारे भी कुछ पूछते क्योंकि भोज ने उससे आज बहुत सी बातें बता दी थीं ।

अन्धकार की छाती चीरती तारा चली आ रही थी । गड़ेरिये अपनी भेड़ें लेकर फला में आ गये थे । किसी किसी के द्वार पर हुर्दगबाजी भी

शुरू हो गयी थी। बामा के घर के पास उसे भीड दिखायी पडी। लोग वहाँ बडे शान्त खड़े थे। तारा ने रुककर देखा, भीड़ के बीचो बीच बाला की स्त्री बैठी 'हवुआ' रही थी। उस पर 'डाइन' आई थी। ओझा मंत्र पढ-पढकर उस पर जल छिड़कता जाता था और चिल्लाता था,—'देख मै अभी तुझे बॉध देता हूं। तब तू नाक रगड़ती रह जायगी, नही तो बता कि तू कौन है ?' स्त्री चीखती—'चल, चल तेरे ऐसे बहुतो को देखा है। मैं इसे खाकर ही रहूँगी।

तारा की मनःस्थिति ऐसी नही थी कि वह वहां अधिक देर तक खडी रहती। ऐसे तमाशे उसने नौ वर्ष के यहाॅ के जीवन में बहुत देखे हैं। उसके मस्तिष्क में तो विचार चक्कर मार रहे थे। वह दो एक क्षण रुककर चल पड़ी।

जब घर के निकट आयी तो देखा गाय बाहेर ही टहल रही है। दरवाजा दोनो पट खुला है। ज्यों ही उसने घर में पग रखा, भीतर दालान में दो व्यक्तियो के बातें करने की आवाज सुनायी पडी। एक तो भोज है, पर दूसरी अत्यन्त पतली आवाज किसी स्त्री की मालूम पडती है। यह बोली भी तो पहचानी ही है। उसने सोचा। वह दबे पॉव और आगे बढी। रसोई की कोठरी का भी दरवाजा खुला था। वह भोजन बनाकर ढाक कर गयी थी, पर इस समय बर्तन खुले थे। कुछ जूठे बर्तन बिखरे भी थे। लगता है भोज ने खाना खा लिया है। किन्तु भीतर से बराबर बातें सुनायी पड़ रही थी।

'तो तुम जरूर चले जाओगे।' यह पतला नारी स्वर था।

'लगता तो ऐसा ही है, क्योंकि माताजी नही मानती।'

'तुम जाना चाहते हो या नही ?'

'मै तो नही जाना चाहता चम्पा।...पर माताजी की आज्ञा है कैसे क्या कहूँ।'

फिर कुछ समय तक कोई आवाज नही सुनायी पडी।

'तो मुझे भी साथ ले चलोगे ?'

'कैसे कहूँ ? तुम माताजी से कहो, देखे वह क्या कहती है।'

'और मान लो वह मुझे न ले गयी, तब तो तुम मुझे भूल जाओगे भोज।'

'नही चम्पा, ऐसा नही होगा। नागहृद कोई दूर तो नही है। दूसरे-तीसरे जरूर मै आता रहूँगा।'

'हूँ. .अभी तो तुम ऐसा कहते हो, पर पता नही यह याद रहेगा तुम्हें या नही।. .जरूर तुम मुझे भूल जाओगे भोज।. .इसके बाद उसकी हल्की, काँपती और अपने में सिमिटती हुई सिसकन सुनायी पडी। फिर वह बिना कुछ कहे कोठरी के बाहर निकली। भोज खड़ा रहा—सिर्फ खड़ा रहा।

अरे माताजी तो रसोई घर में बैठी जूठे बर्तन मल रही हैं।—चम्पा ने कोठरी के बाहर निकलते ही देखा। उसे काटो तो लोहू नही। बातें तो जरूर सुन लिया होगा उन्होंने। क्या सोचती होंगी वह। कही बाबा से कह न दें। ..अरे तब तो बात फैल जायगी—उसने सोचा। प्रेम घनत्व चाहता है विस्तार नही।

फिर वह बड़ी तेजी से रसोई के दरवाजे के सामने से निकली जिससे तारा देख न सके और वह बाहर चली जाय। किन्तु सधी सधायी आँखो से भला छूट सकती थी! तारा ने उसे देख ही लिया। उसने पुकारा—'चम्पा .अरे वो चम्पा।'

पर चम्पा न लौटी।

× × ×

मुँह अँधेरे ही तारा भोज को लेकर गमेती के घर की ओर चल पड़ी। चारो ओर शान्ति थी। अभी आधा 'फला' सो रहा था। 'गमेती' द्वार पर चारपायी बिछा कर बैठा था। उसके पैर के एक ओर बालो और दूसरी ओर देव बैठे थे। दरवाजे पर मचिया पर बच्चे की माँ बैठी थी। इस समय प्रकृति की तरह वे भी शान्त थे।

जब तारा आयी, सभी उठ कर खड़े हो गये। बालो और देव के बीच में भोज बैठा। इसके बाद गमेती तारा को लेकर वहाँ से हट गया और एक कोने मे जाकर बहुत धीरे-धीरे कुछ बातें करने लगा।

आकाश पर कुछ-कुछ सफेदी दिखायी पड़ने लगी थी। प्रातःकालीन मद हवा बह रही थी। पुनः चारपायी के पास आकर गमेती ने तीनों बालकों को सम्बोधित करते हुए कहा—'आज तुम तीनो को एक साथ प्रतिज्ञा करनी है कि दुख-सुख में सदा साथ रहोगे और कभी झगड़ा नही करोगे।'

' तीनो चुप थे।

'और देखो इस प्रतिज्ञा के बाद तुम आपस में कभी मत लड़ना।... और मान लो लड़ाई का मौका भी आये तो भोज जो कहेगा उसे मान लेना।. बालो तुम जरा ध्यान रखना। अवस्था में बड़े होकर भी भोज को बड़ा समझना।' फिर उन्होंने तीनो को सम्बोधित करते हुए कहा,—'बोलो स्वीकार है?'

तीनो इस बार भी चुप थे।

'बोलते क्यों नही, चुप क्यो हो? प्रतिज्ञा बिना बोले नही हो सकती।'

'हाँ स्वीकार है।' इस बार तीनों ने धीरे से कहा।

फिर सब के सब एक महुए के वृक्ष के नीचे गये। भील महुए के वृक्ष को बड़ा पवित्र समझते है। गमेती की पत्नी गगरी में जल लिये थी और गमेती के हाथ में नंगी तलवार थी। चैत्र का महीना था। रात भर महुआ चूआ था। नीचे की धरती पर सफेद महुए की गद्दी सी बिछ गयी थी। भीनी-भीनी गन्ध बड़ी मोहक लग रही थी।

बाली की माँ ने एक स्थान पर महुए हटा कर जमीन साफ किया। जल छिड़का। तब गमेती ने बीचों बीच अपनी तलवार रख दी, उसकी नोंक पर नये चूए हुए कुछ महुए रखे गये। इसके बाद गमेती निम्न-लिखित वाक्य क्रम से कहता रहा। पहले वह कहता फिर तीनो बच्चे उसे दुहराते।

'हम लोग कभी नही लड़ेंगे।'

'हम सदा भोज की आज्ञा मानेंगे।'

'प्राण देकर भी भोज की प्रतिष्ठा की रक्षा करेंगे।'

तब भोज ने तलवार की नोक पर से उठा कर कुछ महुए अपने हाथ से बाली और देव को खिलाये और जब स्वयं खाने लगा तब एक महुआ टप से उसके हाथ पर चू पड़ा। गमेती प्रसन्न हो बोला—यह शुभ शकुन है। तुम्हारी मित्रता दृढ़ रहेगी। यह पेड़ तुम्हे आशीर्वाद दे रहा है।

इस कृत्य के पश्चात् भोज ने उसी तलवार से वहाँ एक गड्ढा बनाया। बाली और देव को गमेती ने एक-एक छोटा पत्थर का टुकड़ा दिया और कहा,—'इसे उस गड्ढे में एक साथ फेंक दो।' उन बच्चो ने ऐसा ही किया। 'बस तुम्हारी मित्रता की अब पक्की प्रतिज्ञा हो गयी।. .जब तक

भोज कहे उसके साथ रहना। यदि उसकी आज्ञा मिले तो कभी-कभी अपने इस लाचार बाप को भी याद कर लेना।"..इतना कहने के बाद वह बोल न सका। उसकी आँखें चूने लगी। सचमुच सब रो पड़े।

उधर धरती के आँसू पोंछती उषा-अम्बर में खिल-खिला रही थी—कदाचित् भीलों की प्रतिज्ञा करने के इस ढंग पर।

३

यह नागह्रद है—प्रकृति के रमणीक अंक मे बसा हुआ छोटा सा ग्राम जिसे बूढे और बच्चों की ममतामयी वाणी ने नागह्रद से नागदा कर दिया है। यहाँ शैव ब्राह्मणो की बस्ती है। अन्य जाति के भी एक दो घर है। पूर्ण ग्राम पूरा व्यवस्थित है, स्वच्छ है। यहाँ का शान्त और सात्विक जीवन, गंगाजल की भाँति पवित्र और शारदीय अनभ्र नभ की भांति निर्मल वातावरण पारलौकिक आनन्द की सृष्टि करता है। ग्राम के चारो ओर दीवार की भाँति खड़ी अरावली की हरी-भरी पहाड़ियाँ हैं, जो यहाँ के परमार्थी ब्राह्मणों की भांति ब्राह्म मुहूर्त में अत्यन्त ध्यानावस्थित दिखायी देती हैं। ग्राम के हृदय में एक शिवालय है, जहाँ प्रातः और सन्ध्या सभी लोग भगवान शंकर के दर्शन के लिए आते हैं। सब मिल कर शिवस्तोत्र की

पाठ करते हैं। इस पवित्र सत ससवेत स्वर से पूरा ग्राम गूँज उठता है। सोमवार को तो एक बडी रात रहते ही रुद्री पाठ बैठ जाता है और दिन चढे तक निरन्तर-मंत्र रव गूँजता रहता है। प्रदोष का पूरा दिन ही पूजन में बीतता है।

यहाँ के अधिकांश लोग खेती करते हैं। इनके छोटे-छोटे खेत अरावली के पास ही है। प्रकृति के वरदान और भगवान् मदन मर्दन की कृपा से उन्हे अधिक श्रम किये बिना ही खेत में खाने भर के लिए पर्याप्त उत्पन्न हो जाता है। यहाँ के कुछ परिवार के लोग बाहर ही रहते हैं। कुछ किसी न किसी राज दरबार में है और कुछ किसी-किसी बड़े तीर्थ मे वे वर्ष मे एक दो बार आते रहते हैं और अपमी सात्विक कमायी का थोडा बहुत भाग तथा देश-विदेश के समाचार यहाँ वालो को दे जाते हैं।

पुरोहित सत्यनारायण की जन्मभूमि यही है, पर अब उसके परिवार का कोई रह नही गया है, फिर भी दूर के रिश्ते के अपने कई लोग हैं। पहले तो वर्ष में वह कई बार आता था, पर इधर बहुत दिनो बाद आया था, लोगों ने उसकी खूब आवभगत की। उसके आने की प्रसन्नता में एक दिन शास्त्रार्थ का भी आयोजन हुआ। पर दो-तीन दिन रहकर वह चला गया।

उसकी ही कृपा से तारा के लिए यहाँ रहने की उचित व्यवस्था हो गयी थी। उसने अपने सभी मित्रो से सारा हाल कह दिया था। सब बड़े प्रसन्न हुए। पंडित रुक्मणि ने तो यहाँ तक कहा—यदि भगवान शंकर चाहेगे तो यहाँ उन्हे किसी बात की कमी न रहेगी। दिन सबके समान नही जाते। आज ऐसा है! हो सकता है शीघ्र ही उनके भाग्य का नक्षत्र पूर्ण ज्योति बिखेर कर चमक उठे।'

सचमुच वहाँ के लोगों ने भोज को हर प्रकार की सुविधा प्रदान की। अरावली के निकट ही एक घर उसे रहने के लिए दिया गया। यह पंडित चन्द्रशेखर का घर है। पर जब से वह देशाटन करने गये है, खाली पडा है। उनके भी परिवार मे कोई अब बचा नही है। तारा, भोज, बाली और देव इन चार प्राणियो के लिए यह घर काफी अच्छा है।

जो लोग तारा और भोज से परिचित नही थे उनमें तरह-तरह की बातें होती थी! कोई कहता—ये पण्डित चन्द्रशेखरजी के दूर के रिश्तेदार है। कोई कहता,—'नही, यात्रा करने आये है। दो-चार दिन रहकर चले जायेंगे।' कोई कहता—ब्राह्मण तो नही लगते, कोई इतर जाति के मालूम पडते हैं। गाँव में उनका आना ठीक नही।'...पर ऐसी शंकाएँ बहुत दिनो तक जीवित नही रही। धीरे-धीरे सब जान गये!

भोज को यहाँ कुछ दिनो तक बिल्कुल अच्छा न लगा। यहाँ की पद्धति, यहाँ का व्यवहार, यहाँ का वातावरण सब कुछ उसे अपने मेल का जैसे नही मालूम होता था। काम यहाँ पर भी उसे ब्राह्मणो की गाये चराने का ही था, पर पहले की तरह बहुत तडके नहीं जाना पडता था। अच्छी तरह जब दिन चढ आता था तब वह गायो को लेकर अरावली की पहाड़ियों में चला जाता था। बाली और देव साथ ही रहते थे। पर विचित्र बात है, माना कि स्थान बदल गया था, किन्तु सब कुछ तो वही था, फिर मन क्यों नही लगता था। वही वंशी, वही धनुष, वही बाली और देव, वही गायों का चराना। यदि गाँव मे मन नहीं लगता था तो जंगल मे तो लगना चाहिए था, पर वहाँ भी वह खिन्न दिखायी देता। यदि उसकी वंशी बजती तो वह भी उदासी के स्वर में। यदि कभी वह अपने मित्रो के साथ शिकार खेलने निकलता तो वह भी अनमना-सा। हाँ, जब कभी बाली या देव उससे चम्पा की बातें छेडते तब उसकी आकृति पर अचानक हरियाली आ जाती थी, मानो सूखते धान पर पानी पड़ जाता।

अब भी भोज ब्राह्म मुहूर्त मे ही जागता है, जब वाली और देव सोते रहते हैं। वह सन्ध्या करता है। और तारा के साथ शिवालय पर शिव वन्दना के लिए उपस्थित होता है। किन्तु बन्दना उसे नही आती। तारा तो उन लोगो के सम्मिलित स्वर मे गुनगुनाती भी है, पर भोज खड़ा रहता है और अतोऽ निरपेक्ष दृष्टि से पण्डितों का मुख देखता रहता है।

एक दिन उसकी यह स्थिति देखकर रुक्मणि ने तारा से कहा,—'कहिए' भोज को शिवस्तोत्र कंठ नही है क्या ?'

'नही महराज। भला उसे यह सब कंठ करने का अवसर कहाँ था। किसी प्रकार मैने सन्ध्या कंठ करा दी है और तो अब तक कुछ भी न करा सकी।'

'पर थोड़ा कुछ और भी करा देना चाहिए था।'

'अरे महाराज प्राण के तो लाले पड़े थे, क्या करती, क्या न करती ? अब आप लोगो की शरण में आयी हूँ...कृपा होगी तो कुछ न कुछ उसे आ जायगा।

'अच्छी बात है। सन्ध्या को जब वह गायें लेकर लौटे तो उसे खिला-पिला कर मेरे यहाँ भेज दिया करो।'

उस दिन से रुक्मणि भोज को वैदिक शिक्षा देने लगे।

× × ×

दिन के बाद दिन खकते चले गये।

इधर गाँव मे एक विशेष चर्चा छिड़ गयी है। स्पष्ट तो कोई कुछ नही कहता पर मुँह से मुँह बात एक मुँह से हजार मुँह की हो चुकी है।

यहाँ तक कि अरावली पहाड़ियों पर घास काटने जो भिलनियाँ आती है वे भी मुँह ढाककर इस पर दिन दिन भर फुस फुसाहट करती है। यह बात उस बात की तरह फैली जो दिखायी तो नही पड़ती, पर जब चलती है तो सबको लगती है बालको मे भी कुछ सुनगुन थी, तभी तो इसने एक घटना का रूप ले लिया।

उस समय भोज अरावली की एक शिला की छाया में मस्ती से बैठा वंशी बजा रहा था। गायें मुक्त चर रही थी। बाली और देव भी दिखायी नही पड़ते थे। मालूम होता था कि वह कही चले गये है। तब तक ग्राम की बाल मंडली उधर निकल आयी। यज्ञोपवीत युक्त वे बाल धनुधारी हाथो में तीर लिए हुए भगवान राम की याद दिला रहे थे।

उन बालकों में से एक ने सामने डाल पर बैठे कपोत पर शर सधान किया पर लक्ष्य चूक गया। 'ऐसा साधारण लक्ष्य चूक गया'। .हे हे। भोज हँस पड़ा और अपने स्थान से उठकर उन बालको के पास जाकर धनुष मागते हुए बोला—'दो मुझे दो, मै लक्ष्य मारता हूं और बैठे हुए नही, उड़ते हुए कपोत को मार गिराता हूँ।'

उस बालक ने धनुष नही दिया वरन् मुँह चिढाते हुए बोला— 'ऐ-ऐ-ऐ चोर कही का।' इतना कहकर वह भागा। उसके पीछे शेष बालक भी भाग गये।

भोज खड़ा ही रहा। उसने अपने लिए आज जीवन मे पहली बार चोर शब्द सुना था। वह सोचता, ये ब्राह्मण के बालक है, पर इनके संस्कार इतने गन्दे है। तब तक एक बालक और बगल से उसके निकट आया और पुनः मुँह चिढाकर बोला—'ऐ अऽऽ. .चला है बाण चलाने। पहले जाकर चोरी से गाय का दूध दुहकर पी। फिर बाण चलाना।'

'क्या व्यर्थ की बात करते हो।' इस बार भोज तड़पा।

'व्यर्थ की बात है ? चोरी से गाय का दूध पीना व्यर्थ की बात है ?'

'अरे जरा इसकी सूरत तो देखो कैसा भैसा ऐसा मोटाया है।' दूसरा लड़का बोला।

'चोरी का माल खाता है तभी तो।'—तीसरा बालक बोला।

'पर बनता है कैसा ईमानदार, जैसे कुछ जानता ही नही।' यह पहले लड़के की आवाज थी।

'अरे पक्का चोर है।' सबने एक साथ मिलकर कहा।

फिर जैसे नारा लगाते हुए लौट पड़े—'भोज चोर है चोर, भोज चोर है चोर...भोज चोर है चोर...'

बाल मंडली तो लौट पड़ी पर उनकी बातें अब भी भोज के मस्तिष्क में चक्कर काट रही थी। ये सब मुझे चोर कहते है! आखिर क्यो ? इन्हे क्या अधिकार है ? क्या मै इनके आश्रित हूँ या इनके द्वार पर बैठकर रोटी तोड़ता हूँ ? अपनी मजदूरी करता हूं। खाता हूँ। किसी का क्या साहस जो हमे चोर कहे। किसकी चोरी नही की, किसी का जमा नही लूटा, तब तो यह सुनने को मिलता है। यदि कुछ करता तो भला इस गॉव के लोग और क्या करते ? इससे तो अच्छा था हमारा पाराशर। जहॉ कभी एक शब्द भी सुनने को नही मिला। कैसे अच्छे थे वहॉ के लोग जो मुझे सिर ऑखो पर लिए रहते थे।

इन्ही विचारो में डूबा वह पुनः उस वृक्ष के नीचे आया जहां पहले बैठा था—और चुपचाप बैठ गया। उसके बायें हाथ में वंशी थी, और दाहिनी हथेली के सहारे कपोल रखें तथा गर्दन झुकाए सोचता रहा। ऊपर डाल पर बैठे पंछी चहचहा रहे थे। तीसरे पहर के थके मादे सूर्य को कमर

झुक गयी थी। मै अब इस गाव मे बिल्कुल नही रहूँगा। जहाँ के बच्चे ऐसे हैं, वहाँ के आदमी क्या होगे।—उसने सोचा।

फिर गायों को एकत्र करने के लिए उसने बंशी बजानी आरम्भ की। धीरे-धीरे सब गायें आ गयी। पर अभी श्यामा नही आयी। श्यामा अनंगपाल की गाय है। बाप रे बाप वह बूढ़ा ब्राह्मण कितना खुर्राट है। उसकी बशी पुनः बजने लगी, इस बार पहले से तीव्र और आकर्षक।

फिर भी श्यामा दिखायी न पडी। अब उसने दूर दूर तक जाकर भी बंशी बजायी, पर कही भी वह नजर न आयी। निराश वह सोचने लगा—क्या यह नया कलंक भी लगेगा भगवान!

अभाव से अधिक अभाव की व्यग्रता मनुष्य को व्याकुल करती है। और मै यदि यह कहूँ कि भोज अभाव से नही वरन् अभाव की व्यग्रता से व्याकुल था तो कदाचित भूल नही होगी। तब तक उसे बाली और देव दूर पहाडी पर आते दिखायी दिये। अब इनकी सूरत दिखायी पडी। दिन भर पता नही कहाँ घूमते रहे। भोज मन ही मन भुनभुनाया।

उनके पास आते ही वह तड़प उठा—दिन भर तो आप लोगो का पता ही नही रहता।. कहाँ विचरते रहते है?...यदि ऐसे ही रहना है, तो भइया तुम लोग अपना रास्ता पकड़ो।

अचानक भोज का यह रुख! बाली और देव कुछ समझ न सके। बेचारे अवाक रह गये। इतना तो अनुमान उन्हे लग ही गया कि कोई न कोई बात अवश्य हुई। फिर भोज थोड़ा नरम पड़ा और बोला—'देखो अभी तक श्यामा नही आयी!'

'नही आयी तो आती होगी। इसमें घबराने की क्या बात है?' बाली बोला।

'और अभी लौटने का समय भी तो नही हुआ।' देव ने कहा।

'पर मै आज जल्दी लौटना चाहता हूँ।...और फिर कभी गायें लेकर नहीं जाऊँगा। . मै इस गाँव मे नही रहूँगा अब,. बाली।' भोज की आकृति क्रोध से लाल थी।

'आखिर बात क्या हुई है।' बड़ी शान्ति से बाली ने पूछा। मानो उसने धधकती ज्वाला में बर्फ का पानी डालने की चेष्टा की हो।

'क्या बताऊँ क्या हुआ।. इस गाँव के लड़के मुझे चोर कहते हैं। कहते है कि चोरी से तुम गाय का दूध दुह कर पीते हो।. तुम्ही बताओ मै चोर हूँ इतने दिनो तक तो तुम्हारे साथ भी था।' वह आवेश मे काँप रहा था। अपना ऐसा अपमान वह सह नही सकता। आखिर था तो उसकी धमनियो में राजपूत का ही रक्त।

'अरे सब लड़के मूर्ख हैं, कह दिया होगा और भला किसकी हिम्मत है जो आपको कहे।' किसी प्रकार उन दोनों ने भोज को शान्त किया।

धीरे-धीरे सन्ध्या का रंगीन अंचल अरावली की पहाड़ियों पर बिछ गया। प्रकृति के अरुण अधर मुस्करा पड़े। दूर पश्चिम की ऊँची पहाड़ी पर श्यामा दिखायी पड़ी। बाली देखते ही बोला,—'ओ देखो वह आ रही है।'

'अब क्यो नही आयेगी, चलने का समय जो हुआ।' भोज बोला। तब उसके आते ही लोग घर लौटे।

आज जब भोज लौटा तब शिवालय में शिवस्रोत प्रारम्भ हो गया था लोग उधर ही बढे चले जा रहे थे। आज कुछ जल्दी ही पाठ आरम्भ हो गया तभी तो इतने लोग पिछड गये। कुछ भक्तजन मार्ग में ही पाठ करते चले जा रहे थे। पूजन की सामग्री और पुष्पो से भरी डालियाँ उनके हाथो में सुशोभित थी।

बाली ने भोज से कहा—'चलो भइया मन्दिर से होते चले।'

'मै मन्दिर नही जाऊँगा।' उसने उसी आवेश में कहा।

'पर भगवान् शंकर ने तो हमें चोर नही कहा है, फिर हम उनसे क्यो घृणा करें।' बाली के इस तर्क का भोज कोई उचित उत्तर न दे सका, पर वह जाना नही चाहता था। उसने बड़ी आनाकानी की, किन्तु बाली उसे ले ही गया। बह सोचता था कि वहाँ जाने पर अवश्य भोज के मन को शान्ति मिलेगी। वे उसी स्थिति मे शिवालय गये। भोज के हाथ मे वंशी और बडी लकडी थी। देव और बाली धनुष-बाण से युक्त थे। देवालय मे इन वीरो की क्या आवश्यकता ?—दो-एक भक्तों ने सोचा।

किन्तु जैसी बाली का आशा थी वैसा परिणाम उसे वहाँ न मिला। देवालय में भी भोज का मन अशान्त ही रहा। इसके कई कारण थे पहले तो रास्ते में गुरुजी 'रुद्रमणि' और अनंगपाल बात करते दिखायी पडे। शिवस्त्रोत का पाठ करते चले जा रहे थे, पर जब अनगपाल ने भोज को देखा तो उन्होंने पाठ करना छोड कर उसकी ओर सकेत किया और फिर रुद्रमणि से बात करने लगे। यह तो पता नहीं चला कि बात क्या हो रही थी, पर यह निश्चय था कि भोज के ही सम्बन्ध मे बात चल रही है।

संसार जैसा है वह हमें वैसा दिखायी नही देता, वरन् हमारा मन जैसा रहता है हम उसे वैसा ही देखते हैं। हो सकता है अनंगपाल भोज की प्रशंसा ही कर रहा हो, पर भोज को ऐसा लगा मानों गुरुजी से यह मेरे विरुद्ध कह रहा है। उस बूढे की झुकी कमर, जीर्णतन झुर्रियों भरी आकृति तथा बातें करने के ढंग-सब में भोज को अनुभव हो रहा था मानो उसके प्रति अपार घृणा भरी है।

जब शिवालय में आया तब भी वह लोगों के ध्यान का आकर्षण केन्द्र बना था। लोग शिवस्त्रोत का पाठ करते जाते थे, किन्तु बीच-बीच में पीछे मुड़ कर भोज को भी देख लेते थे। उसे ऐसा लगा मानों हर व्यक्ति

उससे घृणा कर रहा हो, मानों प्रत्येक आँख उससे कह रही हो—भोज तू चोर है। बाली और देव नेत्र बन्द किए ध्यानावस्थित खड़े थे। भोज चारो ओर देख रहा था, जैसे वह खोज रहा हो कि कौन मुझे देखता, किस की आँखे मुझे क्या कहती हैं।

अब वह बिल्कुल घबरा गया। उसे ऐसा लग रहा था जैसे मन्त्र का प्रत्येक शब्द उसके हृदय को दबा रहा है। घन्टे की प्रत्येक ध्वनि उसके मस्तिष्क पर हथौड़ा चला रही है। नगाड़े का विवाद उसके कान फाड़ रहा है। एक क्षण भी उसे वहाँ रुकना असम्भव हो गया। उसका सिर चकराने लगा। वह वहाँ से अकेला ही भाग चला। बाली और देव अब भी भगवान के ध्यान मे मग्न खड़े थे। तारा शिवालय के भीतर बैठ कर मन्त्र पाठ कर रही थी।

जब पूजा समाप्त हुई बाली ने चारो ओर देखा, कही भोज दिखायी नहीं पड़ा। गुरुजी भी उसे ही खोज रहे थे। जब वह कही नहीं मिला तब उन्होंने अनङ्गपालजी से कहा,—'ठीक है, मै उससे ही बातें करूँगा। मेरा तो विश्वास है कि यदि वह ऐसा करता होगा, तो मुझ से साफ-साफ कह देगा छिपायेगा नही।'

'हाँ भाई जरा ध्यान दो, यदि उसका चरित्र ऐसा है तब तो कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा, नही तो हम लोगो के बच्चे भी खराब हो जायँगे। अनंगपाल अपने बास जैसे फटे गले से बड़ा गम्भीर हो बोला, और चला गया।

फिर रुक्मणि ने बाली को सम्बोधित कर कहा,—'तुमने कही भोज को देखा है?'

'हाँ गुरुजी, वह अभी तो यही था, कदाचित पूजन के पूर्ण होने के पहले ही चला गया है।'

'पूजन के पूर्ण होने के पहले ही वह चला गया...शिव. शिव. . शिव। उसकी बुद्धि मे हो क्या गया है भगवान्!' आश्चर्य और चिन्ता भरे स्वर में रुक्मणिजी बोले। बाली चुपचाप खड़ा था। कुछ रुक कर उन्होने पुनः बाली से कहा,—'देखो तो तारा यदि मदिर में हो तो उसे बुला लाओ।'

पर वह थी नही। शायद पूजन समाप्त होते ही चली गयी। उसने तुरन्त यह सूचना अपने गुरुजी को दी। 'खैर...घर जाना तो तारा से कहना कि तुम्हे बुलाया है। जहाँ तक हो आज ही मिल ले।'

'अच्छी बात है।' दोनो शीघ्र ही घर पहुँचे।

× × ×

शिवालय से लौट कर भोज जब घर आया तब उसने अपनी वंशी एक ओर फेकी और लकडी दूसरी ओर। स्वयं चारपायी पर जाकर 'धम' से गिर गया और बहुत देर तक आँखें बन्द किये पड़ा रहा। उसकी स्थिति उस तेज चलने वाले चक्र की तरह थी जो अपनी गति की चरम सीमा पर एक दम स्थिर दिखायी पडता है। भोज देखने मे तो स्थिर था पर उसका मस्तिष्क बडी तीव्र गति से चल रहा था।

तारा ने आकर देखा भोज चारपाया पर कुछ अस्त-व्यस्त-सा पडा है। उसका चेहरा उतरा है। तबीयत खराब तो नही है। उसने उसके तन पर हाथ रखा। भोज की आँखें खुली—एक दम लाल, मानो सिन्दूर से भरी हुई हों।

'कैसा जी है भोज?'

'ठीक है माँ, पर मै अब इस गाँव में नही रहूंगा।'

'क्यों? क्या बात हुई। ऐसे घबराये क्यो हो?'

'कुछ नही माँ कुछ नही ।...पर मै इस गाँव में नहा रहूँगा ।'
इसके अतिरिक्त भोज ने कुछ नही कहा । माँ बहुत पूछती रही पर वह कुछ न बोला । केवल अपनी ही बात दुहराता रहा ।

तब तक बाली और देव आये । उन्हे दरवाजे के पास से ही दिखायी दिया—माँ भोज भैया की चारपायी पर बैठी है । तब तो जरूर ही कुछ बातें हुई होगी । पर इस समय माँ का भोज से बात करना ठीक नही है । तो चलकर कहूँ कि तुम्हे अभी ही गुरुजी ने बुलाया है. .कहीं ऐसा न हो कि यह सुन कर भी भइया के मस्तिष्क पर कुछ दूसरा प्रभाव पड़े । बाली ने सोचा । वह अवस्था मे भोज से बहुत बडा था और किसी भी विषय पर गम्भीरता पूर्वक विचार कर सकता था । उसने सकेत से तारा को बाहर बुलाया और उससे गुरुजी का सन्देश कहा ।

'क्या कोई बहुत जरूरी काम है ?' तारा बोली ।

'अभी ही बुलाया है कह नही सकता कि क्या काम है ।'

'क्या बात है जी, आज भोज ऐसा खिन्न क्यो है ?...तुम लोगों से कुछ हुआ तो नही है ।'

'नही माँ हम लोगों से तो कोई बात नही हुई ।'

'तब क्या बात है ?'

'कुछ पता नही माँ ।'

तारा के लिए यह विचित्र पहेली हो गयी । वह कुछ सोच न पायी । कदाचित रुक्मणिजी से ही कुछ मालूम हो, यह विचार कर वह तुरन्त उनके यहाँ गयी ।

रुक्मणि भोजन करके दालान में खाट पर लेटे थे । सिरहाने ऊँची दीवट पर तेल का दीप जल रहा था । खाट के निकट ही कुशा के आसन पर उनकी बड़ी लड़की पार्वती बैठी दुर्गा सप्तशती की आवृत्ति कर रही थी ।

स्वयं रुद्रमणि की खाट पर भी योगवाशिष्ट की भोज पत्र पर लिखी प्रति रखी थी। वे एक पत्र लेकर बड़े ध्यान से पढ़ते और मनन कर रहे थे तब तक तारा पहुँची। उसे देखते ही पार्वती खड़ी हो गयी। रुद्रमणि ने अपनी पुत्री से कहा,—'अच्छा बेटी अब जाओ, अब कल आवृति करना।' बालिका अपनी पोथी लेकर चली गयी। तारा उसी आसन पर बैठ गयी।

कुछ समय तक दोनों में से कोई कुछ नहीं बोला—रुद्रमणिजी ने एक बार भी बैठने के बाद तारा की ओर देखा तक नहीं। वे योगवाशिष्ट पढने में लगे थे। मेरा विचार है कि यह पढना तो एक बहाना था। वे चाहते थे कि तारा ही पहले बात आरम्भ करे और तारा चाहती थी कि पण्डितजी पहले कुछ कहें। इस प्रकार दोनों ओर से बात करने का मान निमंत्रण उस समय मुखरित हुआ जिस समय श्री रुद्रमणि ने खासते हुए भोजपत्र की पोथी लाल कपड़े मे लपेटी और कहा—तारा मैंने आज तुम्हे एक आवश्यक कार्य से बुलाया है। बात तो बड़ी छोटी है लेकिन क्या करूं कहनी पड़ती है। आशा है तुम मुझसे अप्रसन्न न होगी।' पण्डितजी की वाणी में व्यवहारिकता हद से ज्यादा थी। वैसे ही तारा भी बोली,—'अरे ऐसी बात क्या महाराज। भला मै आपसे अप्रसन्न हो सकती हूँ? आप बड़े हैं, जो भी कहियेगा शिरोधार्य होगा।'

'अनंगपालजी का कहना है कि मेरी श्यामा इधर कई दिनों से दूध नही देती। पहले खूब दूध देती थी। उन्हे कुछ ऐसा सन्देह हो चला है कि भोज उसे चराने के लिए ले जाता है, कही वह दुह कर पी तो नही लेता या किसी को दे तो नही देता।' इतना कहकर वे चुप हो तारा का मुख देखने लगे।

तारा सुनते ही एकदम अवाक रह गयी। उसे कभी स्वप्न में भी कल्पना नही थी कि भोज के सम्बन्ध मे ऐसी बातें भी सुनने को मिलेगी, पर अब क्या करें? बड़ी नम्रता से उसने कहा,—'मुझे तो विश्वास नहीं

होता महाराज ! अब आप कहते है कैसे क्या कहूँ ? .आप भी तो भोज से अच्छी तरह परिचित हैं,. .क्या लगता है कि वह चोर होगा ?'

'नही तारा, मुझे बिल्कुल,ऐसा नही लगता, किन्तु मै अनंगपाल के सन्देह का क्या कहूं ? भोज बेचारा तो बडा सीधा लडका है। मेरे यहाँ आता है। जो कहता हूँ शीघ्र करता है। जैसे बैठाता हूं बैठ जाता है; फिर सिर उठाकर भी नही देखता।...'

फिर कुछ देर तक शान्ति रही। पण्डितजी ने दीपक की तेज लव को बत्ती घटा कर धीमा किया और जम्हाई लेते हुए पुनः बोले,—'मैंने अनंगपाल को बहुत समझाया कि भोज ऐसा लडका नही है, पर उनके मस्तिष्क में जो सन्देह घुस गया है वह दूर होता ही नही है। वे कहते है कि जिस दिन श्यामा को मै चरने के लिए नही भेजता उस दिन तो वह दूध देती है, किन्तु जिस दिन वह चरने जाती है, उस दिन एक बूँद भी दूध नही देती है।'. .फिर वे कुछ क्षण तक रुके और द्वार से आती चांदनी की ओर अन्यमनस्क दृष्टि से देख कर तारा को सम्बोधित करके कहा,—'मेरा विचार है तुम्ही जरा भोज से बातें करके पूछो कि आखिर बात क्या है ? इच्छा तो मेरी थी कि मै स्वयं पूछता पर मैने यह ठीक नही समझा, अब तुम्ही पूछो !'

तारा अब भी चुप थी। उसके मन में रह कर जैसे कोई पूछता था—क्या तुम्हारा भोज सचमुच चोर है। गाय का दूध दूह कर चोरी चोरी पी जाता है छि .छि .छि. . । तब उसक मन ही उत्तर देता—नही ऐसा नही। मेरा भोज चोर नही। वह राज वंश का है ..और उसे भला दूध की कमी क्या है जो चोरी करेगा। घर में ही इतना दूध होता है कि उसे पीते नहीं पियाता। फिर उसके मन में दूसरी आवाज गूंजती 'क्या अनंग पाल झूठ बोलता ? ऐसा कभी नही हो सकता है। वह परम शैव सात्विक वृद्ध ब्राह्मण है। ..तब ?.. तब क्या बात है ? बालो और देव तो चारो से छिप कर कहीं पी नही लेते हों भोज को पता ही न चलता

हो ।. हाँ यह हो सकता है । भीलो के लिए चोरी करना कोई विशेष बात नही ।—उसकी यह धारणा दृढ होती गई और बहुत देर तक वह ऐसी ही बैठी रही । अन्त में रुक्मणिजी स्वयं बोले—यह कोई बहुत सोचने की बात नही है । तारा, जाओ विश्राम करो । कोई रास्ता तो निकलेगा हो ।'

'क्या कहूं पंडित जी, जीवन में यह पहली बार ऐसा सुनना पड़ रहा है,. कोई बात अवश्य ही होगी । देखिए मै अवश्य पता लगाने की कोशिश करुंगी । फिर वह नमस्कार कर चली गयी ।

कल कातिक पूर्णिमा है । आज का चन्द्र भी कम आकर्षक नहीं है । लगता है शीतल ज्योति का कोई गोल पिंड आकाश मै लटका है । चारो ओर चाँदनी छिटकी थी जैसे किसी ने धरती पर चाँदी का पानी पोत दिया हो । तारा अपने विचारो में मग्न चली जा रही थी । चारो ओर निस्तब्धता बिराजमान थी । भीलो की गॉवो की भॉति आधी रात तक यहाँ होहल्ला नही था । लगता है सबके घरो में लोग सो गये हैं ।

तारा जब घर लौटी तब उसकी यह धारणा पक्की हो चली थी कि देव और बालो का ही यह काम हो सकता है, भोज का नही ।

आज कार्तिक पूर्णिमा है और सोमवार का दिन । अतीव पवित्र पर्व है । ब्रह्म मुहूर्त में ही पूरे ग्राम मै जैसे जाग हो गई है । कुछ लोग नदी में पर स्नान करने गये हैं । नदी यहाँ से बहुत दूर पड़ती है । आधी रात के पहले ही जो लोग गये होंगे वे कही भोर होने के पहले लौटें तो समझिए अधिकांश कुएँ पर ही स्नान कर रहे हैं । खूब कोलाहल है । वृक्षों पर कौएँ बोलने लगे हैं ।

तारा ने भोज को जगाया पर वह उठा नही । बाली और देव उठ गये । जब तारा भोज को जगाने में काफी परेशान हो गई तब खीझ

कर बोली,—'लगता है दुर्भाग्य तुम्हारे मस्तक पर सवार है। देखो क्या होता है. यह सब तुम्हारी संगति का ही प्रभाव है।'—इतना कहकर उसने तुनक कर डोर खूंटी पर से उतारी और स्नान करने कूए पर चली गई। बाली और देव बेचारे अपनी खाट पर बैठ गये।

बाली तारा का रुख समझ गया। उसे अनुभव हुआ कि माता जी अब भोज की संगति को ही लाच्छित कर रही है। किन्तु संगति में अब हम लोगों के अतिरिक्त कोई दूसरा है कौन ? तो क्या हम लोग यहाँ केवल लाच्छित होने के ही लिए आये हैं ? हमने घर छोड़ा, माँ बाप छोड़, गाँव छोड़ा, केवल इसीलिए कि लोग हमे अपमानित करें ? बाली सोचता रहा पर देव जल लेकर शौच के लिए चला गया। अबोधता वह ऊंची दीवार है जिसे व्यग्रता को उतुंग लहरें भी पार नही कर पाती। मनुष्य दुखी इसलिए है कि वह बहुत बुद्धिमान है। देव के लिए तो अभी तक उसकी अबोधता बरदान है। वह न अधिक समझ सकता है न वह अधिक सोच सकता है फिर वह व्यग्र क्यों हो। सही बात तो यह है कि उसने अभी 'आदमी के ज्ञान' का फल ही नही चखा है।

किन्तु बाली सोचता रहा और उसका सोचना उसके मन को धीरे-धीरे कुतरता रहा। वह अपनी खाट पर लेट गया। बाहर वृक्ष पर बैठे पक्षी गा रहे थे। भोजने करवट बदली। बाली ने उसे जगाया,—'भइया भोज उठो। सबेरा हो चला है।'

'क्यों आज गाय चराने तो जाऊँगा नही, फिर इतनी जल्दी क्या है ?' भोज अंगड़ाई लेते हुए बोला।

'पर आज पर्व का दिन है !'

'इससे क्या ?' वह फिर करवट बदल कर सो गया और खर्राटे लेने लगा।

बाली सोचता रहा। उसे याद आया आज अपना गाँव। कैसी मस्ती में वहाँ लोग आज का त्योहार मनाते हैं। उनका नाच, उनका गाना, मदिरा में मस्त होकर प्रेत आत्माओं का उनका अभिनय। सब उसके मानस पटल पर धीरे-धीरे आता रहा और उसमें वह खोता रहा।

थोड़ी देर बाद वह उठा और पता नहीं क्यों घर के बाहर जाकर टहलता रहा। तब तारा स्नान करके आयी उसके कपड़े भीगे थे। वह भीतर गयी और कपड़े बदलकर तुरन्त बाहर आयी तथा बाली के पास आकर बड़ी गम्भीरता से किन्तु धीरे-धीरे पंडित रुक्मणि की कही सारी बातें कह दी। बाली चुपचाप सुनता रहा क्या उत्तर दे। तब तारा ने पुनः कहा—'लोगों का कहना है कि यह काम भोज का नहीं हो सकता। हो सकता है बाली श्यामा को दुहकर पी लेता हो।'

इतना सुनना था कि उसका खून तो जैसे खौल उठा। उसने बड़े तीखे स्वर में कहा—'माँ इस गाँव के सब के सब झूठे है।.. यदि केवल अनगपाल की ही गाय का हम लोग दूध पी लेते है तो आज से हम उसकी गाय ले नहीं जायेंगे।'

'गाय न ले जाने से तो समस्या हल होगी नही, यदि एक बार हम झूठे बन गये तो झूठे रहेंगे।'

'लेकिन हम झूठे हैं नही, तो लोग हमें कहेंगे कैसे?'

तारा चुप हो गयी। उसकी धारणा को कुछ धक्का लगा। यदि बाली चोरी करता तो उसमें इतना स्वाभिमान न होता और वह इतना निर्भय होकर न बोलता। .किन्तु अनंगपाल भी तो झूठ न कहते होंगे? कोई बात जरूर है। फिर उसने कुछ सोचकर बाली से कहा,—'यदि तुम लोग सत्य पर हो तो कोई तुम्हारा कुछ कर नही सकता। साँच को आँच कहाँ? तुम लोग अपना काम करते रहो, झूठ एक दिन झूठ हो जायगा।'

यही बात उसने घर में आकर भोज से भी कही। अब उसे थोडा ढाढस हुआ।

भोज का तारा ने अच्छी तरह समझा दिया कि गॉव छोडकर भागने से कोई लाभ नहीं। संसार बहुत बड़ा है यदि इसी तरह भागते रहोगे तो कहॉ रह सकोगे। आज अनंगपाल कहता है कल ऐसे अनेक अनगपाल कहेगे तो क्या इसी तरह तुम भागते रहोगे। भागने से नहीं लड़ने से विजय मिलती है। गायें ले जाओ देखो ईश्वर ने चाहा तो झूठ खुल जायगा।

जो एक दिन भी वहॉ रहना नही चाहता था, मॉ के समझाने से डट गया। उसका जो साहस भाप बनकर वायु के थपेडो से कभी इधर और कभी उधर भाग जाने के लिए तत्पर था, अब वह सघन बादल बन कर गरज पडा। निश्चय हुआ भोज नित्य को भांति आज भी गायें लेकर जायेगा, अनंगपालजी की भी गाय ले जायगा। बाली और देव भी साथ रहेगे।

आज जंगल मे तीनो ने पक्की चौकसी रखी है। तीनो तीन ओर है, बीच में गायें चर रही है। मजाल क्या है, कोई आदमी इधर चला आये और ये उन्हे न टोके। किसी गाय को मौका नही जो बहक कर निकल सके। मध्याह्न तक तीनो ऐसे ही डटे रहे। आज न तो उन्होने आपस मे बातें की, न एक स्थान पर बैठकर पत्थर की गोटियॉ ही खेली, न शिकार खेलने का ही कार्यक्रम बना और भोज की बंशी! उसका तो स्वर सुनने के लिए आज पूरा बन प्रान्त जैसे मूक होकर बैठा था।

मध्याह्न होते ही भोज ने बंशी बजायी। गायें एक स्थान पर एकत्र होने लगी। बाली और देव भी भोज के पास वृक्ष के नीचे आये। जब सभी गायें आ गयी तब गिनती होने लगी। 'सब तो ठीक है, पर श्यामा दिखायी नही पड़ रही है।' बाली ने कहा।

'जरूर वह कही चली गयी है। अनंगपालजी झूठ नही बोलते। यह अवश्य रहस्यमय गाय है।' भोज बोला।

'कोई बात नही, अब पता तो चल गया. पर आश्चर्य है कि वह निकल कैसे गयी। चारो ओर हम लोग एक दम डटे थे। आँख मे धूल झोक दिया उसने।' वृक्ष के नीचे बैठते हुए बाली ने कहा।

फिर सब ने भोजन किया। वे आ।ज कल की अपेक्षा अधिक प्रसन्न दिखायी पड रहे थे। बडे प्रेम और निश्चिन्तता से उन्होंने काफी देर तक भोजन किया। गप्पे भी लडी और बातचीत के सिलसिले मे पता नही कैसे चम्पा की भी चर्चा छिड गयी, फिर क्या था। 'हा-हा-हा' करते घन्टो बीत गये।

अन्त में बाली ने कहा,—'आज कार्तिक पूर्णिमा है न, कहीं चलना चाहिए भोज। मेरा तो मन आज गॉव में रहने का नही है।. .आज पाराशर में तो नया जीवन आ जाता था।'

'पर पराशर तो चलते-चलते पूर्णिमा ही बीत जायगी।'—भोज कह कर हँस पड़ा।

'नहीं भाई वहाँ के लिए मै नही कहता. .सुना है सोलंकी राज के यहाँ आज झूलनोत्सव मनाया जाता है।'

'तुमने कभी देखा है?' भोज ने कहा।

'देखा तो नही है पर दो-चार दिन हुए गॉव में लोग कह रहे थे, पर वहाँ तो कोई जा नही पाता।'

'क्यो?'

'महाराज के विहार कुंज में ही यह उत्सव होता है। राज दरबार की कुमारियाँ उसमें भाग लेती हैं।'

'तब तो मै जरूर चलूँगा...हम लोग किसी राजा से कम हैं।' इतना

कहकर भोज हँसने लगा। तथा मस्ती मे वंशी बजायी। अरावली वेणु के मधुर रव मे गूँजने लगी।

'आज सन्ध्या होने के बहुत पहले ही गायों को इकट्ठी किया गया, पर श्यामा अब तक नही आयी वह तो रोज के समय से ही आवेगी। यदि उसके लिए रुका गया तो देर हो जायगी।' देव ने कहा।

'पर उसको छोडकर भी तो नही चला जा सकता।...भोज भइया, जरा तुम और ऊंची आवाज से वंशी बजाओ। हम लोग आस-पास की पहाडियों मे उसे खोजते है।' बाली बोला और देव को लेकर दौड़ता हुआ पहाडो के नीचे उतरा। जैसे दो गठरियाँ ढुलकती चली जा रही हो।

पर यह प्रयास भी व्यर्थ रहा। श्यामा न मिली। तब निश्चय हुआ कि भोज और देव गायों को लेकर गाँव में चले, जब श्यामा आयेगी तब बाली उसे लेकर आवेगा। 'और यदि श्यामा के आने में काफी समय लगा तब?' भोज ने पूछा।

'तब तुम लोग सोलंकी राज की ओर चलना, मै जब भी लौटूंगा, भोजन कर शीघ्र ही आऊंगा।'—बाली बोला।

गाँव में आज गायें बहुत जल्दी ही आ गयी। आज व्रत का दिन है। सन्ध्या होते ही शिवालय मे रुद्री बैठ जायगी। इसलिए ग्रामवासी गाय जल्दी ही दुहना चाहते थे। गायों को देखते ही वे प्रसन्न हो गये। देव ने गाय सब के द्वार पर लगायी और भोज शीघ्र अनंगपालजी के यहाँ गया। अब भोज के मन मे उसके प्रति घृणा नही थी। वह समझ गया था कि सारा दोष श्यामा का है जब वह उसके यहाँ पहुँचा तब वृद्ध ब्राह्मण बेलपत्रों से भरी दौरी लेकर द्वार पर बैठा था। उसमें वह अखण्डित बेल पत्र अलग कर रहा था। आज एक हजार एक पत्र भगवान् के मस्तक पर श्रद्धापूर्वक वह चढायेगा।

पहुँचते ही भोज ने उनका चरणस्पर्श किया और बड़ी विनम्रता से बोला,—'आज श्यामा कुछ विलम्ब से आयेगी.. और कदाचित वह आज भी दूध न दें।'

'पर आज दूध की बडी जरूरत है।...बात क्या है ?'

'बात क्या है महाराज,—यह तो नहीं कह सकता।' इतना कहकर वह हाथ जोडे खडा रहा। अनगपाल का व्यक्तित्व बज्र से भी कठोर और मक्खन से भी कोमल है। भोज की नम्रता देख कर वह पिघल गया। कुछ बोला नही। केवल इतना ही कहा,—'अच्छा कोई बात नही।'

तारा भोज को कुऐं पर ही दिखायी पड़ गयी। वह स्नान के लिए पानी खीच रही थी भोज ने उसका चरण छुआ और उसके हाथ से रस्सी लेकर स्वयं पानी खींचने लगा। वहाँ दो एक नारियाँ और भी थी वह उसे देखती एक ओर हट गयी। तब भोज ने कहा,—'आप लोग कष्ट न करें मैं इसके बाद आप सबका पानी खीच दूंगा।'

'तुम जीते रहो बेटा, तुम्हारे ही ऐसे लोगों का तो आसरा है,...पर इस समय मैं स्वयं खीच लूंगी।' उनमें एक कुछ अधिक वय की नारी बोली। पर भोज ने माँ का पानी निकालने के बाद ही देखते देखते उन सबका पानी भर दिया। वे रोकती रह गयी। उसके इस व्यवहार से उनका मन गद्गद् हो गया उन्होंने आशीर्वादो की झड़ी लगा दी। तारा ने भी सोचा कि कितना अच्छा है मेरा भोज ? कैसे लोग इसे चोर कहते हैं।'

पानी का दोनों घडा कन्धे पर भोज ने रखा। तारा ने रस्सी उठायी और वे चल पडे। रास्ते मे उसने मुस्कराते हुए तारा से कहा—'माँ एक बात बडी अच्छी बताऊं ?'

'क्या है रे !'—उसने बडे आश्चर्य से उसकी ओर देखा।

'नही माँ, नही बताऊंगा।' फिर वह हँसकर इठलाता बडे झटके से दूर हटा। दोनों घड़ो से जल छलक पडा और यदि वह उन्हे न सँभालता

तो वे गिर भी जाते।' 'ओफ ओ...तू भी खूब है जहाँ जरा-सी खुशी की बात है हुई कि फूला नहीं समाता और जहाँ जरा-सा जी दुखा तो कहता है,—माँ, मै कल से इस गाँव मे नही रहूँगा।' वह मुह बनाते हुए बडे नाटकीय ढंग से बोली। भोज एक बार झेंप तो गया, पर तुरन्त वैसी ही प्रसन्नता से बोला—'माँ अब मै गाँव नही छोड़ूगा मुझे पता लग गया। मै बहुत जल्दी बता दूंगा कि चोर कौन है ?'

अब तारा की जिज्ञासा जागी। उसने पूछा—'क्या दूध की चोरी का पता चल गया ?'

'मै नहीं बताऊँगा माँ।' मटकता दोनो हाथो से घड़ा पकड़े आगे बढता रहा।'

'तू बहुत परेशान करता है भोज। आखिर बताता क्यों नही ?'

'बस एक शर्त पर बताऊंगा माँ।.. यदि तू मेरी एक बात माने, तो मै बता दूँ।'

'अच्छा, बता।'

'ना, ना,.. पहले तू कह कि तू मेरी बात मानूगी।' बोल माँ बोल।'

तारा भोज की जिद्द पर मुस्कराती बोली—'अच्छा ले कहती हूँ...मै तेरी बात मानूंगी।' तब भोज ने श्यामा की सारी कहानी कह दी। वह सुन कर बडी प्रसन्न हुई और बोली—'मैंने कहा था न कि साँच को आँच नही आती। कुछ न कुछ पता तो चलेगा ही. .लेकिन श्यामा चली कहाँ जाती है ?'

'यह तो नही मालूम ? पर कल तक देखना माँ मै इसका भी पता लगा लूँगा।' पुनः अपनी आँखो को विचित्र ढंग से नचाता हुआ उसने कहा—'अब तो तुम मेरी बात मानोगी न माँ, आज हम लोग रात मे जायँगे...?'

भोज पूरी बात कह भी न पाया था कि तारा जैसे बिगड उठी,—'रात में कहाँ जाना है ?' आज पर्व का दिन है और चले हैं रात में घूमने ?'

'घूमने नही जाऊंगा, दूध चोर का पता लगाने जाऊंगा माँ।' जीवन मे यह पहला अवसर था जब भोज झूठ बोला, किन्तु छोटी बात के लिए। पर यह निश्चय था कि यदि वह झूठ न बोलता तो शायद माँ उसे जाने न देती।

फिर भी माँ ने उसे जाने की आज्ञा नही दी। तब उसने बडे द्रवित स्वर मे कहा,—'माँ तुमने वचन दिया था।. .आदमी की जबान एक होती है।'

'पर मै आदमी कहाँ, मै तो औरत हूँ।' तारा मुस्कराते हुए बोली। भोज भी हस पडा। उसने कहा—'तो क्या औरत की दो जबान होती है माँ।'

तारा मुस्करायी और संपूर्ण नारी जाति पर महान व्यग्य करते हुए बोली,—'साँप की दो जबान होती है, पर उससे आवाज एक ही निकलती है, किन्तु औरत की एक जबान होती है, पर उससे सदैव दो आवाज साथ ही निकलती है।'

भोज इस व्यंग्य को समझ न सका, पर तारा बहुत देर तक हँसती रही। उसे रुक रुक कर हँसी आती रही। भोज जिद्द करता रहा और अंत मे घर पहुँचते-पहुँचते उसे विजय मिल ही गयी। बाली अभी आया नही था। तारा ने भोज और देव दोनो को सावधान करते हुए कहा,—'जा ही रहे हो पर तुम तीनो साथ ही रहना और जहाँ तक हो जल्दी लौटना।' कब तक लौटोगे ?

'यही एक या दो घडी रात गये आ जाऊँगा।' भोज ने कहा।

'हाँ जरा जल्दी आना चाहे चोर का पता चले या न चले।' तारा ने कहा। भोज इसबार अपनी हँसी रोक न सका।

× × ×

अब तो वहां केवल भग्नावशेष है। अतीत उन खण्डरों के सुनसान ईंटों और पीड़ा से भरी मिट्टियों के नीचे चिरनिद्रा में सो गया है। उद्-भ्रान्त पथिक जब उन ईंटो मे आँखे गड़ाकर कुछ पढने की चेष्टा करता है तब उसे मालूम होता है कि नागह्द ग्राम से नागदा नागरी की दूरी अधिक नही थी। दो तीन घन्टे में आसानो से आदमी पहुंच सकता था।

इसी नागदा मे आज झूलनोत्सव है। इसमें कुमारियाँ ही भाग लेंगी। आकाश में चन्द्रमा निकलते ही नगर की कुमारियाँ महाराज के बाहर बिहार कुंज मे आने लगी, पर अभी तक सोलंकी राज परिवार की कुमारियाँ आयी नही हैं।

कार्तिक के अनभ्र आकाश मे राकेश मुस्करा रहा है। इससे रम्य विहार कुन्ज की शोभा और भी बढ गयी है। यह रमणीक स्थली पहाड़ी की ढाल पर है और चारो ओर विशाल वृक्षों से घिरी है। बीच में भी बडे बडे वृक्ष है, पर ये एक निश्चित योजना से लगे है। लकड़ी के खम्भों के सहारे सुगन्धित पुष्पों की लताए चढाई गई हैं इनसे बने कुंज बडे मनोहर लगते है। पर इतने सुन्दर उपवन मे एक बात बडी खटकती है कि कही जलाशय नही है। सिचाई के लिए दक्षिण पश्चिम के कोण मे एक कुँआ है।

इस समय करीब-करोब सभी वृक्षों पर झूला पड़ा है। मधुर स्वर में गाती हुई कुमारियाँ झूल रही है। उपवन के चारो ओर पहरा पड़ रहा है। 'पुरुष सैनिक नही है। नारी सैनिक ही पहरा दे रही हैं। कुमारियों के अतिरिक्त कोई भीतर जाने नही पायेगा, वे सब अपने पहरे पर साव-

थान है। चन्द्र आकाश पर चढ आया पर राज परिवार की कुमारियाँ अभी तक नही आयी, वे प्रतीक्षा कर रही थीं।

इधर से ये तीनों जवान भी पहुँच ही गये। तीनों धनुष बाण से युक्त थे। भोज के पास तो उसकी बंशी और बडी सी एक रस्सी भी थी। रस्सी लाने के पक्ष में वह था नही, पर बाली के कहने पर ही ले आया था। कदाचित् कोई जानवर ही आ जाय तो फन्दा डाल कर हम लोग पल में पेड पर चढकर अपनी जान तो बचा सकते है—रस्सी लेने के पहले उसने सोचा था।

इन लोगो ने दूर से ही देखा कुछ महिलाएं हाथ मे तलवार लिए उपवन के बाहर टहल रही हैं। भोज ने तुरन्त बाली से पूछा—'इस उत्सव में युद्ध भी होता है क्या ?'

'नही तो।. .ऐसा मैंने नही सुना है।' बाली बोला।

'तब ये औरतें तलवार लेकर क्यो टहल रही है ?'

'पता नही .। क्या आपको भय लग रहा है।' इतना कहकर बाली जोर से हँसा।

भोज झेंप गया। वह ढाल पर तेजी से उतरा। उसका एक पैर एक बड़े पाषाण खण्ड से टकराया। चोट तो अधिक आयी, वह कुछ बोला नही, नही तो हो सकता था कि बाली उसकी और हंसी उडाता।

उसके लडखडाने का प्रधान कारण रस्सी था। उसी में उसका पैर फंस गया था। उसने उसे देव को दे दिया। तब बाली पुनः व्यंग्य करते हुए बोला,—'क्यो भाई रस्सी क्यो दे दी ? अब चोर किस मे बांधोगे।' फिर तीनो हँस पड़े।

पहुँचते ही एक नारी सैनिक ने रोका—'आगे मत बढो।' फिर वह वृक्ष की छाया मे आ गयी। भोज और उसके निकट गया। उसने फिर

उसे रोका और बड़ी बहादुरी से तलवार लेकर सामने खडी हो गयी खबरदार जो आगे बढे, नही तो सिर धड से अलग कर दिया जायगा ।'

वृक्ष की पंक्तियों से छन-छनकर चन्द्र की किरणे भोज और सैनिक पर पड रही थी। उस मन्द ज्योति में दोनो ने एक दूसरे को अच्छी तरह देखा। बाली और देव पीछे हो रुक गये थे। भोज ने देखा, यह सैनिक भी कुमारी ही लगती है। वय तो अधिक नही मालूम होती। केवल घाघरा और चोली पहने है। ऊपर से एक दुपट्टा लपेट रखा है। भोज क्या कहे कि मै क्यो भीतर जा रहा हूँ ? पर वह मुस्काराता खडा रहा।

'लौट जाओ नही तो बन्दी कर लिए जाओगे।' वह सैनिक पुनः बोली।

भोज अब भी चुपचाप खड़ा था। निकट ही भीतर की ओर अचानक कोलाहल हुआ। अरे मालती और चित्रावती आ गयी। चारो ओर से कुमारियाँ इधर ही दौड़ी हुई आ रही है। ऐसा उस सैनिक को अनुभव हुआ। वह पल भर मे छलाग मारती भीतर पहुँची।

चित्रावती और मालती सोलंकी महाराज की पुत्रिया है, पर झुलनोत्सव में बहुत विलम्ब से आयी है इसी से थोड़ा कोलाहल हो गया है। फिर कोलाहल धीरे-धीरे शान्त हो चला। बाली और देव भी भोज के निकट आये। तब भोज उनसे बोला—'क्यो कैसा डर गये ? और मुझको कह रहे थे कि तुम डरते हो।'

'हम लोग डरे तो नही केवल यह देख रहे थे कि भोज कौन कौनसा कमाल दिखाता है।' हँस पडा।

थोड़ा और रुकने के बाद भोज उपवन मे घुमा। उसने देखा निकट ही तीन चार कुमारियाँ खड़ी है। चाँदनी मे उनके चम्पई चेहरे पर रजत की आभा आ गयी थी जैसे पुखराज पर किसी ने हीरे की परत चढा दी हो। उनके कानो में मणि जड़े अलंकारो की चमकती ज्योति ऐसी लगती

थी।जैसे कहीं से जुगनुओं को लाकर इन कानों में बांध दिया गया हो। भोज़ को देखते ही सब हड़बडा गयी, पर वह निर्भय उनके पास पहुँच गया। 'तुम इधर कैसे चले ?' इन लड़कियों मे से एक ने कहा।

'तुम यहाँ क्यो आयी हो ?'—भोज ने पूछा।

'हम तो झूला झूलेंगे ?'

'तो हम भी झूलेंगे।'

'बड़े विचित्र मालूम होते हो जी। देखते नही हो कि यहाँ केवल कुमारियाँ ही झूलती है।' लडकी ने थोडा तीखे स्वर में कहा।

'आप झूलती हैं तो झूलिये मै उतवन के बाहर जाकर झूला डालता हूँ. देखिए मेरे पास रस्सी है किसी चीज की कमी नहीं, आप चिन्ता न करें।' इतना कहकर वह वहाँ से बाहर आने को हुआ। बाहर बाली यह सारी लीला देख रहा था। वह हँसता हुआ जोर से चिल्लाया। 'अरे भोज, चोर मिला कि नही।...जरा ध्यान से खोजना।'

'भोज केवल हँस कर रह गया। और बाहर आया! बाहर से ही एक ऊँची शिला पर बैठकर तीनों यह उत्सव देखने का विचार करने लगे। तब सबके सब शिला पर आये। 'हाँ दिखायी तो साफ पड़ता है पर इन लोगों को नाचना वैसा नहीं आता जैसा हम लोग जानते हैं।'—बाली बोला।

थोडी देर बाद वह सैनिक फिर इन्हीं लोगों की ओर आती दिखायी पडी। पहले भोज ने देखा और तुरन्त उस ओर से आँखें फेर ली। बाली और देव ने भी फिर उसका ही अनुसरण किया। वह अत्यन्त निकट आकर खडी हो गयी पर किसी ने उधर आँखें तक न घुमायी, बोलना तो दूर रहा, जैसे उसे वे देखते हो न हो। लाचार होकर सैनिक कुमारी को ही बोलना पड़ा। उसने भोज को सम्बोधित कर कहा—'ऐ ऐ...ऐ'

पर सब चुप थे।

'ऐ क्या बहरे हो गये हो ?'—वह बोली।

'नही जी, बहरे हम क्यों ? बहरे हो तुम। .हम लोगों को इस समय परेशान मत करो, हम झूला झूल रहे हैं।'—भोज बोला।

'बडे पागल मालूम होते हो, बैठे हो और कहते हो कि झूला झूल रहा है।'

'मेरा मन झूल रहा है, मन। तुझे क्या मालूम।'—पुनः भोज बोला।

कुमारी सैनिक परेशान हो गयी। फिर बडी विनम्र हो बोली,—'आप भीतर चलिए। आपको राजकुमारजी बुला रही है।'

'मै भीतर-ऊतर तो नही जाता।. .इस समय झूल रहा हूं।. .जिसको आना है वह स्वयं मेरे पास चली आवें।'—बडे रोब से उसने कहा।

लाचार होकर वह सैनिक चली गयी। अपने राजकुमारी से सारा हाल कहा। बालकों में मान-अपमान क्या ? अभी लड़े, अभी फिर मित्रता। बस उनका काम बनना चाहिए। राजकुमारी जल्दी-जल्दी मे रस्सी लाना भूल गयी थी। उसने देखा कि इन लोगो के पास रस्सी है, तब इन लोगों को भी क्यों न खेला लिया जाय। यही सोचकर उसने भोज को बुलाया था, पर भोज गया नही।

रस्सी के बिना झूला कैसे टगेगा। यह एक समस्या उत्पन्न हो गयी। महल से मगाने मे भी देर लगेगी तब तक सारीलडकियाँ झूल रही है। मै क्या खडी होकर उनका मुँह देखूँ। यह सोच कर राजकुमारी और उसकी सखियाँ भोज के पास चली। भोज अपने साथियों के साथ वैसी ही मस्ती मे शिला पर बैठा रहा। उनको आता देख कर उसने शिला के छोर को ओर थोडा खसक कर दोनो पैर लटका दिया। पैर घडी के पेन्डुलम की भाँति झूलने लगे और वह मन्द स्वर में बंशी बजाने लगा जैसे वह उन्हें आता देख ही न रहा हो।

आते ही राजकुमारी ने कहा,—'ऐ बंशी वाले जरा अपनी रस्सी मुझे दे दोगे।'

'क्यो दे दूं तुम्हे ? कौन हो तुम ?' भोज बडी उज्जडता से बोला।

राजकुमारी सकपका गयी कि वह क्या उत्तर दे। पर उसकी एक सखी ने बडी निर्भीकता से उत्तर दिया,—'जानते नही हो, ये राजकुमारी है दे दो इन्हे रस्सी ?'

'जानती नही हो, मै राजकुमार हूँ। नही दूँगा रस्सी।' भोज ने उसी लहजे में कहा। बाली और देव हँस पडे, उन्ही के साथ सखियाँ भी खिलखिला उठी।

उन्हीं सखियों में से एक बडी क्षिप्रगति से आगे आयी और मटकती हुई बोली,—'हे ऽ ऽ जरा आपनी शकल तो देखो। चले है राजकुमार बनने।'

'अरे बाबा आपको कौन कहता है कि आप मेरी शकल देखिए। आयी हैं, जब तक खडी रहना हो खडी रहिए फिर अपने पुंज में चली जाइये।' भोज ने कहा।

राजकुमारी भी अब परेशान-सी हो गयी थी। उसे किसी भी शर्त पर रस्सी चाहिए थी। उसने गिडगिडाते हुए विनती की,—'अच्छा राजकुमारजी आप मेरी केवल एक बात मान जाइये मै हाथ जोडती हूँ।'

'अच्छा, राजकुमारी जी आप मेरी केवल एक बात मान जाइये मै हाथ नही जोडता।' भोज बोला। उसके कहने के ढंग पर फिर एक बार लोग हँस पडे। राजकुमारी खीझ उठी,—'कैसी बात है आपकी ?' उसने पूछा।

'पहले बताइए आप उसे मानेंगी, तब बताऊँ।'

'हाँ मै मानूंगी। तुम मुझे रस्सी दोगे ?'

'हाँ रस्सी दूंगा। पर तीन बार कहो कि मैं तुम्हारी बात मानूंगी, मैं तुम्हारी बात '

'ओ हो ऽ ऽ ये तो जैसे भूत कबुलवाता है।' राजकुमारी की एक सखी ने आगे बढकर कहा, पर राजकुमारी ने उसे पीछे खीच लिया और जैसे भोज ने कहा था वैसे ही बोली,—'मै तुम्हारी बात मानूंगी। मै तुम्हारी बात मानूंगी...मै तुम्हारी. ।' उसे तो रस्सी लेनी थी।

'अच्छा तो तुम मेरे साथ विवाह करो। तब मै रस्सी दूँगा।'

भोज की यह शर्त सुनते ही सब स्तब्ध रह गयी। उन्हे इस प्रकार के शर्त की कल्पना भी नही थी पर अब क्या करें? अब तो विवश थी। उन्हे किसी भी तरह रस्सी चाहिए थी। फिर भी चुप थी।

भोज बोला,—'बस समाप्त हो गया आपकी राजकुमारी का मान। वचन देकर इस प्रकार राजकुमारियाँ मुकरा नही करती।'

इस बार राजकुमारी ने कुछ भी जबाब नही दिया। वह अपनी सखियो के साथ वहाँ से हटकर कुछ दूरी पर गयी। वहाँ बहुत धीरे-धीरे आपस मे सलाह हुई। भोज को वहाँ से पहले ता कुछ सुनायी न पड़ा केवल एक बार जोर की हँसी सुनायी पडी। इसके बाद उस नटखट लड़की की तेज आवाज सुनायी पड़ी—'कह न दो कि मै विवाह करूँगी।. .कोई विवाह हो थोड़े हो जायगा।...पर हाँ देखो हममे से कोई कभी भी किसी से कहेगा नही कि राजकुमारी ने ऐसा किया है।' दूसरी लडकी ने फिर कहा,—'हम लोगो को रस्सी मिले, फिर देखा जायगा।'

क्या रस्सी और क्या रस्सी की बिसात। पर उतने ही के लिए राजकुमारी ने भोज की शर्त मान ली। भोज अपने साथियो के साथ उन्हीके पीछे-पीछे चला, बड़ो मस्ती के साथ वशी बजाता हुआ जैसे गोपियो के पीछे कुंवर कन्हैया जा रहा हो। बीच में एक बार बाली भोज के कन्धे पर हाथ मार कर धीरे-से बोला,—'अरे वाह जी, मै तो जानता था कि

तुम वंशी बजा कर केवल गाय ही चराते हो पर आज तो तुमने इन सबको चरा दिया।' उसकी बात सुनकर भोज मुस्करा पड़ा।

उपवन में पहुंचकर शीघ्र ही विवाह का उपक्रम आरम्भ हुआ। सखियाँ बड़ी प्रसन्न थी। वे सोचती थी चलो अच्छा हुआ। आज राजकुमारी खूब फंसी हैं। वह तरह-तरह की बोली बोलती और हँसती रही। तब एक सखी ने भोज के दुपट्टे की छोर में राजकुमारी का आँचल बाधा। फिर सब हंसती और प्रसन्नता मे आपे से बाहर होती हुई वर-वधू को आम के वृक्ष के नीचे ले चली। फिर एक सखी खिलखिलाकर हंसती हुई बोली—अरे यह कैसा विवाह बहन, दूल्हे के मस्तक पर तो तिलक है ही नही।'

'पर हम लोग क्या करें? तिलक दूल्हे के घर वालों को देना चाहिए।' फिर वह लड़की बाली और देव की ओर देखकर मुस्कराई।

'हाँ-हाँ मैं अभी तिलक करता हूं।' इतना कहकर बाली ने दन से अपना दाहिना अंगूठा बाण की नोक से चीर दिया और आगे बढ़कर रक्त से तिलक किया।

रक्त का तिलक देखकर थोड़ी गम्भीरता आयी। सब आम वृक्ष के नीचे आये और उसीके चारों ओर वर-वधू की भंवरी पड़ने लगी। 'अरेजी, इस समय तो कुछ मंगल गीत होने चाहिए। लड़की की तरफ के लोग कैसे है।' बाली बोला। ऐसे अवसर पर भला वह कब चूकने वाला था।

कुमारियों ने गाना शुरू किया, विवाह का मधुर और मादक गीत जिसका मुख्य भाव था,—'आज तुम्हारा पति आया है, वह तुम्हे ले जायगा कितना अच्छा है वह तेरे सपनो का राजा।'

तब किसी ने कहा—'अरे बहिन सारा काम उल्टा सीधा क्यो? भंवरी पड़ रही है पर अभी तक वधू के मॉग में वर ने सिन्दूर नही भरा।' इतना कहते ही वह हँसते-हँसते दूसरी सखी के तन पर गिर पड़ी। पर इस समय सिन्दूर कहाँ? भोज ने झट से धरती पर से धूल उठाकर राजकुमारी के

माँग में डाल दी। सखियाँ ताली बजा कर खिलखिला उठीं। वह और भी तेजी से गाने लगी। उस आम्र वृक्ष के पत्तो मे से कोई पक्षी इस मध्य रात्रि को भी बोल उठा।

धरती के सोते श्याम अचल ने, वायु के मद झोंको ने, आकाश के विहसते चन्द्र ने, वृक्षों तथा पौधो की शिथिल होकर एक दूसरे के सहारे पडी हुई अलसायी पत्तियो ने, फूलों की सकुचित पखुडियो ने बालको का यह मजाक देखा, वर्तमान का यह खेल देखा, भविष्य का यह विवाह देखा।

× × ×

इधर तारा रास्ता देखते देखते घबरा गयी थी। दो घडी रात तक तो उसकी व्याकुलता उतनी अधिक नहीं थी। इसके बाद ज्यो ज्यो समय बीतता गया त्यो त्यों उसकी व्याकुलता बढती गयी। क्या बात है जो इतनी देर हो गयी और अभी तक नही आया? ऐसा घुमक्कड़ तो नही था। ऐसे ही सोचती वह दालान की चारपायी पर पडी थी। बीच-बीच मे वह बाहर भी देखती थी। मध्य रात्रि की गहन निस्तब्धता मे न तो कुछ दिखायी देता और न कुछ सुनायी देता। सामने मृत शरीर की भाँति चाँदनी का कफन लपेटे सकरी, किन्तु ऊँची मेढी पगडण्डी पडी थी, जिसके एक छोर पर तारा थी और दूसरा छोर ध्यानावस्थित पहाडियो ने समाप्त हो जाता था। वह खड़ी अपलक देखती रही किन्तु कोई आता दिखायी न दिया। घन्टो उसने ऐसा ही किया और अन्त मे वह भीतर जाकर पुनः चारपायी पर लेट गयी।

अत्यन्त भयंकर और अशुभ कल्पनाएं उसके मन मे उठने लगी। कही ऐसा तो नहीं कोई बहकाकर उसे ले गया हो? चारो ओर तो उसके शत्रु ही है। बहुत दिन हो गये तो इससे क्या ईडर वालों को ही यदि पता चल गया तो वे भी उसको जान नही छोड़ेंगे। पर उन्हे मालूम कैसे होगा कि वह यहाँ है? ऐसा तो नही यह सारी चाल पुरोहित सत्य-

नारायण की हो। वह बूढा भोज को बन्दी बनाने के ही लिए यहाँ ले आया हो? पर वह है तो ऐसा नही! उसके प्रयत्न से भोज की रक्षा हुई थी। क्या अब वही उसके प्राण लेने में सहायक भी होगा? .हे भगवान यह क्या तुम्हारी माया है। इतना सोचते सोचते उसने आँखें अपनी दोनो हथेलियो से बन्द कर ली। फिर कुछ समय तक उसका मस्तिष्क चौराहे पर खडे उस व्यक्ति की तरह स्थिर हो गया जिसे गन्तव्य स्थान तो मालूम रहता है पर रास्ता नही मालूम होता, चलना चाह कर भी जो सोच नही पाता कि किधर चलें।

फिर उसके विचारों ने दूसरा मोड लिया। उसने सोचा अरबी सैनिक भी तो उसके पीछे लगे है, हो सकता है उनके ही चगुल में फंस गया हो। उसने आकाश की ओर देखा चन्द्रमा अब झुकने लगा था। रात आधी से भी अधिक बीत चुकी थी। उसकी घबराहट और बढी। वह उठकर पुनः घर के बाहर आयी, फिर पगडण्डी की ओर देखा और फिर निराश हुई। अब उसने सोचा कि रुक्मणिजी के यहाँ चलूँ कदाचित उनसे उसने कुछ कहा हो। तब द्वार बन्द कर वह रुक्मणि के यहाँ चल पडी।

मार्ग में कुत्ते भूंक रहे थे तथा एक कुत्ते ने उसे काफी दूर तक परेशान भी किया। .और कही तो कुछ नही था।

पंडित रुक्मणिजी का द्वार बन्द था। उसने बाहर से आवाज लगायी। बेचारे हडबडा कर उठे—सोचा क्या बात है जो तारा इस समय आयी है। पडितजी की धर्मपत्नी और पार्वती भी जाग गयी। सब से तारा ने सारी बातें कह दीं। वे लोग भी सोच मे पड गये। बडी गम्भीरता से विचार करते हुए पंडितजी ने कहा—'क्या कहूँ तारा इधर ऐसा लगता था जैसे उसकी बुद्धि ही कुछ खराब हो गयी थी उस दिन देखो मन्दिर से पूजन समाप्त होने के पहले ही चला आया था. .।'

'अरे पूजन समाप्त होने के पहले ही चला आया था ?...शिव शिव।

तभी तो यह सब अदृष्ट उसके पीछे पड़ा है। हो सकता है यह अदृष्ट ही उसे कहीं ले गया हो।' पंडितजी की धर्मपत्नी कहती रही,—'मेरा यदि कहा मानो तो तुम शिवालय पर जाकर भगवान् की वन्दना करो।'

इस प्रस्ताव पर विचार हो ही रहा था कि पंडितजी बोले,—'चलो ज्योतिषाचार्य महेश पंडितजी के यहाँ चलूँ। उनकी गणना कभी गलत नहीं होती। वह सोलंकी राज-दरबार के ज्योतिषी हैं। जरूर बता देंगे कि इस समय भोज कहाँ है?'

तारा की घबराहट पल-पल बढ़ती जा रही थी। वह तुरन्त ज्योतिषाचार्य के यहाँ चलने को तैयार हो गयी।

वृद्ध ज्योतिषाचार्य की नींद पहले ही टूट गयी थी वे पहली आवाज में ही बोले और बाहर आये। तारा और रुक्मणिजी को जब उन्होंने साथ देखा तब उन्हें भी कुतूहल हुआ। वे कुछ पूछें, इसके पहले ही पंडितजी ने सारी बातें कह दी। घबराइए नहीं। यह घड़ी बड़ी शुभ है इसमें किसी भी प्रश्न का मनोनुकूल ही उत्तर मिलता है, उन्होंने कहा और बढ़कर कमरे की खिड़की खोली। चन्द्रमा को ब्राह्ममुहूर्त का नमस्कार किया। दीप जलाया फिर खिड़की की ओर अपनी दूरबीन लगायी। यह दूरबीन बाँस की बनी है। इच्छानुसार बाँस आगे पीछे घसका कर दूरबीन की लम्बाई घटायी बढ़ाई जा सकती है। उन्होंने दूरबीन से किसी नक्षत्र को बड़े गौर से देखा। फिर उसे नमस्कार किया और समय-सूचक यन्त्र के पास गये। यह यन्त्र भी कुछ विचित्र सा दिखाई देता है। दो धातु के पात्र एक दूसरे पर रखे हैं। ऊपर के पात्र में पानी भरा है। उसके नीचे एक अत्यन्त छोटा-सा छिद्र है। छिद्र से जल एक निश्चित अवधि के बाद नीचे के बर्तन में 'टप' से चूता है। ज्योतिषी ने ऊपर के बर्तन का ढक्कन खोला और दीपक लेकर जल को बड़े ध्यान से देखा। फिर वे बोले—अभी तो एक घड़ी से अधिक रात बाकी है। तब वह बैठ कर गणना करने लगे बड़ी गम्भीरता पूर्वक विचार कर उन्होंने कहा—घबड़ाने की कोई बात नहीं है।

बालक के नक्षत्र बड़े उत्तम हैं और इधर १० दिन से उच्च का शुक्र तो उसके लग्न में आ गया है। अवश्य कोई शुभ काम होगा।'

'पर इस समय तो सब अशुभ ही दिखाई देता है।—तारा बोली।

'दिखायी देने से क्या होता है? शुक्र कुछ जरूर करायेगा।'

'क्या-क्या हो सकता है महाराज?'

'राज सम्मान दिला सकता है, विवाह कर सकता है। ' ज्योतिषाचार्य ने बड़े विश्वास से कहा।' 'वे पुनः बोले, और मेरा तो विश्वास है कि यह घड़ी बीतते-बीतते वह लौट भी आयेगा।'

तारा के मन की उद्विग्नता बहुत कम हो गयी। रुक्मणि ने तारा को सम्बोधित करते हुए बोले,—मैंने ज्योतिषाचार्य की भविष्यवाणी कभी झूठी होते नही सुनी है।'

'आज भी झूठी नही होनी चाहिए।' ज्योतिषाचार्य की वाणी में महान आत्मविश्वास है—वे कहते रहे—'और कुछ पूछना है आप को?'

बहुत सकोच करते हुए तारा ने श्यामा के दूध की चोरी के सम्बन्ध में पूछा। रुक्मणिजो मुस्करा पड़े। ज्योतिषाचार्य पुनः गम्भीरता पूर्वक गणाना करने लगे। इस बार की गणाना में तो उन्हे काफी समय लगा जैसे उनका परिणाम ही दुविधा पड रहा है। उन्होंने बड़ा विचार करते हुए कहा—'श्यामा का दूध कोई चुराता नही। लगता है, अब उसका दूध ही अनंगपाल के भाग्य में नही है।'

'यह कैसे महराज?' तारा ने पूछा।

'यह तो मै नही बता सकता।' ज्योतिषचार्य ने स्पष्ट कहा। फिर एक क्षण के लिए मौन छा गया। इसके बाद दोनो प्राणी वृद्ध पण्डित का चरण स्पर्श कर चल पड़े।

गॉव मे कनमनाहट प्रारम्भ हो गयी थी पर अभी बाहर कोई दिखाई नही पड़ता था। लोग बिस्तर पर पड़े ही हरिनाम ले रहे थे। तारा

और रुक्मणि दोनो अपने-अपने घर की ओर चले। निश्चय हुआ कि दिन चढे तारा पुनः रुक्मणि के घर आवेंगी। यदि भोज तब तक न आया तो उसके पता लगाने की व्यवस्था की जायगी।

घर जाकर तारा पुनः विस्तर पर पड गयी रात भर की जागी थी जमुहाई आने लगी। नींद की शीतल धूल के नीचे चिंता की चिता बुझती तो नही पर ज्वाला दब अवश्य जाती है। तारा की आन्तरिक ज्वाला को उसको नीद ने दबा दिया। वृक्षों की डाल पर जब पंछी जागे तब तारा सोने लगी।

भोज आकर बाहर ही खडा रहा। द्वार खुला था, फिर भी उसकी हिम्मत नही हो रही थी कि वह घर में घुसे। उसने बाली को संकेत किया कि पहले तुम चलो। उसने उससे कहा कि पहले तुम चलो। देव बोला—अरे माँ जागी थोड़े ही, सबेरा हो गया है। कही गयी होगी।'

'ना ..ना मेरी राह देखती वह बैठी होगी। कही जा नहीं सकती।' भोज ने कहा।

'बैठी होगी तो आपही पहले जाइए।. .विवाह तो हुआ आपका और हम लोग पहले घर में घुसकर क्यो मार खावें।'—देव बोला।

'अरे, विवाह आदि की बात मत करना।...चुप रहना।' भोज ने कहा।

'मै कहूँगा, कहूंगा—जरूर कहूँगा कि भोज भइया चोर का पता लगाने नही विवाह करने गये थे।' देव ने कहा। जैसा आप जानते है, बाली के कहने पर तो झूलनोत्सव का कार्यक्रम ही बना था, पर देव की उसमे बिल्कुल सहमति नही थी। वह तो इन लोगो के कहने पर चला गया था। इस समय उसने अच्छा अवसर देखकर अपना विरोध प्रदर्शित किया, पर बाली उसे बार-बार ऐसा न करने के लिए मना कर रहा था। जब देव किसी प्रकार नही माना, तब भोज ने कहा,—'तुम हमारी बात नही मानते, पर महुए के वृक्ष के नीचे काकाजी ने तुमसे क्या प्रतिज्ञा करायी थी ?'

भोज ने यह अमोघ अस्त्र चलाया। अब देव पराजित हो, चुप हो गया। उसने अपना सिर नीचा कर लिया! भोज ने उसे आज्ञा दी।—'जाओ भीतर, देखो माँ है कि नहीं।'

बेचारा देख आया। माँ सो रही थी। तब तीनों गये और बिना कुछ कहे घर में बिछी चारपायी पर सो गये।

थोड़ी देर के बाद माँ उठी। वह घबरायी हुई कोठी के भीतर भगवान शंकर को नमस्कार करने गयी। वहाँ उसने देखा तीनों चारपायी पर पड़े सो रहे हैं। उसके मनको शान्ति मिली। धन्य हो भगवान्, तुम्हारी माया अपार है इतना कहती हुई उसने शंकर की मूर्ति पर मस्तक टेक दिया और बड़ी देर तक कुछ भुनभुनाती वैसी ही खड़ी रही।

फिर उसने जगाया। जागते ही थे सब, पर मारे डर के सो रहे थे। ज्यों-ज्यो वह जगाती त्यों-त्यों और अंगड़ाई लेकर वे करवटे बदलते जाते थे। अन्तमे उन्हे उठना ही पड़ा।

'रात भर कहाँ रहे तुम लोग ?' तारा का यह पहला प्रश्न था।

सब चुप एक दूसरे का मुंह देखते रहे। जैसे किसी के मुँह में जबान ही न थी।

इस बार माँ और भी तेज तड़पी,—'बोलते क्यों नहीं ? कहाँ थे तुम लोग ?'

बाली चुप। देव चुप।—भोज ने देखा। वह काँपते दयनीय स्वर में बोला—'चोर.. खोज रहा था. माँ ?'

'रात भर चोर ही खोजते रहे ?'

'हाँ माँ बड़ा परेशान हो गया।'

'तो कुछ पता चला ?'

'हाँ आज पता चल जायगा।'

'तब रात भर क्या करते रहे।' माँ पुनः तड़पी।

'माँ कैसे बताऊं कि क्या करता रहा माँ।' भोज ने भोली आकृति बनाकर कहा। तब तक तारा की दृष्टि भोज के मस्तक पर लगे तिलक की ओर गयी। अरे यह तो रक्त का तिलक है।' वह घबरायी हुई बोली— 'यह तिलक किसने लगाया?'

अब भोज और अधिक कांपने लगा। उसने नेत्रों से बाली की ओर संकेत किया। फिर माँ बोली—'बाली ने ही लगाया है या किसी दूसरे ने?'

'नही माँ बाली ने ही लगाया है। चाँदनी रात थी। हम लोग रास्ते में राजा का खेल खेलने लगे। बाली ने मुझे राजा बनाया और अपना अंगूठा चीरकर तिलक कर दिया।' भोज एक स्वर में कह गया। मनुष्य एक झूठ छिपाने के लिए कितना झूठ बोलता है।

तारा ने बाली का अंगूठा देखा तब उसे सन्तोष हुआ। वह मन ही मन प्रसन्न हुई। भला यह उसे राजा तो बनाना चाहता है। तब अवश्य ही एक न एक दिन आज के खेल का राजा वास्तविक राजा बनेगा। फिर उसने भोज को सावधान करते हुए कहा—'देखो अब कभी यदि तुम्हारा राज तिलक हो तो इन लोगों के रक्त से ही होना चाहिए।'

वे माँ के कथन का उचित तात्पर्य समझ न सके।

× × ×

आज अधिक दिन चढ़े वे गाय लेकर जंगल में पहुँचे। रास्ते में ही निश्चित हो गया था कि बाली और देव आज सब गायों की रखवाली करेंगे। भोज केवल एक गाय श्यामा पर ही ध्यान रखेगा। जहाँ जहाँ वह जायगी वह उसके पीछे पीछे जायगा।

जगल में आते ही श्यामा एक ओर चल पड़ी और अरावली की

पहाडियो को पार करते हुए निचले भाग से उत्तर पूरब की ओर वह चली। भाज उसके पीछे पीछे चला ।

जब वह पहाड़ी के नीचे बहुत दूर चला गया तब ऊपर से बाली चिल्लाया,—'देखो बहुत देर न होने पाये । यदि सन्ध्या होने लगे तो तुम श्यामा को छोडकर चले आना ।' उसने नीचे से हाथ हिलाकर अपनी स्वीकृत दी । बाली की आवाज बड़ी देर तक पहाड़ियो मे गूँजती रही ।

गाय के साथ भोज चलते-चलते थक गया । रात मे जागने के अतिरिक्त पैदल चलने की भी थकावट थी । इस समय फिर पैदल चलना पडा । दोपहर होते-होते वह बिल्कुल थक गया था । एक घने वृक्ष के नीचे वह श्यामा के गले मे बंधी रस्सी पकड कर बैठ गया । पास ही एक झरना झर रहा था वहाँ जाकर उसने जल पिया । हाथ पैर धोये । पर खाना ता बाली के यहाँ ही भूल आया है । यह एक और विचित्र बात हुई, किन्तु अब बेचारा क्या करे । रस्सी पकड़े पकडे ही उस वृक्ष के नीचे आराम करने लगा । झपकियाँ आने लगी । जरा सा हाथ ढीला पडा कि रस्सी छोडाकर श्यामा भागी । 'धत् तेरे की, विचित्र गाय है । एक क्षण भी विश्राम करने नही दिया ।'—भुनभुनाता भोज चल पडा ।

चलते चलते गाय घने जङ्गल में पहुँची । जङ्गल एक दम सुनसान था चारो ओर हरियाली छायी थी । पक्षियो के अतिरिक्त वहाँ पशु दिखायी नही पडते थे, पर पग-पग पर हिंसक पशु के होने का भय लगता था । गाय लता द्रुमो को लाँघती फाँदती आगे बढती ही रही । कुछ और आगे बढने पर एक गुफा दिखायी पडी । उसके द्वार पर सघन झाड़ियाँ थी । गुफा से धुँआ निकल रहा था । झाडियो से छन-छन कर आता धुँआ ऐसा लग रहा था मानो पर्वत के गर्भ में आग लगी हो।

गाय लपकती उसी गुफा में घुसी । भोज की हिम्मत अब छूट गयी । वह गुफा में जा न सका बाहर खड़ा रहा । फिर बहुत देर तक इधर उधर

देखकर और गुफा मे झॉक कर वह किसी प्रकार हाथ से झाड़ी हटाता भीतर घुसा। यहॉ उसने विचित्र दृश्य देखा। सामने एक विशाल शिवलिंग है। बेल पत्र तथा पुष्पों से वही करीब-करीब आधा ढका है। उससे कई काले नाग लिपटे हैं। पास ही एक खप्पर में दीप जल रहा है। दीवार पर दो त्रिशूल टंगे है। वह एक अत्यन्त जीर्णकाय तपस्वी साधु बैठा है। साधु ऑखें बन्द किये ध्यान में मग्न है। उसकी श्वेत लम्बी जटाएँ कन्धे के नीचे तक लटक रही हैं। पके बालों से युक्त आकृति से विचित्र आभा चमक रही है चारो ओर फल फूल बिखरे हैं। श्यामा पहुँचते ही फल खाने लगी। भोज यह सब देखकर चकित सा रह गया। उस पर साधु के व्यक्तित्व का विलक्षण प्रभाव पड़ा। उसने तुरत ही उनके चरणों पर अपना मस्तक रख दिया। साधु का ध्यान टूटा और भोज की पीठ पर हाथ फेरते हुए बोले—'कौन! एकलिंग का दीवान?'

भोज ज्यों का त्यों चरणों पर पड़ा रहा, फिर साधु ने कहा—'बैठो एकलिंग के दीवान?' भोज उठकर बैठ गया। साधु ने उसे बहुत से फल दिये। भोज को भूख लगी थी ही उसने आनन्दपूर्वक खाया।

'तुम बहुत थके हो। लो यह कन्द खाओ। तुम्हारी थकावट दूर हो जायगी।'—उन्होंने एक विशेष प्रकार का कन्द भोज को देते हुए कहा।

सचमुच कन्द का जादू जैसा प्रभाव पड़ा!

वह अपने को एक दम ताजा अनुभव करने लगा। उसे ऐसा लगा मानो अभी वह सोकर उठा हो।

फिर साधु जोर से चिल्लाया—'जय शंकर...श्यामा आ गयी।'

गुफा के भीतर से एक दूसरा साधु आया। उसने वह मिट्टी के पात्र में श्यामा का दूध दूहने लगा।

साधु ने पुनः भोज से कहा—'क्यों श्यामा की चोरी का पता लगाने चले हो न, इतना कहकर वह हॅसने लगा।

भोज कुछ न बोला ।

'अब यह गाय अनंगपाल को दूध देना नही चाहती । तुम जाकर उससे कह देना कि श्यामा हारित मुनि के आश्रम में जाती है ।' इतना कहकर साधु फिर ध्यानावस्थित हो गया । भोज अपलक नयन से उसे देखता रहा । उसे ऐसा लग रहा था मानो कोई ज्योति उस वृद्ध तपस्वी की आकृति से निकल कर चारो ओर फैल रही है ।

१

समय के पखं पर चढ कर रात, दिन, महीने और वर्ष उड्ते चले गये। किसी-किसी का तो कहना है कि दो साल से भी अधिक हो गया।

नागहृद के जीवन मे भोज अब बिलकुल रम गया है। उसे अब यह ग्राम पराया नही लगता। यहाँ की हर वस्तु उसकी अपनी है। जहाँ चाहे, वहाँ रहे। जा चाहे, वह करे। कोई कुछ बोलता नहीं है सब उसके चरित्र और व्यवहार से प्रभावित है। .और यह कहा जाय कि लोग उसका थोड़ा बहुत सम्मान भी करते हैं, तो भूल न होगी। परम तपस्वी हारित मुनि के आश्रम में प्रति दिन श्यामा का दूध लेकर उसे जाना होता है। इससे मुनिजो का दर्शन भी हो जाता है और वह अनंग पालजी की आज्ञा का

पालन भी कर लेता है। अब अनंगपाल श्यामा का दूध नही पीते। वह केवल उसकी सेवा करते है और दूध मुनि के आश्रम में भिजवा देते हैं।

यह बात भी चारो ओर अच्छी तरह प्रचारित हो गयी है कि भोज को मुनिजी का आशिर्वाद प्राप्त है। वे उसे 'एकलिग का दीवान' कहते हैं। निकट शिवरात्रि को हारित मुनि उसका यज्ञोपवीत संस्कार भी अपने ही आश्रम में करेंगे। ऐसा सिद्ध सन्त जिसे मानता हो, भला और लोग न मानें यह कैसे हो सकता है। किन्तु भोज अब भी अपना पुराना ही काम करता है। गायें चराना, जङ्गल मे घूमना, बशी बजाना और संध्या को पंडित रुक्मणिजी के यहाँ जाकर वैदिक मंत्र कण्ठाग्र करना।

बाली और देव भी छाया की भाँति उसके साथ लगे रहते हैं। बीच बीच मे कभी कभी वे अपने घर भी चले जाते हैं। अभी आज ही तो पाराशर से वे लौटे है। इस बार वे अपने काका (गमेती) और चम्पा को भी अपने साथ लाये है।

कल शिवरात्रि है, भोज के यज्ञोपवीत का दिन।

तारा को देखते ही चम्पा उसके चरणों पर गिर पड़ी। गमेती ने नमस्कार किया। तब गमेती से वह गद्‌गद् कण्ठ में बोली—'बड़ा अच्छा हुआ जो आप आ गये। भला अपने बच्चे का उपनयन संस्कार तो आप देख लेंगे।"

'यह तो हमारा भाग्य है जो हम आ गये।.. हमने तो जादव को भी बुलाया है, पर वह अभी तक आया नही।' गमेती कुछ आश्चर्य करते हुए बोला।

'कल तक आ सकते हैं।...पर हारित मुनि जी का आश्रम तो वह न जानते होंगे।'

'अरे...ऐसा कोई स्थान नहीं जो जादव न जानता हो। 'गमेती मुस्कराया।

तब तक भोज भीतर से बाहर आया। वह खिल-खिलाता हुआ काका के गले से लिपट गया। गमेती ने देखा, अब उसका स्वास्थ्य पहले से बहुत अच्छा है। उसके चेहरे से एक प्रकार की आभा टपक रही है। उसने तारा से कहा,—'आप ने तो भोज को एक दम बदल दिया है।'

'मुझमें भला क्या है? यहाँ का वातावरण ही कुछ ऐसा है सरदार कि आदमी क्या पत्थर भी देखते देखते बदल जाय।'

'पर बाली और देव तो मुझे ज्यों के त्यों दिखायी देते हैं?'

'नहीं ऐसी बात तो नही है। इन लोगों को भी शिव स्त्रोत तो याद ही हो गया होगा'

- गमेती ने बाली से पूछा। उसने सिर हिलाकर नकारात्मक उत्तर दिया। गमेती को जोर की हँसी आ गयी। वह बोला—'यह सब सस्कारों का प्रभाव है। एक ओर राजवश का रक्त है तो दूसरी ओर गवारू असभ्य तथा जङ्गली जाति भील का रक्त।' गमेती हँसता रहा।

'सस्कार बाधक होता अवश्य है, पर वह धारा को मोड़ नही सकता। आज इन्हे शिव स्त्रोत याद नही है, कल याद होगा, परसों याद होगा। पर याद होगा। ऐसा नही है कि न याद हो।'' तारा ने कहा।

फिर बाली और देव ने भोज के साथ संकेत में कुछ बातें की और वे शिवालय की ओर चल पड़े। उन्हे इस प्रकार की बातचीत में कोई रस नही था। सन्ध्या के पूजन की बेला भी हो गयी थी। बहाना अच्छा था। पर तारा अब भी बैठी थी। वह अपने इस अतिथि को छोड़कर भला कैसे जाय। उसने भगवान शंकर को मन ही मन नमस्कार किया और चम्पा से बोली—'बेटी तुम इस गाँव में पहली बार आयी हो। जाना चाहो, तो जरा घूमकर देख लो हमारा गाँव कैसा है? या शिवालय पर चली जाओ, देखो कैसी अच्छी आरती होती है।'

अकेले जाने में वह पहले हिचकिचायी फिर धीरे से बोली—'यहाँ अरबी लोग तो नही आते माँ?'

'नहीं बेटा, यहाँ तो ऐसी कोई बात नही।' फिर गमेती को संबोधित करके तारा ने पूछा—'क्यो, पाराशर में उनका जोर बढ़ता जा रहा है क्या ?'

'इधर तो बहुत अधिक हो गया। सन्ध्या के बाद हम लोग औरतों को पहाडी पर जाने नहीं देते।' गमेती बोला।

'लेकिन सरदार, आश्चर्य है कि इधर ऐसी कोई घटना सुनायी नहीं पडती। दो तीन महीने में वे एक दो बार आते हैं, पर नगर तक ही रहते हैं।'

'बात यह है कि अरबी लोग तीन ही स्थान पर जाते हैं। या तो जहाँ उन्हे पैसा मिले, या सुन्दरी मिले। तीसरे ऐसे जगह पर भी वे जाते हैं, जहाँ वे छेड दिये जाते हैं।...यदि भोज ने उस अरबी सैनिक को मारा न होता तो कदाचित् वे पाराशर में भी दिखायी न देते।'

'. पर सरदार, जहाँ तक मै सोचती हूँ भोज ने उसे मारकर बुरा नही किया।' तारा बोली।

'अरे बुरा क्या, बहुत अच्छा किया। उन्हे भी मालूम हो जायगा कि यहाँ के लोग कैसे है ?' इसके बाद कुछ क्षणो के लिए बातचीत का सिल-सिला रुका। फिर चम्पा उठकर चली गयी। सूरज डूब गया था। आकाश मे थोड़ी-थोड़ी ललाई थी। ठंठक बढ चली थी। तारा भीतर गयी और मिट्टी के पात्र में तापने के लिए आग सुलगाने लगी। गमेती भी जरा उठकर गाँव से टहलने चला गया।

तारा आज मनही मन बडी प्रसन्न थी। तेरह चौदह वर्ष से संजोकर रखी उसकी थाती का कल यज्ञोपवीत होगा। काश आज महाराजा या महारानी होते! उसने तो पुरोहित सत्यनारायण जी को भी बुलाया था, पर आज तो नही आये। वह भी यह समाचार सुनकर प्रसन्न हुए

होंगे। उनको तो आना ही चाहिए। इधर ईडर का भी कोई समाचार नही मिला।

तब तक वह आग लेकर और कम्बल ओढकर बाहर आयी। थोड़ी देर में गमेती लौटा। वह तारा के साथ आग तापते हुए बातें करता रहा। तारा ने पूछा—'क्यों सरदार, इधर पुरोहित सत्यनारायण जी दिखायी पड़े थे?'

'दिखायी तो नही पडे, पर उनका समाचार जादव से मिल जाता है।. .अच्छी तरह हैं और अपनी राजनीति में लगे हैं।'

'राजनीति कैसी?'

'आज कल ईडर की हालत अच्छी नही है। वह ऐसी स्थिति उत्पन्न कर रहे हैं कि जल्दी से जल्दी भोज को वहाँ ले चला जाय।...जादव से भी इस सम्बन्ध में मेरी जमकर बातें हुई हैं।. .हम इस निष्कर्ष पर आये है कि वहाँ के भीलों को मिलाना चाहिए, फिर बात बन जायगी।. . यह काम कठिन भी नही है। वहाँ पर बहुत से भील हमारे परिचित हैं। बहुतों से जादव का भी बडा अच्छा सम्बन्ध है। यदि आपकी आज्ञा हो तो धीरे-धीरे हम उन्हे भडकाना शुरु करें।'

'पर इससे होगा क्या?' तारा ने बहुत सोचकर कहा—बहुत होगा आप लोग भोज को लेजाकर गद्दी पर बैठा देंगे। पर गद्दी पर बैठना उतना जरूरी नहीं है जितना जरूरी है गद्दी की रक्षा करने की शक्ति प्राप्त करना। बिना शक्ति का राजा जनता की कृपा पर रहता है। पर राजा वह है, जो जनता को अपनी कृपा पर रखे।'

'तब इसके लिए क्या करना चाहिए? . मेरे विचार से एक और उपाय हो सकता है।'

'क्या?' तारा ने अंगीठी की आग फूंकते हुए पूछा। फूंकने से धूआँ

और राख उठी। गमेती ने अपना मुख फेर लिया फिर कुछ रुककर बोला—'यह जो चित्तौड के राजा मानमोरी (मानसिह मौर्य) है, वह भोज के मामा लगते है न ?'

'आपको कैसे मालूम ?'

'अरे आप हमको क्या समझती है।'—वह जोर से हँसा। फिर बोला—'पुरोहित जी ने ही यह बताया था।'

'तो फिर ?'

'.. मेरा तो विचार है एक बार भोज को वहाँ जाना चाहिए। वह तो उनका अपना सगा है, जरूर कुछ न कुछ वे करेंगे।'

'तारा ने एक बार खांसा और फिर आग ठीक करते हुए बडा सोच-कर एक दार्शनिक की भाँति बोली,—'राजनीति बडी कुटिल होती है, सरदार। वह अपना पराया नही देखती। केवल स्वार्थ देखती है। उनके यहाँ जाने से भोज की क्या स्थिति होगी, मै कह नहीं सकती।'

'अपना पराया' भी तो एक स्वार्थ हैं।' उसकी इस बात का तारा पर बडा प्रभाव पडा। इसलिए नही कि यह बहुत बड़ी बात थी, वरन् यह गमेती ऐसे व्यक्ति के मुख से कही गयी थी जिसे कही शिक्षा नही मिली थी। केवल कुछ जङ्गली लोगों के अतिरिक्त किसी अच्छे का जिसे साथ भी नही मिला था। गमेती ने पुनः कहा,—'चित्तौड़ की हालत इस समय अच्छी नही। आये दिन तो वहाँ अरवी सैनिक लूटकर मार करते पहुँचते हैं। मानमोरी से प्रजा असंतुष्ट है। सरदार उसे किसी भी समय हटा सकते हैं। ऐसे समय भोज का वहाँ पहुँचना लाभ प्रद ही होगा।'

तारा ने अनुभव किया कि गमेती ने भोज के सम्बन्ध में जितना सोचा है उतना उसने नहीं सोचा है। उसे हर स्थान की स्थिति का अच्छा ज्ञान भी है। कितनी सूचनाएँ इसके पास हैं।

तब तक 'चाडाल चौकडी' भी शिवालय से लौट आयी । माँ ने भोज से पूछा,—'ज्योतिषाचार्य महेश पण्डित अभी शिवालय पर हैं या गये ।'

'नही माँ, वह पूजन समाप्त कर चले गये हैं ।'

'अच्छा तो तुम लोग बैठो । मै काका को लेकर जा रही हूं । .तब तक चम्पा ! तू आग जला कर कुछ रोटियाँ तो बना डाल ।'

दोनो ज्योतिषाचार्य के यहाँ गये । कुछ पता तो नही चला कि क्यों गये । किन्तु मै अनुमान लगाता हूँ कि भोज की सम्भावित चित्तौड़ यात्रा के सम्बन्ध मे ही तारा कदाचित् उनसे कुछ जानना चाहती थी ।

इधर चारो बालक भीतर दालान मे बिछी चारपायी पर 'धम' से एक साथ ही बैठ गये । चारपायी यहाँ एक ही थी और वह भी चार व्यक्तियों के बैठने योग्य बिल्कुल नही थी । जहाँ बाली थोडा दाये से बाँये मुडा, तहाँ वह चरमरायी । तब भोज ने चम्पा को सम्बोधित कर कहा,—'क्यो चम्पा, मेरे यज्ञोपवीत संस्कार मे तुम्हे किसने बुलाया है ?'

'किसी ने नही । यह अपने आप चली आयी है ।' देव ने कहा ।

'अरे, तो तू बिना बुलाये चली आयी है ।...मालूम है, जो बिना बुलाये आता है उसका सम्मान नहीं किया जाता ।. .तो तू चल नीचे बैठ । हम लोग खाट पर बैठेंगे ।' सब खिलखिला कर हँस पडे । 'हाँ हाँ भोज भैया बिल्कुल ठीक कह रहे है । चल उतर नीचे ।' देव बोला ।

'मै नही नीचे उतरूंगी, यह नियम तुम्हारे यहाँ का है या और कही का भी ? हम भील बिना बुलाये आने वालो का तो और भी अधिक सम्मान करते हैं ।'

'चल-चल बड़ी बनी है शास्त्रार्थ करने वाली । उतर नीचे ।' भोज बोला ।

'चलो-चला मै ऐसी लड़की नही हूं कि तुम्हारी बात मान जाऊँ ।'

'अच्छा तो तू मेरी बात नही मानेगी ?'

'नही मानूँगी ।'

'अच्छा, तो अब मेरी तेरी कुट्टी ।' इतना कहकर भोज ने अपने दहिने हाथ की छोटी अँगुली चम्पा के सामने कर दी । उसने भी अपनी छोटी अँगुली से उसे छूकर चूम लिया । फिर बोली 'कुट्टी—छः महीने की छुट्टी ।'

'चलो हल लोग भी कुट्टी कर ले । अब कोई भी चम्पा से नही बोलेगा ।' देव ने कहा ।

'मत न बोलो, तुम लोगो से बोलता कौन है ।' चम्पा ने कहा और फिर उसने बाली तथा देव से भी 'कुट्टी' कर ली ।

तीनों आपस मे बातें करते थे पर चम्पा चुप थी । थोडी देर के बाद स्वयं उसका रहना वहाँ भार हो गया । तब वह बिना किसी से कुछ बोले मटकती हुई रसोई की कोठरी की ओर चली गयी । तीनों बैठे एक दूसरे को देखकर मुस्कराने लगे । फिर देव तुरन्त रसोई की कोठरी में गया और वह अँगोठी जिसे तारा और गमेती जाने के पहले ताप रहे थे, उठा ले आया । सब एक ही कम्बल में सिमिट कर बैठे और आग तापने लगे । बाली ने शिकार की कहानी शुरू की ।

थोड़ी देर के बाद तारा आयी । लगता है कि गमेती रास्ते भर बात करता आया है । वह जब घर में घुसा तब भी तारा से कह रहा था,—'देखा, मैंने क्या कहा था ? भोज को वहाँ जाने से लाभ ही लाभ होगा ।' वह आगे और भी कुछ कहता । पर तारा ने बीच में ही आँखो का संकेत कर उसे चुप रहने को कहा । वह चुप हो गया । किन्तु यह ध्वनि भोज के कान में पड़ चुप थी । वह अँगीठी छोड़कर लपकता हुआ आया और बड़ी प्रसन्नता से पूछा,—'कहाँ जाने से लाभ होगा काका ?'

गमेती कुछ न बोला । तारा भी चाहती थी इस समय भोज से इसकी कुछ चर्चा न की जाय, पर भोज ने सुन लिया था । भला वह कब मानने

वाला था। तारा ने उसे समझाते हुए कहा,—'बेटा, तुम्हारे सम्बन्ध में कोई बात नही थी।'

'नही, नही माँ तुम झूठ बोलती हो . काका अभी तो कह रहे थे।' तारा हँस पड़ी। उसने कहा,—'बेटा सारी बातें जानने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए।'

'क्या कहती हो माँ ? अभी तो काका बता रहे थे और तुम कहती हो कि जानना नही चाहिए। . तुम्ही बता दो न काका।' अब वह गमेती से बिनती करने लगा। अधिक झूठ बोलने से लाभ ही क्या। उसने तारा की ओर देखकर थोड़ा सन्तोष प्रदर्शित करते हुए कहा,—'चित्तौड़ जाने से कदाचित् तुम्हारा लाभ हो।'

'क्या लाभ होगा ?' अब तक बाली और देव भी आ गये थे।

'यह तो नही मालूम, पर ज्योतिषी ने बतलाया है कि वहाँ जाने से तुम्हारा लाभ होगा।' इतना सुनकर वह प्रसन्नता में उछलने लगा।— तारा और गमेती बाहर चारपायी बिछाकर पुनः बैठ गये। रात हो गयी थी। ठंडी हवा तेजी से बह रही थी। दोनों अपने-अपने कम्बल में सिकुड़े जा रहे थे। तारा ने भोज को पुकार कर कहा,—'अरे सुन, जरा अँगीठी लेता आ।'

भोज पल में उछलता कूदता अँगीठी बाहर ले आया और रखकर फिर वैसे ही भीतर आया। चम्पा के सामने से यह कहता हुआ निकला,—'हम लोग चित्तौड़ जायेंगे, चम्पा को नही ले जायेंगे, हम लोग चित्तौड़. .'

बालक यदि रुठते हैं तो वह भी आनन्दित होने के लिए। दुखी होने के लिए नहीं। पर चम्पा को तो सबने एक दम दुखी कर दिया था। उसका बायकाट हो गया था। बेचारी मन मारे रोटियाँ बना रही थी और मन ही मन कुछ भुनभुनाती जाती थी, जैसे अग्निदेव को प्रसन्न करने के लिए कोई मंत्र पढ़ रही हो।

रोटियाँ बनाकर उसने दूध गरम करने को रखा और माँजी से कहने घर के बाहर गयी। इस समय उसे रुलायी आ रही थी। विचित्र बात है, जहाँ जरा सा कुछ हुआ कि वह रोने लगती है। इस समय भी आखिर बात ही क्या थी। लड़के नही बोल रहे थे न बोलें। पर उसकी आँखें ऐसी भर आयी कि माताजी के पास जाकर द्वार पर खड़ी रही। कुछ बोल न सकी। गमेती माताजी से बात करने में तल्लीन था।—उसने माताजी से पूछा,—'भोज अपना पूरा परिचय जानता है कि नही ?'

'कह नही सकती। मैंने तो उसे कभी नही बताया है।'

'तब भला वह अपना परिचय क्या जाने...और जब तक वह अपने को नही पहचानेगा तब तक उसमे स्वाभिमान आ नही सकता, ऐसा पुरोहित जी कहते थे। उनका कहना तो था कि भोज को अब सारी बातें बता देनी चाहिए।'

'पुरोहितजी तो कुछ न कुछ बहुत जल्दी कर डालना चाहते है! पर मै ऐसा नही चाहती मै तो मौका देख रही हूँ। समय सब कुछ ठीक कर देता है।...और स्वाभिमान वह भी समय के साथ आता जायगा।...अभी एक दिन की बात है कि वह खेल-खेल में राजा बना था। बालो ने अपना अंगूठा चीर कर रक्त से उसका राजतिलक किया था।'

'वाह-वाह ..यह तो बड़ी अच्छी बात सुनायी आपने।' गमेती बोला।

तब तक चम्पा की सिसकन सुनायी पडी। उन लोगों का ध्यान अचानक द्वार की ओर खीच आया। 'क्या बात है चम्पा।' तारा बोली।

चम्पा ने अपनी सारी बातें, कुट्टी से लेकर चिढ़ाने तक की—एक के बाद एक सिसकते हुए कह सुनायी। तब तारा ने माथे पर हाथ रखकर कहा,—'ओ हो...तुम लोग तो जैसे आफत कर देते हो। कौन कहता है

कि तुम्हें बुलाया नही गया था।...मैने तुम्हे बुलाया है. चलो भीतर। मै अभी भोज से पूछती हूँ।'

× × ×

आज शिवरात्रि है। पूरे गॉव में नयी हलचल सी दिखायी देती है। बाल-वृद्ध-युवा ऐसा कोई नहीं बचा है जो आज व्रत न हो। रोगियो तक को आज केवल दूधके अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलेगा। शिवालय प्रातः काल से ही अच्छी तरह धोया जा रहा। बालक कुंए पर से पानी भर-भर कर ले जा रहे हैं। सबेरा होते कुछ लोग अरावली की पहाड़ियो मे बेल-पत्र और पुष्प की खोज में चले गये है। आज गायें भी चरने नही गयी है। सब के दरवाजे पर बंधी हैं।

आज मध्याह्न में हारित मुनिके आश्रम मे भोज का यज्ञोपवीत होगा। यह समाचार अच्छी तरह गॉव भर में फैल गया है। सवेरा होने के पहले ही से अनेक लोग तारा के द्वार पर आ चुके हैं। सब का तारा से बस एक यही प्रश्न था कि मुनि के आश्रम मे आप लोगे कब तक चलिएगा। 'यही दिन चढे यहाॅ से चल पड़ूंगी।' तारा ने सब को ही उत्तर दिया।

आज तारा प्रातः से ही तैयारी में लगी है। चम्पा मे तो दूना उत्साह दिखायी दे रहा है। बाली देव सब के आनन्द का ठिकाना नही, फिर भोज का क्या कहना। तारा के मुँह से निकलने भर की देर है कोई भी काम हो, बाली और देव करने के लिए तत्पर हैं। तारा ने बाली को गुरू जी को बुलाने के लिए भेजा।

आज मुनि के आश्रम में मेला सा लग जायगा। क्योंकि आज वह समाधि भी लेने वाले है। देश विदेश से शिष्य आज गुरू का अन्तिम दर्शन के लिये आयेंगे। इसलिए जहाॅ तक हो जल्दी ही चलना चाहिए।

तारा ने सोचा। फिर वह शीघ्र ही ज्योतिषाचार्य और अनंगपालजी के यहाँ गयी।

देखते-देखते लोग भोज के द्वार पर एकत्र होने लगे। जिन्हे इस यज्ञोपवीत से मतलब नही था वे भी जुटते थे। इसी बहाने उस महा तपस्वी के दर्शन तो हो जायेंगे। भीड़ लग गयी थी। पण्डित रुक्मणिजी की धर्मपत्नी ने तारा से पूछा—कब तक वहाँ से लौटा जायगा, तारा बहन।'

'क्या बताऊँ बहन। जाना तो अपने वश में है पर आना तो दूसरों के वश में न।' तारा ने कहा।

ज्योतिषाचार्य जी ने कहा,—'आज की घड़ी बड़ी शुभ है।'

'वाह रे भाग्य। यह बड़े पुण्य का फल है कि महातपस्वी परम सिद्ध के हाथों से यज्ञोपवीत संस्कार हो।' यह ध्वनि वृद्ध ब्राह्मण अनंगपाल की थी।

करीब-करीब सभी आज की शुभ घडी और भोज के भाग्य की प्रशंसा कर रहे थे। बीच से उठकर श्रीरुक्मणिजी ने तारा को जरा किनारे बुलाकर पूछा,—'सब सामान तो ठीक है न! किसी चीज की कमी हो, तो जल्दी से मंगा लिया जाय, क्योकि अब देर करना ठीक नही।'

'महाराज, सामान तो मैने कुछ जुटाया ही नही है।...मुनिजी ने कहा था कि कोई भी वस्तु मत ले आना। सब कुछ यही ठीक रहेगा।'

'तब तो चल पड़ो, नही तो लौटने मे काफी देर हो जायगी। लोग चाहते हैं कि सन्ध्या होते-होते लौट आये और शिवालय के शृंगार में भी भाग लें।'

'पर महाराज, अभी तक पुरोहित जी नहीं आये है। उन्ही की राह देख रही हूँ।'

'कौन पुरोहित?' पंडित जी ने कुछ सोचते हुए कहा।

'अरे वही सत्यनारायणजी, आप तो उन्हे...।'

तारा पूरा कह भी नही पायी थी कि पंडितजी बोले—'हॉ हॉ...अभी तक नही आये, बडा आश्चर्य है ?'

तब ज्योतिषाचार्यजी चिल्लाए,—'अरे भाई देर क्यो हो रही है।' 'पद्म' योग अब केवल आधी घड़ी और रह गया है। इसी में प्रयाण कर देना चाहिए।'

ज्योतिषचार्यजी कह रहे हैं, तब तो जरूर चल देना चहिए। फिर उसने रुक्मणिजी से कहा,—'तो अब चलिए जिन्हे आना होगा वे आश्रय में ही आऐंगे।'

भगवान् शिव का नाम लेकर लोग चल पड़े। पूरी बारात थी। सूर्य्य अब अच्छी तरह निकल आया था। फिर भी ठंढी हवा बह रही थी। अधिकाश लोग कम्बल ओढ़े थे। ज्योतिषाचार्य के पास तो काश्मीरी शाल था। यह सोलंकी राज की कृपा थी। कुछ लोग आपस में बातें करते चले जा रहे थे। कुछ मंगल पाठ पढ रहे थे। चम्पा मन ही मन गुनगुना रही थी! तारा ग्राम की कुछ स्त्रियों से बातें करने में पीछे ही रह गयी थी।

पहले ये लोग शिवालय की ओर दर्शन करने के लिए चले। भोज आगे-आगे था। वह पीला वस्त्र पहने था। उसके स्वर्ण के समान दीप्त तन पर पीत वस्त्रों की आभा ऐसी लग रही थी मानों पुखराज के पहाड़ पर मध्याह्न की धूप पड रही हो। उसकी आकृति से आज जैसे तेज भभक रहा था। उसके पीछे बाली और देव थे और उनके पीछे चम्पा थी। लाल घाघरे पर आज उसने भी पीले रंग की ओढनी ओढ़ ली थी ..और तब गॉव के अन्य लोग थे।

रास्ते में जो भी मिलता वह तारा को रोक कर कुछ न कुछ कहना ही चाहता था। दिव्यमान की स्त्री ने कहा—'बहन! चलती तो मैं भी पर क्या करूँ। रमेश के पिता जी बीमार हैं। उन्हे छोड़कर कैसे चलूँ।'

मंगल कामना करते हुए शशिनाथ बोले—'तारा, तुमने देव जैसा लडका पाया है। हरित मुनि के आशीर्वाद से अवश्य एक न एक दिन उसका भाग्य चमकेगा।' घन्टों बात करनेवाली सती ने अपनत्व दिखाते हुए इस समय केवल इतना कहा,—'बहन लाचार हूँ चल तो नही रही हूँ। पर ज्योनार में मुझे भुला मत देना।' तारा सबको उचित उत्तर देती और अभिवादन करती चली जा रही थी?

दूर से ही शिवालय पर खडे लोगों ने इन्हे आते देखा। पुजारी के साथ अन्य लोग भी मन्दिर से बाहर आकर खड़े हो गये। जो बालक धोने के लिए पानी भर-भर कर कुएँ से लाये थे, वे भी अपने भरे घड़े शिवालय की सीढियों पर रख कर दूर खडे हो गये।

निकट आते ही अनंगपालजी ने सीढियों पर रखे भरे घडो को देखकर कहा,—'वाह, वाह! कैसा शुभ मुहूर्त है? मन्दिर के सामने भरे घड़े मिले।...भोज! इन सब घडो मे से थोडा-थोड़ा जल लो और भगवान् भूतनाथ के मस्तक पर चढाओ।'

सब घड़ों से जल निकालता भोज मन्दिर मे प्रविष्ट हुआ। शिव स्तोत्र के प्रमुख श्लोकों का पाठ हुआ। तब पुजारी ने तारा से कहा,—'माँ आज तो हमें कुछ विशेष मिलना चाहिए।'

'अवश्य मिलेगा पुजारी जी, हम लोग सन्ध्या को फिर आपके दरबार में आयेंगे।' तारा की बात सुनकर पुजारी प्रसन्न हो गया। भगवान् त्रिलोचन तुम्हारा कल्याण करें।' उसने कहा।

भोज के मन्दिर में जाते ही बालक अपने-अपने घडो के पास आ गये थे। उनमें कुछ दूसरे ही प्रकार की चर्चा थी। एक बालक बोला—'देखो जी आज कैसा दुल्हा जैसा बना है।' दूसरा बोला—'यह तो बिल्कुल पहचान में ही नही आता।' 'अरे है तो वही भोज न दूध चोर' 'यह अनंगपाल के छोटे नटखट लडके की आवाज थी। उसके इतना कहते ही

और लडके करीब-करीब एक साथ ही बोले,—'ना. ना ऐसा मत कहो। वह तो हम लोगों से गलती हो गयी थी।'

तब लोग पूजन करके मन्दिर के बाहर आये। ये बालक चुपचाप किनारे हटकर बाबा भोलेनाथ की तरह खडे हो गये।

अब गॉव पीछे छूट चुका था। ये लोग अरावली पर चढ़ रहे थे। भगवान् भास्कर की किरणें इन्हे अब कुछ अधिक गर्मी प्रदान कर रही थी। लोगो ने अब अपने कम्बल ढीले किए। तब तक लोग अचानक क्या देखते है कि सामने की पहाडी पर के बेल वृक्ष पर से एक नीलकण्ठ उडता हुआ आया और भोज की पीली पगडी पर चोंच मार कर पुनः उड़ गया। सबमे जैसे खलबली सी मच गयी। 'अहा हा शिवरात्रि के दिन नीलकण्ठ दिखायी पड़ा। हम सबके सौभाग्य हैं। नीलकण्ठ, .. साक्षात् भगवान् के दर्शन हो गये।' तुरन्त ज्योतिषाचार्यजी बोले—यह अत्यन्त महान शकुन है। आप लोगों ने देखा कि भोज की पगड़ी पर नीलकण्ठ ने चोंच मारा है। इसका मतलब है कि बालक के सिर पर कभी राजछत्र सुशोभित होगा। और वह राजछत्र अमर होगा।' अत्यन्त भावुक स्वर में ज्योतिषीजी ने कहा था। सुनते ही सब आनन्द से भर गये। सबने एक स्वर से कहा,—'हर हर महादेव।' इस जय-जयकार से अरावली गूंज उठी।
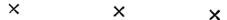
हारित मुनि का आश्रम पास थोडे ही है। चलते-चलते उन्हे अधिक देर हो गयी थी। फिर भी रास्ता अधिक अखरा नही, लोग बातें करते चले आये। मार्ग मे जिधर देखिए उधर से ही कनफटे साधुओ का दल का दल आता दिखाई दे रहा था। सभी अपने गुरु का दर्शन करने के लिए दूर-दूर से चले आ रहे थे। जिस रास्ते से भी इन साधुओ का समूह

भगवत् भजन करता निकलता उधर के गाँव वाले इनका दर्शन करने के लिए दौड पडते थे।

आज पूरा आश्रम ऐसे साधुओं से भरा है। आस-पास की पहाडियों पर भी साधु विराजमान है। अभी मुनिजी पूजन से उठे नही हैं, गुफा का द्वार बन्द है। ये लोग भी आते ही गुफा की ओर बढे और द्वार पर पहुँच कर 'हर-हर महादेव' का जयघोष किया। निकट ही बैठा साधु बिगड उठा,—'क्या हल्ला मचा रहे हो। देखते नही हो कि मुनिजी अभी पूजन पर हैं।'

तब ये लोग शान्त होकर उसी शिला खण्ड पर चुपचाप बैठ गये।

थोड़ी देर बाद गुफा का द्वार खुला और भीतर से एक साधु आया। उसने एक ऊँची शिला पर खडे हो कर उद्घोषणा की—'सावधान रहिए, परम तपस्वी महाराज हरित मुनिजी पधार रहे हैं।'

शीघ्र हो सभी साधु नीचे पहाड़ी पर आ गये। निकलते ही हारित मुनि की निगाह पहले भोज पर पड़ी। वह बढकर उनके चरणों पर गिर गया और लोगों ने वही से दण्डवत् किया, जहाँ वे बैठे थे। 'परम प्रतापी हो' 'एकलिंग के दीवान' मुनि ने भोज को आशीर्वाद देते हुए उसका मस्तक अपने चरण पर से उठाया। फिर वह भीतर चले गये।

तब पहले वाला साधु फिर आया। उसने दूसरी उद्घोषणा की,—एक घडी के बाद आज आश्रम में 'एकलिंग के दीवान' का यज्ञोपवीत संस्कार होगा। संस्कार स्वयं मुनिजी सम्पन्न करेंगे! आप सब उसमें आमंत्रित हैं!'

तारा को रह-रहकर जादव और पुरोहितजी याद आ रहे थे। क्या बात है, क्यो नही वे आये? वह सोचती रही। गमेती तो दो एक बार उठकर पहाड़ी के ऊपर भी देखने के लिए गया, पर उसने कही भी उन्हे आते नही देखा।

यह स्थान इतना रमणीक था कि एक घड़ी बैठने मात्र से सबकी थकावट दूर हो गयी। फिर वही साधु बाहर आया और एक खुले स्थान पर छोटे-छोटे पत्थर के टुकड़ो से घेर कर यज्ञ-कुण्ड बनाने लगा। तारा झट से उसके इस काम में लग गयी। उसके मुँह से बड़ा अस्पष्ट और धीरे से निकला था कि आम और पलास की लकड़ियाँ चाहिए, फिर क्या था; बाली और देव देखते-देखते तोडकर ले आये। ठीक समय पर मुनिजी गुफा के बाहर आये।

पहले हवन आरम्भ हुआ एक ओर स्वयं मुनिजी थे। उनके सम्मुख भोज था और शेष दो ओर अनंगपाल तथा ज्योतिषाचार्यजी बैठे थे। तीव्र स्वर में मंत्र पाठ शुरू हुआ। पाठ मे साधुओं और ब्राह्मणों का सम्मिलित स्वर अरावली की छाती से टकराकर बड़ी देर तक गूँजता रहा। जैसे कोई गम्भीर विचार मस्तिष्क में गूँजता है।

हवन समाप्त हो जाने पर मुनिजी ने भोज से पूछा—'तुम्हारे परिवार के पुरोहित जी कहाँ है?'

'भोज भला क्या उत्तर दे। उसने प्रश्नवाचक मुद्रा में माँ की ओर देखा। तारा बोली,—'महात्मन् परिवार के पुरोहितजी अभी उपस्थित नही है। यदि आप कहे तो. .'

'नही है तो थोड़ा रुको, वह आता होगा।' आँखें बन्दकर ध्यान मे मग्न होकर उन्होने कहा। जैसे वे उन्हे देख रहे हैं।

'अच्छा चलो, तब तक तुम एकलिंग के दीवान की आरती करो।' तारा ने दीप जलाया और आरती करने लगी।' उसका मन तो मारे प्रसन्नता के फूटा पड़ रहा था। आँखों मे जल आ गये थे। इस समय उसे महारानी की याद सता रही थी। वह सोचती आज महारानी यदि होती तो फूली नहीं समाती। यह काम तो उन्ही का था, जिसे मै कर रही हूँ। इस भावना मे डूबी, वह बराबर आरती घुमाती ही रही यहाँ तक कि लाचार होकर रुक्मणिजी को रोकना पड़ा।

तब मुनिजी मुस्कराते हुए तारा से बोले,—'जाओ तुम बैठो। तुम्हारी मनस्थिति ठीक नही है।' इतना सुनना था कि वह संकोच से गड़ गयी। धीरे से आरती रख कर लौटी। तब उसे पहाडी के ऊपर तीन घुडसवार दिखायी पड़े, मस्तिष्क भी क्या है? जहाँ कोई दृश्य देखिए वहाँ जीवन मे देखे गये उसके सदृश्य और भी दृश्यों से उसका सम्पर्क स्थापित करने लगता है। तारा को याद आया कि ऐसे ही तीन घुडसवार मुझे उस समय भी दिखायी पडे थे जब मै भोज को छाती से चिपकाये ईडर से भागी चली आ रही थी! ओफ् कितना भयानक वह अवसर था। पर ये वे घुडसवार नहीं है। उसने गौर से देखा। जादव और पुरोहितजी का पहचान लिया। तीसरा कौन है, वह शीघ्र पहचान न सकी।

सवार घोड़ों को ऊपर ही पेड़ मे बाध कर नीचे उतरे। 'पुरोहितजी आ गये महराज।' तारा ने मुनिजी से कहा।

मुनि मुस्कराये और वैसे ही ध्यानावस्थित बैठे हुए बोले—'बेटी जब से आये नहीं थे तब भी इन्हे देख रहा था और अब भी देख रहा हूँ।.. तू इतनी व्यग्र क्यो होती है।'

तारा इस समय एक बच्चे की तरह उतावली हो रही थी। यह अपने पर बडा नियन्त्रण करके चुप एक स्थान पर बैठ गयी। फिर उसकी दृष्टि उन तीन आते हुए व्यक्तियो पर पुनः पडी अब उसने तीसरे को भी पहचाना।—अरे यह तो मूँगा है।. .भोज के रक्त का प्यासा मूँगा। फिर यह यहाँ कैसे? जासूस बन कर तो नही आया है। लेकिन पुरोहित जी के साथ है। कुछ समझ में नहीं आता।—तारा सोचती रही।

ज्यो ही वे लोग पहुँचे, मुनिजी ने पुरोहितजी को सम्बोधित करते हुए कहा,—'भीतर भगवान 'एकलिंग' के चारो ओर कई सर्पराज लिपटे होंगे उनमें से एक लाकर इसके गले में यज्ञोपवीत की तरह लिपटा दो।'

पुरोहितजी गुफा के भीतर घुसे। यहाँ उन्होंने अत्यन्त भयंकर दृश्य देखा। शिव लिंग के चारो ओर अनेक काले नाग लिपटे हैं। वे भयानक

रूप से फुफकार रहे है। उसके पीछे खप्पर में ज्वाला जल रही है। ज्वाला की रक्त वर्ण आभा उस दृश्य को और भी भयानक बना रही थी। पुरोहितजी की हिम्मत नहीं पड़ी कि वे शिव-लिंग के पास तक जायें। बेचारे बड़े फेर में पड़े। लौटने की इच्छा होकर भी वे लौट नही सकते थे लोग भला क्या कहेंगे, वे सोचते खड़े रह गये। सामने नाग बराबर फुफकारते जा रहे थे।

जब बहुत देर हो गयी तब मुनिजी ने अपने शिष्य साधु से कहा— 'जाओ देखो, उनका साहस नही हो रहा है। तुम उनकी सहायता करो।... और देखो सर्प को अपने हाथ से मत छूना उन्ही को पकड़ कर लाने दो यह काम उनका है तुम्हारा नही।' साधु गुफा मे गया।

थोड़ी ही देर मे पुरोहितजी हाथ मे सर्प लिए निकले। सर्प लकड़ी को भाति एकदम शान्त था अरे ये पालतू सर्प थे, फिर भला काटते क्यो? पुरोहितजी व्यर्थ ही डर रहे थे।

सर्प लाकर यज्ञोपवीत की तरह भोज को उन्होंने पहना दिया। शंख बजने लगे। हर-हर महादेव के नारे से आकाश गूंज उठा। संस्कार सम्पन्न हो गया।

कर्मकाण्ड के पण्डित अनंगपाल रुक्मणिजी के कान में धीरे-से बोला,— 'हम लोगो के यहाँ यज्ञोपवीत होते समय जो कुछ होता है यहाँ तो वह सब कुछ भी नही हुआ।'

'कोई बात नही। मुनिजी के हाथ से इतना हो गया बहुत है।' रुक्मणि ने कहा।

तारा का ध्यान अब इधर नहीं रहा। वह बराबर मूंगा को देखती और पता नही क्या-क्या सोच रही थी।

भोज ने मुनिजी के चरणों पर आशीर्वाद के लिए मस्तक रख दिये। 'परम् पराक्रमी बनो दीवान।' फिर उसका मस्तक ऊपर उठा कर वे

बोले,—'मैं तुम्हे आशीर्वाद आज समाधि लगाते समय दूंगा। मध्य रात्रि के पहले ही यहाँ आ जाना। भूलना नही।'

भोज ने सिर हिलाकर बड़ी प्रसन्न मुद्रा में कहा,—'अच्छा।'

वे पुनः बोले,—'लेकिन देखो। अकेले ही आना किसी को साथ मत ले आना।' फिर उन्होंने उसे मूंज की जनेऊ पहनाकर सर्प उसके गले से निकाल दिया। 'जा, चला जा।' कहकर उसे छोड़ दिया। 'सर्प फन-फनाता गुफा में चला गया।

इसके पश्चात् भोज ने अपने गॉव के सभी लोगों का चरण स्पर्श किया। गमेती ने अपना पग उसे छूने नही दिया और जब वह मूंगा के पास पहुंचा। वह स्वयं उसके पग पर गिर पडा और बडे द्रवित कण्ठ से बोला,—'कुँवरजी मैं तो आपका सेवक हूँ।'

'ऐ कुंवरजी यह नया संबोधन कैसा ?' भोज सोचने लगा। बस इतने से ही उसे बहुत-सी बातें याद आने लगी। तब बड़े आनन्द के साथ मुस्क-राता वह चम्पा के पास आया। उसने उसे देखते ही मुँह फेर लिया और कुछ रूठ कर बोली,—'चलो-चलो, तुमने तो मुझसे कुट्टी किया है न। मैं तुमसे नही बोलूंगी। भोज मुस्कराता वहाँ से आगे बढा और बाली तथा देव के गले से जाकर लग गया।

तब दूसरे साधु ने सबको फल खिलाया। सब अच्छी तरह तृप्त हुए और धीरे-धीरे लोग गॉव की ओर चलते बने। अन्तमें कुछ ही लोग रह गये थे। तारा उन्हे लेकर चल पड़ी। भोज आदि सब आगे ही जा चुके थे। मूंगा और जादव जाते समय पुरोहितजी का भी घोड़ा लेते गये थे। उन्हें तारा ने अपने साथ रोक लिया था।

'पुरोहितजी, आपने आने मे तो बड़ी देर कर दी।'—तारा ने कहा।

'क्या कहूँ, मूंगा के ही कारण देर हो गयी।'...और जादव भी तो कल सन्ध्या को ही मुझसे मिला।' पुरोहितजी ने कहा।

मूंगा और जादव भी आगे चले गये थे। इसलिए उनके सम्बन्ध में कुछ खुलकर बातें हो सकती थी। पण्डित रुक्मणिजी साथ थे, पर उनसे इन सबसे मतलब क्या ?

अचानक तारा के पैर में काटा धँस गया। वह काटा निकालते हुए, पुरोहितजी से बोली,—'महाराज एक बात मेरे समझ में नहीं आयी, आपने मूंगा को सारा रहस्य क्यो बता दिया।'

'अब वह बहुत बदल चुका है तारा।'

'पर नाग बहुत बदलेगा तो साँप ही होगा।'

'यह तो ठीक है, पर नाग, साँप और मनुष्य में बड़ा अन्तर है। केवल बुद्धि की आँख से मनुष्य को देखा नही जा सकता। उसे पहचानने के लिए चेतन बुद्धि के साथ ही साथ मन की भी आवश्यकता होती है। पुरोहितजी नें रुक्मणिजी की ओर देखकर कहा। जैसे वह उससे अपने कथन की पुष्टि चाह रहे हो। पर वे शान्त ही रहे।

पुनः तारा बोली,—'पर मुझे लगता है कि मूंगा को देखने में आपकी बुद्धि की आँखो ने कम तथा मन की आँखो ने अधिक काम किया है।'

पुरोहितजी मुस्कराये फिर बड़ी गम्भीरता से बोले,—'ऐसी बात नही है तारा, किन्तु हमारे और तुम्हारे सोचने मे कुछ मौलिक अन्तर है। तुम सोचती हो कि यदि कोई बुरा काम करता है तो उसके मनमे केवल बुराई ही है। पर मै मानता हूँ कि बुरा काम करने से आदमी बुरा नही होता। मनुष्य के जिस हृदय मे पाप होता है उसमें पुण्य की पवित्र धारा भा बहती रहती है, जिसमें घृणा और हिंसा की वृत्ति है तो उसमें दया और अहिंसा का पावन प्रकाश भी होता है। जिस हृदय में असत्य का अन्धकार होता है उसी हृदय मे कही न कही सत्य की पावन ज्योति की कुछ किरणें भी रहती हैं। तब हम केवल अन्धकार पर, केवल पाप पर, केवल हिंसा पर ही क्यों विश्वास करें ? क्या मनुष्य की आत्मा का सत्य कभी मुखरित नही

हो सकता ? क्या आत्मा का पुण्य उसे रास्ता नहीं दिखा सकता ।...यह बात ठीक है कि कल मूंगा गलत रास्ते पर था । तो क्या अब वह सही रास्ते पर नहीं आ सकता है ।'

'आ क्यों नहीं सकता । पर आपको यह कैसे मालूम कि अब वह सही रास्ते पर आ गया है ? उसने ऐसा क्या किया कि आप उसपर विश्वास करने लगे । आखिर मेरी बुद्धि को समझने के लिए कुछ तो होना चाहिए ।' इतना कह कर वह हँस पड़ी । पर रुक्मणि और पुरोहित दोनों ज्यों के त्यों थे ।

बीच में खन्दक है । इसे तो लांघ कर ही पार किया जा सकता है । तारा लांघ गयी । रुक्मणिजी लांघ गये, पर वृद्ध पुरोहितजी की कांपती टांगे आगे न बढ़ सकीं । तब रुक्मणिजी ने अपना हाथ बढ़ाया और पुरोहितजी उसे पकड़ कर धीरे से पार हुए । वह पहले से ही जैसे कुछ सोच रहे थे । पार होते हुए तारा से बोले,—'. .तो तुम बुद्धि को समझाना चाहती हो या बुद्धि को बताना चाहती हो ।'

यह प्रश्न सुनकर तारा जरा मुस्करायी । उसने अनुभव किया कि पुरोहितजी मुझे बातों में फँसाना चाहते हैं । तब तक रुक्मणिजी ने कहा कि पुरोहित का यह प्रश्न बड़े महत्व का है । तारा पुनः बोली,—'पुरोहितजी, मैं बहुत-सी बातें नहीं जानती, पर मेरी बुद्धि नहीं मानती कि मूंगा अब वैसा हो गया है जैसा आप उसे सोचते है ।'

'तुम्हारी बुद्धि को तर्क चाहिए. ' फिर वह कुछ रुके और धीरे-धीरे चलते हुए महान दार्शनिक की भांति बोले,—'पर मैं तर्क मे नहीं सत्य मे विश्वास करता हूं ।.. तर्क का जन्म तो विश्व मे उस समय हुआ था जब सत्य और झूठ की पहली लड़ाई हुई थी । उस दिन वह झूठ के ही पक्ष मे था, तब से वह बराबर उसके पक्ष से अधिक बोलता रहा है । कभी-कभी सत्य के पक्ष में भी वह रहा है, किन्तु केवल प्रतिष्ठा और अस्तित्व प्राप्त करने के प्रलोभन से । झूठ से वह जीवन पाता है और सत्य से वह प्रतिष्ठा ।

मे ऐसे तर्क मे विश्वास नही करता ।. सत्य कहता हूँ कि आज मूँगा बहुत बदल गया है । इतना ही समझो कि यह पुरोहित सत्यनारायण भोज को धोखा दे सकता है ..पर मूँगा नही ।'

इतना सुनकर फिर तारा कुछ न बाली । रुक्मणिजी ने पुरोहितजी के ज्ञान और बुद्धि की मन ही मन बड़ी प्रशंसा की । यो तो दर्शन और धर्म-शास्त्र के लिए पुरोहितजी का पूरा परिवार ही प्रसिद्ध था । पर तारा के सम्मुख पहली बार उनका यह दार्शनिक व्यक्तित्व आया था ।

इस प्रकार बातें करते जब ये लोग ग्राम में पहुँचे, तब अच्छी तरह सन्ध्या हो गयी थी । शिवालय पर रुद्री पाठ बैठ चुका था ।

× × ×

शिवरात्रि मे सोने से दरिद्रता आती है । भला कोन ऐसा होगा जो दरिद्र होना चाहे । आज सारा गाँव ही जाग रहा है । जब भोज हारित मुनि के दर्शन के लिए पुनः चला तो किसी भी पलक पर नीद नही थी । शिवालय मे भजन हो रहा था । गाँव में रात भर चहल-पहल रहेगी । इसी से भोज जिस समय चलना चाहता था वह उस समय चल न सका । कुछ देर हो गयी थी । अकेले अपने कम्बल मे सिमिटता लपका चला जा रहा था । वह कही धीरे-धीरे चलता, कही कुछ तेज चलता, ऐसा न हो कि मुनिराज समाधि पर बैठ गये हो । जब उसके मन मे यह विचार आ जाता तो वह दौड़ने लगता और मीलों दौड़ता जाता ।'

वह दौडा जा रहा था कि उसे सामने कुछ दूरी पर एक साधु उधर ही जाता दिखायी दिया । कदाचित् वह भी मुनि जी के आश्रम मे जायगा तभी तो उधर ही जा रहा है—भोज ने सोचा, पर इससे उससे क्या तात्पर्य । वह दौड़ता आगे बढता रहा और साधु से आगे निकल गया । उसे देखकर वह साधु बोला,—'बड़े विचित्र मालूम पड़ते हो जी । देखकर नही चलते ।'

'क्यों, क्या हुआ ।' भोज ने रुककर पूछा । वह बहुत दूर से दौड़कर आ रहा था हाँफ रहा था ।

'देखते नहीं हो, तुम्हारा कम्बल मुझसे टकरा गया ।' वह साधु बोला ।

'अरे कम्बल टकरा गया तो क्या हो गया ? मै तो नही टकराया' भोज ने कहा ।

'तुम्हारी क्या हस्ती है कि तू मुझसे टकरायेगा'—इस बार साधु तड़पा !

भोज ने देखा बड़ा विचित्र आदमी मालूम पड़ता है । व्यर्थ ही झगड़ा मोल ले रहा है । वह कुछ बोला नही । उसे शीघ्र पहुँचना था इसलिए केवल क्षमा मांगकर वह आगे बढा । फिर भी साधु चुप नही हुआ । उसने कहा—'कहाँ जाने की इतनी जल्दी पड़ी है, जो भागा हुआ जा रहा है ?' भोज ने कुछ उत्तर नही दिया । वह दौड़ता आगे बढ़ा ।

वह साधु भी दौड़ता भोज के पीछे आया । उसने पीछे घूमकर देखा, वह भी दौड़ा आ रहा था । भोज थोड़ा रुक गया । लगातार दौड़ते रहने पर उसे गर्मी लग रही थी । उसने कम्बल अब कन्धे पर रख लिया और इस मायावी साधु से छुटकारा पाने की युक्ति सोचने लगा ।

निकट आकर साधु पुनः बोला—'किधर जा रहे हो ?'

'हारित मुनि के आश्रम मे ।' भोज ने एक शब्द मे उत्तर दिया और सोचा जल्दी से यह साधु किसी प्रकार मेरी जान छोड़ दे ।

'तो ऐसा दौड़े हुए क्यो जा रहे हो ?'

'जल्दी है ।'

'जल्दी तो मुझे भी है । मै भी वहीं चल रहा हूँ । चलो, मेरे साथ चलो ।'

'पर आप बहुत धीरे धीरे चलिएगा । मुझे जाने दीजिये ।'

'अरे, भाई मैंने आश्रम का मार्ग नही देखा है। क्या तुम मुझे छोड़कर ही चले जाओगे ? भूले हुए को रास्ता बताना क्या तुम ठीक नही समझते ?' साधु ने थोड़ा नम्र होकर कहा।

तब भोज साधु के साथ चलने लगा। साधु अब धीरे-धीरे चल रहा था। भोज बराबर उससे कहता कि जल्दी चलो। पर भोज जितना जल्दी चलने को कहता वह उतना ही धीरे चलता। अंत में वह परेशान होकर उसे छोड़कर बढा—तब वह गिड़गिड़ाया,—'बेटा मै थक गया हूं। तेज चल नही सकता, तो क्या तुम मुझे छोड़ दोगे ?'

भोज बड़े असमंजस में पड़ा। बेचारा छोड दे तो नही बनता और लेता चलता है, तो देर होती है। लाचार उसे उसने अपने कंधे पर उठाया। कुछ दूर किसी प्रकार तीव्रगति से ले चला। फिर उसे अचानक मुनि जी की कही बात याद आयी—'देखो, किसी के साथ मत आना अकेले ही आना।' तब मै इसे अपने साथ क्यो ले चल रहा हूँ। मुनिराज की आज्ञा का उल्लंघन होगा ऐसा तो नही कि यह साधु मायावी हो और मेरे मार्ग मे बाधा बनकर आया हो।' इतना सोचना था कि वह साधु को जमीन पर उतार कर भाग चला। वह पुकारता रह गया, पर भोज न बोला। उसने पीछे मुड़कर देखा भी नही।

जब वह आश्रम की गुफा पर पहुंचा तब अच्छी तरह थक गया था। उसने देखा, गुफा से एक विशेष प्रकार का प्रकाश निकल रहा था। अभी समाधि तो नही लगी है, उसे ऐसा भान हुआ। वह दौड़ा हुआ भीतर आया। भीतर मुनि जी एक दम समाधिस्थ होकर बैठे थे। भोज जाते ही उनके चरणो पर गिर पड़ा। कौन 'एकलिग के दीवान' वह बोले। पर उनकी आँखें बन्द थीं। मुद्रा बिल्कुल शान्त थी। 'लेकिन तुमने बडा विलम्ब कर दिया बेटा।'—उन्होंने कहा।

भोज कुछ न बोला।

'कोई थका माँदा साधु तुमसे मार्ग पूछ रहा था ?' उसी मुद्रा में उन्होंने पूछा। भोज को आश्चर्य हुआ कि मुनि जी को यह कैसे मालूम। उसने धीरे से कहा,—'हाँ महाराज।'

'तो तुमने उसे मार्ग क्यों नही बताया ?'

'बिलम्ब हो जाता महाराज। तब आपका आशीर्वाद मुझे कैसे मिलता ?'

'तुमने भूल की भोज। वह थका, माँदा साधु जब अपने निश्चित स्थान पर आता तो उसका प्रसन्न मन तुम्हे जो आशीर्वाद देता, वह आशीर्वाद मेरे आशीर्वाद से कही अधिक शक्तिशाली होता। पर अब याद रखना गरीबों तथा दुखियों के आशीर्वाद में बड़ी शक्ति होती है। उनका तिरस्कार कभी मत करना .।'

'महाराज, भूल तो हो गयी पर अब आपके चरणों पर मस्तक रखकर प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं सदा गरीब-दुखियो की सेवा करूँगा निसहायों की सहायता करूँगा।'

'यदि तुम ऐसा करोगे, तो दुनिया को कोई शक्ति तुम्हे कभी भी झुका नही सकती।...मैं आशीर्वाद देता हूँ कि तुम राजस्थान के प्रबल प्रतापी शासक होगे। शत्रु तुम्हारा लोहा मानेंगे। जनता तुम्हें पिता की तरह पूजेगी। इसके लिए इतिहास तुम्हे श्रीबप्पा (बाप) बप्पारावल के नाम से अधिक याद करेगा।'

इतना कहकर फिर मुनि जी एक दम शान्त हो गये। देखते-देखते उनका तन शिथिल होने लगा। शिवलिग के पास जलने वाले दीपक की लो और भी तेजी से भभक उठी।

———

२

पिछली घटना के करीब दो वर्ष बाद।

एक दिन सन्ध्या को एक विचित्र समाचार नागह्रद में प्रचारित हो गया! ग्राम जैसे मारे भय से काँप रहा था। किसी के मुँह से बोली नही निकलती थी। सब मन ही मन कहा करते थे कि सोलंकी राज का यह निर्णय अच्छा नही। आज शिवालय पर शिवस्त्रोत के पाठ में भी वह मस्ती नही थी। प्रतिदिन का यह आवश्यक कार्य है इसी से मन्दिर पर कुछ लोग एकत्रित हो गये थे नही तो आज कोई भी न आता। सब का अन्तर दुख से दुखी था और अप्रत्याशित भय से दबा जा रहा था। पाठ आरम्भ हुआ, पर बहुत धीरे-धीरे। जैसे किसी ने आज भक्तो का गला ही दबा रखा हो।

कुएँ पर जल लेने आयी युवतियो में भी बस आज एक यही चर्चा है। 'बहन, सोलंकी राज ने अच्छा काम नही किया ?'—एक युवती बोली।

'हॉ भला बताओ उस बेचारे वृद्ध ब्राह्मण ज्योतिषाचार्य को शूली का दण्ड देने से उसका क्या लाभ होगा।' दूसरी युवती बोली।

'अरे देखो तो कैसा अनर्थ हो गया है बहन। ब्रह्महत्या को भी राजा नही डरता।' उन्ही मे से एक दूसरी स्त्री ने कहा।

'अब कलियुग आगया! घोर कलयुग है बहन। देखो क्या-क्या होता है।'—पहली युवती बोली।

'लेकिन किस बात पर सोलंकी राज ने उन्हे शूली का दण्ड दिया है ?' एक युवती ने पूछा।

'यही तो नहीं मालूम ?'. .पर धीरे-धीरे सब मालूम हो जायगा।'

वे अपने घड़े भरती और चली जाती।

पूरे गॉव में यह तो सभी जान गये थे कि ज्योतिषाचार्य महेश पंडित को सोलंकी राज ने प्राण दण्ड देना निश्चय किया है। पर क्यो ? उनका अपराध क्या है इसे कोई नही जानता था। यह जिज्ञासा ही चर्चा की मुख्य विषय थी।

ज्योतिषाचार्य का व्यवहार भी गॉव वालो के साथ बहुत अच्छा था। एक भी बालक ऐसा नही मिलेगा जो उनसे अप्रसन्न हो। वे सबका काम बिना कुछ लिए करते थे और दुख में भी लोगों की सहायता करते थे। तभी तो आज लगता था कि जैसे हर घर का कोई न कोई मर गया हो।

आज भोज को भी रुद्रमणिजी ने पढ़ाया नही। वह भी चुपचाप लौट आया। जाड़े की अँधेरी रात तो योही शान्त होती है, पर आज ऐसा लग रहा था जैसे उसकी शान्ति भी मूक हो गयी हो। एकदम निस्तब्ध और भयावह मालूम होती। यह रात्रि है या रात्रि का निर्जीव शव ?

भोज के घर आते ही तारा ने उससे पूछा—'आज बड़ी जल्दी आ गये। पण्डित जी घर पर नही हैं क्या ?'

'नहीं माँ, वे थे तो घर पर ही, पर आज उन्होंने पाठ नही पढाया ?' भोज ने कहा।

'उन्होंने कुछ कहा ?'

'नही तो !'

'तारा सोचती हुई बैठी आग ताप रही थी। आज हवा कुछ तेज थी। रह रहकर ठंडी हवा का तेज झोका आ जाता था। यहाँ तक की भीतर कोठरी के कोने में रखे दीप की लौ बराबर काँप उठती थी। दो बार तो दीप बुझ भी चुका था। दालान के पिछवाड़े के पीपल के वृक्ष की पत्तियाँ खडखड़ा रही हैं, मानो वह लोगो का ध्यान आकृष्ट कर उनसे कुछ कहना चाहती हों।

इस बार हवा का झोका बहुत जोर का था। कोठरी का दीप बुझ गया। 'बुझे चाहे रहे अब मै नही जलाती।' तारा भुनभुनायी और उठ खड़ी हुई। भोज दालान में अपनी चारपायी पर खूब अच्छी तरह ओढकर पडा था। वह बाली से कहानी सुन रहा था। देव सो गया था। तारा द्वार से बाहर आयी और भोज को पुकार पुकार कर बोली—'देखो मै जरा देर से आऊँगी द्वार बन्द कर लेना। नही तो कुत्ता घुस आयेगा !'

थोडी देर बाद भोज द्वार बन्द करने के लिए बाहर आया। उसने दरवाजा बन्द करते हुए बाहर देखा। माँ पगडण्डी पर दूर जाते दिखायी दी, जैसे काजल से काले अन्धकार में कोई धुंधला सा मटमैला धब्बा आगे बढा चला जा रहा हो।

आज इतनी रात तक रुक्मणि जी का द्वार खुला था। तारा ने इस पर ध्यान नही दिया। वह धड़धड़ाती घर में घुस गयी। पण्डितजी अपनी पत्नी तथा बच्ची के साथ बैठे अपने सोने की कोठरी मे आग ताप

रहे थे। तारा को देखते ही वह थोड़ा हड़बड़ा गये। पण्डित जी बोले—'आज बड़ी देर में चली तारा ?'

'हाँ महाराज, आने की इच्छा तो नही थी। मन नही लगा। सोचा आपके ही यहाँ चलूँ।'

पार्वती उठकर अपने माँ के आसन पर चली गयी और तारा उस पर बैठ गयी। पण्डितजी ने उसकी ओर अंगीठी खींच ली। लगता था कि चार आदमी एक ही परिवार के बैठे हैं।

'क्यों पण्डितजी आखिर क्या बात थी; क्यो ज्योतिषाचार्य को शूली का दण्ड दिया गया।' तारा ने बात के सिलसिले में पूछा।

'अरे इस सब में कही कोई बात होती है। राजा की इच्छा है ?'

'वाह वाह खूब इच्छा रही। किसी का प्राण जाय और कोई कहे कि यह मेरी इच्छा है। ..कोई न कोई कारण तो जरूर ही होगा।'

'सच कहा जाय तो कारण कुछ भी नही है।...केवल जरा सी बात पर इतनी बातें बढ़ गयी है।'...फिर उन्होंने कुछ गम्भीर होकर कहा—'कुछ ठीक मालूम तो नही पड़ा, पर उड़ती खबर सुनता हूँ कि महाराज ने उन्हे अपनी बड़ी लड़की की जन्म कुण्डली देखने के लिए बुलाया था। उसके विवाह के लिए उन्होने कई स्थान के राजकुमारो की जन्म कुण्डलियाँ मंगवायी थी। ज्योतिषाचार्य को देख कर बताना था कि किस राजकुमार से राजकुमारी की शादी अच्छी बनती है, पर उन्होने कुछ दूसरा ही बता दिया।'

'क्या बताया ?'

'कहा—महाराज आपकी कन्या के ग्रह बताते हैं कि उसका विवाह हो चुका है। वह कुमारी नहीं है।'

इस पर महाराज नाराज हो गये। बोले—'मेरी लड़की की शादी अभी तक हुई नही है और तुम कहते हो कि हो गयी है।...संसार सुनेगा

तो क्या कहेगा ? पर ज्योतिषाचार्य नहीं माने। वह अपने हठ पर दृढ़ रहे।'

'तो क्या राजकुमारी का विवाह हो गया है ?' तारा ने पूछा।

'नही जी, ऐसा तो नही हुआ...और विवाह हुआ होता, तो भला पता न चलता।' परिडतजी थोड़ा विश्वास से बाले।

'तब ज्योतिषाचार्यजी ने ऐसा क्यो कहा ?...मानो ग्रह नक्षत्र को देखने से यह लगता ही था कि इसका विवाह हो गया है, तो भी यह कहना नही चाहिए।..सचमुच यदि यह प्रचारित हो जाय कि राजकुमारी विवाहित है, तब भला कौन उससे विवाह करेगा ?'

'यही बात तो...। महाराज भी यही कहते हैं कि तुम्हारी इस घोषणा से मेरी पुत्री कलंकित हो जायगी। लोग उसे कुलटा तथा दुराचारिणी कहेगे। या तो आप अपने कथन को प्रत्यक्ष प्रमाण देकर सिद्ध कीजिए नही तो परसों बृहस्पतिवार को आप शूली पर चढ़ा दिए जायेंगे।'

अब तक चुप बैठी पार्वती ने कहा,—'क्यो पिताजी जन्मपत्री देखने से पता चल जाता है कि विवाह हुआ है या नही।'

'पता चल जाता होगा तभी तो।' परिडतजी बोले।

'भाड़ में जाय ऐसी जन्मपत्री। बेचारे की जान इस समय तो संकट में पड़ गयी।' नारी की स्वाभाविक भावुकता पार्वती के माँ के कण्ठ से मुखरित हो गयी।

फिर तारा बोली,—'प्रत्यक्ष प्रमाण के अभाव में केवल ग्रह नक्षत्रों पर विश्वास कर ऐसा कहना तो नही चाहिए। क्या जरूरी है कि जन्म-कुंडली की बात सही हो।'

'हाँ उनका तो विश्वास यही है कि जन्म कुन्डली की बात झूठी नहीं हो सकती। आदमी की बात झूठी हो सकती है।' परिडतजी ने अंगीठी में फूंकते हुए कहा। राख उडने से सबने अपने मुँह ढक लिए। फिर

पार्वती की माँ बोली,—'उनकी बतायी बात कभी झूठी नहीं होती थी। ..
आज पता नही कैसे झूठी हो गयी।'

'पर बहन ऐसी बात तो नही है। उन्होंने एक दिन भोज के लिए
भी बताया था कि आज उसका विवाह होगा, पर कही कुछ नही हुआ।'
इतना कहकर तारा पण्डितजी की ओर देखकर मुस्कराने लगी। फिर वह
बोली,—'लगता है विवाह के सम्बन्ध में जो बताते हैं, वह सत्य नही
होता और सब सत्य होता।' यह सुनकर हल्की हँसी लोगो के चेहरे पर
आयी और पल में विलुप्त हो गयी जैसे किसी ने उसे दबा दिया।

फिर ज्योतिषाचार्यजी के अन्धकारमय भविष्य को लोग गम्भीरता-
पूर्वक सोचते और आग तापते बैठे रहे।

आज देव जंगल मे नही गया। उसे कल रात से बुखार है। प्रातः
काल तो उसे काढा दिया गया था पर मध्याह्न तक उसका तापक्रम कुछ
और अधिक बढ़ गया है। तारा को घबराने के लिए यह एक नयी समस्या
और उत्पन्न हो गयी है।

भोज के साथ केवल बाली ही आज गायो को लेकर गया है। उन
लोगो का मन भी जाने का नहीं था। एक तो देव की तबीयत खराब थी,
दूसरे उनका चित्त नागदा में लगा था। आज कोई दूसरा समाचार तो
नही आता। वे सोचते थे।

ज्योतिषाचार्य को प्राण दण्ड पाने के समाचार से सबसे अधिक घब-
राहट भोज को थी! इसका क्या रहस्य था। मै कह नहीं सकता। पर वह
बड़ा व्यग्र-सा दिखायी पड़ता था। आज प्रातःकाल से ही, जब उसे मालूम
हुआ तब से वह एकान्त मे कई बार बाली से बातें करता दिखायी पडा,

वह भी बड़े गम्भीर रूप से। ऐसी गम्भीरता कभी भी उसके चेहरे पर दिखायी नही पडती थी।

इसीलिए वह गायें लेकर आज केवल अरावली की पहाडियों में ही नही रहा। नगर की ओर बढा। जब धूप अच्छी तरह निकल आयी और कुछ सर्दी कम हुई तब ये लोग खुला हरा-भरा मैदान देखकर एक स्थान पर रुक गये। उन लोगों ने सोचा घास यहाँ अच्छी है। थोड़ा गायें चर लें तो आगे चला जाय। पता नही आगे इतनी अच्छी घास मिलें या न मिलें।

बाली ने कमर में लपेटा कपड़ा खोला और वह मखमली घास पर बिछा कर बैठ गया। तब भोज पत्थर की छोटी-छोटी गोटियाँ बिन लाया और फिर 'सात-पाँच' भिड़ने लगा।

गोटी के खेल में इधर-उधर की भी बातें होती रही। बाली ने पूछा,—'यदि तुम सही-सही बताओ तो तुमसे एक बात पूछूँ।'

'पूछो-पूछो, जरूर सही बतलाऊँगा।' भोज अपनी स्वाभाविक मस्ती में बोला।

'तुम्हे चम्पा अधिक अच्छी लगती है या वह राजकुमारी जिससे उस दिन तुमने विवाह किया था?'

'धत्, बेकार की बात करता है। यह भी कुछ पूछने की बात है।' भोज ने बनावटी क्रोध दिखाते हुए कहा।

'पूछने की बात तो जरूर है। मै सोच रहा था कि तुम नही बताओगे, पर मैं जानता हूँ कि तुम्हारे मन में क्या है। कहो तो बता दूँ?' बाली नाटकीय ढंग से बोला।

भोज की आकृति पर एक विचित्र प्रकार की ललायी दौड़ आयी। फिर उसने मुस्कराते हुए कहा,—'क्या बताएगा? बता, क्या हमारे मन में है?'

'तुम्हारे मनमें है कि राजकुमारी चम्पा से अधिक सुन्दर है।' इतना कहकर बाली जोर से हँसा।

'चल, चल। खूब मन की बात बतानेवाला है।'

'तो क्या मैने ठीक नही बताया ?'

'बिल्कुल गलत, एक दम गलत।'

'तो तुम ही सही बताओ।'

'चम्पा दीन अवश्य है, पर उसके आकृति की आभा भला राजकुमारी में कहाँ,—भोज का इतना कहना था कि बाली हँसते-हँसते लेट गया और मारे खुशी में गोटियाँ उठाकर इधर-उधर फेंक दी। फिर बोला,—'देखो भोज कितनी चतुराई से मैं तुम्हारे मन की बात जान ली। भोज झेंप गया और ऐसा झेंपा कि फिर कुछ समय तक तो बिल्कुल बोला ही नही।

इसी समय अचानक पहाड़ी के पास विचित्र प्रकार की कातर ध्वनि सुनायी पड़ी—'बचाओ, बचाओ, ये मुझे मारते ले जा रहे है।' ध्वनि अत्यन्त पतली थी। नारी कंठ की मालूम हो रही थी।

'लगता है अरबी सैनिक किसी औरत को पकड़े लिये जा रहे हैं।' बाली बोला।

दोनो रस्सी लेकर तथा अपना धनुष ठीक करते हुए दौड़े। आवाज बराबर आ रही थी और करीब-करीब एक ही जगह से आ रही थी। जिससे लगता था कि औरत को ले जाने वाले पैदल ही चल रहे हैं।

'यह ध्वनि तो हमारे देश की नारी की नही लगती।...सुनो उच्चारण कितना विचित्र है।' दौड़ते हुए भोज बोला।

'हाँ, लगता तो ऐसा ही है।' बाली ने उसकी बात का समर्थन किया।

तब तक दोनों पहुँच ही गये। उन्होंने जो कुछ देखा उससे उन्हें महान् आश्चर्य हुआ। यहाँ तो उनकी कल्पना ही उलट गयी। उसने देखा

कि एक औरत को दो भील घसीटे लिए जा रहे हैं। न चलने पर वह उसे मारते भी हैं। औरत का पहनावा बडा विचित्र है? वह अपने देश की नही मालूम होती।

पहुँचते ही भोज चिल्लाया छोड़ दो उसे।' तब तक बाली ने बाण चला ही दिया। बाण जाकर एक आदमी के पैर में लगा। वह एक क्षण के लिये रुका अवश्य फिर और भी बर्बरता से उस स्त्री को मारने लगा। बाली और भोज को अपने सहायता के लिए दौड़े आता देखकर वह और भी जोर से चिल्लायी। ये लोग पास पहुँच गये थे। अब क्या मजाल थी कि वे उसे न छोड़ते। एक पर बाली और एक पर भोज टूट पड़ा। मार घूसा, मार मुक्का उन्हे पस्त कर दिया। अब वह औरत किनारे खड़ी होकर तमाशा देखने लगी। वे जंगली भील मार खाते-खाते गिर जाते थे। फिर उठते थे। फिर गिरते थे। उनके मुख से शराब की दुर्गन्ध आ रही थी। जब वह अच्छी तरह मार खा चुके तब गिर गये। फिर उठे नही। इतने पर भी ये लोग नही माने। एक ही रस्सी में (जो उनके पास थी) दोनो का हाथ पैर बाँधकर नीम के मोटे तने में बाँध दिया। तब कही साँस ली।

उन्होंने अब उस स्त्री को ओर देखा सचमुच वह अपूर्व सुन्दरी थी। गौरवर्ण, लम्बा कद और सुडौल तन था। सेब के समान कपोलों पर हरिणी-सी नीली उसकी आँखे' क्रोध की ललाई के साथ-साथ आँसुओं से लबालब भरी ऐसी लग रही थी, मानों नीलम को दो छोटी-छोटी पोली मछलियाँ बनाकर किसी ने उनमे अँगूरी शराब भर दी हो। वह विचित्र कपड़े पहने थी। कमर के नीचे कुछ ऐसा पहने थी जिसे आज की भाषा में पायजामा कह सकते हैं। उसके तन पर एक ढीला कुरता जैसा था। कुरता काला थी। सिर पर एक हल्के गुलाबी रंग का कपड़ा बाँधे थी। उसपर एक सफेद ओढनी थी। गले में बहुत से ताबीज सोने में मढ़े

हुए कुरते के ऊपर पहने थी। वह अब भी सिसक रही थी और भय से काँप रही थी।

'आप क्या अरब देश की रहनेवाली हैं ?'—भोज ने उससे पूछा।

उसने स्वीकार करते हुए केवल सिर हिला दिया। कुछ बोल न सकी।

'आप को कितनी दूर से पकड़ कर ये ले आ रहे थे ?' बाली ने दूसरा प्रश्न किया।

वह बहुत धीरे से बोली—'शहर से' उसका उच्चारण बड़ा विचित्र था और यहाँ की भाषा बोल भी नही पा रही थी।

तब भोज ने अपनी कमर से दूसरी रस्सी निकाली और उसका कोड़ा बनाया। फिर पेड़ में बँधे उन दोनो को दिखाकर उससे कहा,—'यह कोड़ा लो और जाकर उन्हे जितना जी चाहे उतना मारो।'

पहले वह खड़ी रही। फिर उसने कोड़ा लिया और क्रोध से दाँत पीसती आगे बढ़ी। पर वृक्ष के पास जाकर रुक गयी और कुछ सोचती खड़ी रही। 'मारो उन्हें।' इन सब की जीवित यदि खाल भी उतरवाली जाय तब भी पाप नही लगेगा।'—भोज चिल्लाया।

किन्तु वह औरत लौट आयी और पास आकर केवल एक शब्द बोली—'नही'।

'तो क्या मै उन दोनों को पेड़ से खोल दूँ।' भोज ने पूछा।

'नहीं। उससे फिर सिर हिलाकर वैसे ही उत्तर दिया।

नारी फिर भी नारी है। वह मधुर विष बन है, पर वज्र नहीं। वह नागिन की भांति चुपचाप आकर डस सकती है, पर सिंह की भांति दहाड़ मार कर आक्रमण नही कर सकती। भोज ने देखा कि यह स्त्री क्रोध से काँप रही है। रह-रह कर दाँत पीसती हैं। अभी इसमें प्रतिहिंसा की

अग्नि विकराल रूप से जल रही है। यह उन्हे पेड़ से खोलना नही चाहती, पर कोड़े भी नहीं लगाती। यदि कोई दूसरा लगाये तो उसे आनन्द पूर्वक देख सकती है।

भोज उन्हे वैसे ही बंधा छोडकर जहाँ से गया था वही लौट आया। बाली और वह स्त्री भी उसके साथ थी। बाली का कपडा अब भी घास पर बिछा था। उसका एक ओर का पल्ला हवा से दोहर गया। उसे ठीक कर दोनो बैठ गये। वह स्त्री पीछे पेड के प.स खड़ी रही। कुछ समय तक लोग ऐसे ही थे। जब मन शान्त हुआ तब उन्होने दोपहर के भोजन की पोटली खोली। वही घी से तर बाजरे की रोटियाँ और नमक।

भोज की अवस्था तो इस समय यही सोलह-सत्रह के आस-पास होगी, पर लगता है जैसे बीस-बाईस वर्ष का हो। आकृति से पौरुष के अजेय सौन्दर्य की आभा टपकती है। जाडे की इस पीली धूप मे उसके अर्द्धनग्न किन्तु पुष्ट तन की शोभा ऐसी थी जो किसी भी सुन्दरी को बरबस अपनी ओर बडी सरलता से आकृष्ट कर सकती थी। उसने देखा कि वह उसे बड़े ध्यान से देख रही है। वह कुछ विशेष समझ न सका, क्योंकि अभी तक वह कभी काम की ज्वाला में जला नही था। हाँ चम्पा की याद आते ही उसके मनमें कभी कुछ मादक गुद-गुदी अवश्य उठती थी।

अपनी ओर अपलक निहारती देखकर उसे उसने बुलाया,—'आइए। आप भी थोडा लीजिए।'

वह बहुत धीरे-धीरे दबे पाँव पास आयी और घास पर बैठते ही बोली,—'मुझे भूख नही है।'

भोज ने देखा। यह कुछ सहम रही है। तब उसने कहा—'आप घबराइये नही। यहाँ किसी बात का डर नही है। कुछ खा लीजिए हम आपको शहर पहुँचाने की व्यवस्था कर देंगे।. .शहर में आपके कुछ लोग आये है क्या?'

'हाँ !' उसने सिर हिलाकर पहले की भाति कहा ।

'कौन-कौन से लोग हैं ?'

'यो तो बहुत से अरब सैनिक आये है । उनमें हमारे पिता और भाई भी हैं ।'

'उनका क्या नाम है ?'

'भाई—हबीब । पिता—नूर मुहम्मद ।'

'आपका क्या नाम है ?'

अब वह मुस्करायी और धरती की ओर देखती हुई बोली,—'शमीम ।'

'कहने मे तो नाम बड़ा अच्छा है,—'शमीम ।' भोज बोला इस बार उस स्त्री के तन का रोम-रोम वासनाजनित लज्जा से मुस्करा उठा ।

'शमीम मुझे बड़ा दुख है कि हमारे देश के लोगो ने आपको इतना परेशान किया । आप हमें क्षमा करें हमारे देश को क्षमा करें . और जब अपने पिताजी से मिलिएगा, उनसे भी मेरी ओर से क्षमा माँग लीजिएगा ।' भोज ने बड़ी शिष्टता से कहा । वास्तव मै अब बहुत समझदार हो गया है । यह सब रुक्मणिजी की ही शिक्षा का प्रभाव है ।...और इधर जबसे हारित मुनि का उसे आशीर्वाद मिला है तब से तो वह बहुत बदल गया है ।

यह तो लाचारी है कि वह गाय चराता है ।

.ऐसा तो शत्रुओ के साथ सब व्यवहार करते हैं । ..इसमें क्षमा माँगने की क्या जरूरत ।' स्त्री बोली ।

'आप भूल करती हैं ऐसा व्यवहार हिन्दुस्तानी नही करते । हम शत्रुओं के साथ मित्र से भी अच्छा व्यवहार करते हैं ।' भोज ने कहा ।

'तो क्या वे दोनो हिन्दुस्तानी नही थे ।' इतना कहकर वह जोर से खिलखिला कर हँस पड़ी ।

'वह हिन्दुस्तानी के शरीर मे अरबी थे।' इस पर बहुत जोर की हँसी हुई।

फिर लोगों ने खाना खाया। स्त्री ने रोटी का एक टुकड़ा चखा। बाली झरने से पानी ले आया और सभी पीकर तृप्त हुए। तब भोज ने बाली से कहा,—'इन्हे शहर तक पहुँचा दो। और देखो कोई समाचार हो तो उसे भी ले आना।'

'आपने हमारी सारी बात तो जान ली पर अपनी नही बतायी।' स्त्री चलने के पहले बोली।

'मतलब...औ समझा—मेरा नाम भोज है।'

'रहते कहाँ है ?'

'यह क्या कीजिएगा पूछकर ?'

'मान लो मन मिलने को ही कहे, तब।'

'तब मन में ही खोज लीजिएगा।'

पुनः सब एक साथ ही हँस पड़े।

× × ×

आज वृहस्पतिवार है। नागदा मे ज्योतिषाचार्य के जीवन-मरण का निर्णय होगा। सन्ध्या को सोलंकी राज खुला दरबार करेंगे। जन साधारण भी उसमें उपस्थित हो सकते हैं। उसी दरबार मे महाराज उनपर आरोप लगाएगें। वे अपने पक्ष में सफाई देंगे। राजकुमारी भी उपस्थित रहेगी। उनसे भी दरबार में कुछ पूछा जा सकता है। ऐसा दरबार कदाचित् ही कभी हुआ हो। लोगों को याद तो नही आता।

मध्याह्न से ही लोग इस ग्राम से जा रहे हैं। तारा की बड़ी इच्छा थी, कि ज्योतिषाचार्य के भाग्य निर्णय के समय वह भी उपस्थित रहे। पर ऐसा

हो नहीं सकता। देव तो पड़ा ही था, आज उसका भी तन कुछ तप रहा है। यों भी इधर सालों से तारा का स्वास्थ्य अच्छा नही है। बिल्कुल लट-सी गयी है। भगवान जाने क्या होनेवाला है। इसलिए रुक्मणिजी के साथ केवल भोज और बाली जायेंगे। आज गाँव की गायें चरने नही जाएँगी।

मध्याह्न के सूर्य ने साथ ही चार व्यक्तियों—रुक्मणि, अनंगपाल, बाली और देव को नागदा की ओर जाते देखा।

नागदा में आज विशेष चहल-पहल थी, पर किसी प्रकार का हो हल्ला या कोलाहल नही था। आसपास के ग्रामों से कुछ लोग आगये थे जिससे कुछ भीड़ हो गयी थी। जितने लोग थे उतने प्रकार की बातें थी। ऐसा वातावरण झूठी अफवाहों के फैलने के लिए अत्यधिक अनुकूल होता है। उसी मे ऐसी भी बातें उड़ गयी थीं जितनी कभी किसी ने कल्पना तक न की थी। कोई कहता,—'अरे राजकुमारीजी ने बहुत पहले से ही गन्धर्व विवाह कर रखा है। उससे उन्हे एक लड़का भी है।' कोई कहता,—'ज्योतिषी ने उसे किसी के साथ कुछ करते हुए कभी देखा होगा तभी तो। नही...तो केवल ग्रह नक्षत्रों के अधार पर इतने विश्वास के साथ भला कोई कुछ कह सकता है। कोई कहता—'अरे इसकी मां भी ऐसी ही कुलटा थी, यह वैसी ही लड़की भी निकली है! अब सोलकी राज की नाक कट गयी।

कहते हैं अफवाहों को धुएँ का शरीर और औरत की जबान होती है जो एक बार आरम्भ होने के बाद फिर रुकने का दम ही नहीं लेती। धीरे-धीरे सारा नगर इन अफवाहों से भर गया।

सन्ध्या होते ही सभी दुकानें बन्द होगयी। नगर का सारा कारबार रोक दिया गया और सभी लोग राज-महल की ओर चले आ रहे थे।

प्रमद वन के बाहर के खुले मैदान मे दरबार का आयोजन किया गया

था। पूरा मैदान खचाखच भीड़ से भर गया था। ऊपर से देखने से चारों ओर नर मुण्ड ही नर मुण्ड दिखायी देता था। सरसों फेंक दीजिए तो कदाचित धरती पर एक भी न गिरे। अभी तक महाराज पधारे नहीं थे। अभियुक्त भी अभी आया नहीं था। कुछ अरबी लोग भी तमाशा देखने की इच्छा से आये थे उनके साथ कुछ औरतें भी थी। वे सरदारों के बैठने की जगह के पीछे बैठे थे! हॉ महाराज के सिंहासन के बगल के छोटे सिंहासन पर राजकुमारी जी पहले से आकर बैठी थी। प्रहरी प्रतिहारी और सरदार अपने स्थानों पर सुशज्जित थे। किन्तु सबकी ऑखें आज केवल राजकुमारी पर ही लगी थी। लोगों को वह पता नहीं कैसी दिखायी दे रही थी। आज उसमे ही कोई अन्तर आगया था या उसे देखने वाली लोगों की दृष्टि ही बदल गयी थी?

निश्चित समय से अधिक बिलम्ब नहीं हुआ कि महाराज पधारे। दूसरी ओर से अभियुक्त भी लाया गया। लोग उठकर खड़े हो गये। 'महाराज की जय' का गगन भेदी स्वर चारो ओर गूँजा। इसमे कुछ भीड़ अनियंत्रित हुई। भीड के एक रेला के साथ ही साथ वाली और भोज भी आगे निकल गये और सरदारो के बैठने के स्थान के एक दम निकट पहुँच गये। यहॉ से वे महाराजा और राजकुमारी को अच्छी तरह देख सकते थे। महाराज की दृष्टि तो इधर पड़ती ही न थी पर राजकुमारी इन्हे अच्छी तरह देख सकती थी। उसके निकट ही कुछ अरबी औरतें भी बैठी थीं। उनमे से एक भोज को बड़े ध्यान से देख रही थी। अरे यह तो शमीम है भोज ने मन ने धीरे से कहा।

पहले एक चारण ने विरुदावली कहनी आरम्भ की। पर महाराजा ने उन्हे बीचमें ही रोक दिया। आज उनका मन खिन्न था। राजसी ठाटबाट में वे सुशोभित तो थे, पर चेहरे पर गहरी उदासी छायी थी। ऐसे समय मे वे भला विरुदावली सुनते! उन्होने कार्य आरम्भ करने की आज्ञा दी।

महामंत्री अभियोग सुनाने के लिए खड़ा हुआ। बस चारो ओर सन्नाटा छा गया। एक दम सन्नाटा। सभी ध्यान में मग्न सुनने लगे।

महामंत्री ने यह घोषणा की,—'प्रजाजनों! परम प्रतापी, प्रातः स्मरणीय प्रजापालक श्री सोलंकी महाराज की आज्ञा से पूज्य ज्योतिचार्य महेश पण्डित पर आरोप लगाते हुए कहना पड़ता है कि ज्योतिषाचार्य ने राजकुमारी के जन्म कुण्डली की गणना कर उन्हे विवाहित बताया है, किन्तु वे विवाहित है नही। इसलिए ज्योतिषाचार्य का कहना झूट सिद्ध होता है। या तो वे राजकुमारी के विवाहित होने का पर्याप्त प्रमाण दें या अपनी कहीं बात वापस ले। नही तो उन्हें शूली पर जीवित चढा दिया जायगा!

फिर महाराज ने अभियुक्त को अपनी सफाई देने को कहा। इतना होने पर भी ज्योतिषाचार्य की आकृति पर चिन्ता की एक भी हल्की रेखा दिखायी नहीं पड़ती थी। वे सदा की भाँति ही प्रसन्न थे और बड़े हँसमुख दिखायी दे रहे थे। वे तो पहले से ही खड़े थे। उन्होंने बोलना आरम्भ किया—'परम प्रतापी महाराज, पराक्रमी सरदारों एवं प्रिय मित्रों और देवियों! मुझपर जो अभियोग लगाया है। वे उसे आपने ध्यान से सुन लिया होगा। अब आपही बताइए मै अपनी सफाई मे क्या कहूं? मैं नक्षत्रों और ग्रहों की भाषा बोलता हूँ। जो वे ग्रह कहते है, वही बताता हूँ। राजकुमारी जी के ग्रह ऐसा कहते है कि उनका विवाह आजसे चार-पाँच वर्ष पहले ही हो चुका है। यदि आप लोग कह दें तो मै कह दूँ कि विवाह नहीं हुआ है पर मेरी आत्मा झूठ कहने को तो नहो कहती।'

'इसका तात्पर्य है कि आपकी दृष्टि मे राजकुमारी कलकिनी है?' महाराज ने बीच में ही पूछा।

'नही महाराज मै कभी ऐसा नही कह सकता।' ज्योतिषाचार्य बोलते रहे—'उसके नक्षत्र तो वे हैं जो अत्यन्त चरित्रवान प्रतापियों कहते है।

'पर ये दोनो बाते एक साथ ही कैसे हो सकती हैं—चरित्र भी अच्छा

है और विवाहित भी है !'—महाराज ने पूछा—'यही तो मै भी नही समझ पाता महाराज ।' फिर वह बड़े गम्भीर हो सोचते रहे उनका बायाँ हाथ सिर पर था और निगाह नीची थी । फिर कुछ देर के बाद बोले,—'ऐसा तो नही कि कभी राजकुमारी ने मजाक या खेल में विवाह कर लिया हो ?'

अब सभा मे और भी अधिक सन्नाटा छा गया । राजकुमारी रह-रह कर बराबर भोज की ओर देखती रही । महाराज ने पुनः ज्योतिषाचार्य की पूछी गयी बात राजकुमारी से पूछी ।

महारानी अब बड़े असमजस मे पड़ी । वह क्या उत्तर दे. .फिर बड़ा हिचकिचाते हुए उसने अपने पिताजी से ही धीरे-से कहा,—'हाँ मैंने एक. .बार. .विवाह का खेल-खेला था ।'

राजकुमारी की यह बात किसी ने सुनी नही, केवल महाराजजी ने ही सुना था । वे तुरन्त जोर से बोले, 'लेकिन खेल मे विवाह कर लेने से विवाह तो नही होता ।'

'आप यह कैसे कहते है महाराज, क्या खेल मे किसी को भोजन कराया जाय तो वह भोजन नही करता ? क्या खेल मे किसी का गला काट लिया जाए तो वह नही मरता ।' ज्योतिषाचार्य के इस तर्क में बड़ा दम था । जनता के चेहरे पर एक बार प्रसन्नता दौड़ गयी । महाराज के रुख से सबको पता चल रहा था कि खेल मे ही राजकुमारी का विवाह हो गया है ।

ज्योतिषाचार्य की यह बात सुनकर महाराज का चेहरा फीका पड़ गया । फिर अचानक आकृति का रङ्ग बदला और क्रोध में काँपते हुए उन्होंने सरदार को हुक्म दिया कि ज्योतिषाचार्य को छोड़ दिया जाय । वे निर्दोष हैं । इतना कहने के बाद उनका क्रोध और भी तेजी से भभका । वे गरजते हुए बोले,—'मै भरी सभा में घोषणा करता हूँ कि खेल-खेल में जिस लड़के से राजकुमारी का विवाह हुआ है उसे जो भी जीवित या मरा हुआ दरबार मे उपस्थित करेगा उसे एक सहस्र स्वर्ण मुद्रा पुरस्कार मे दी

जायगी।...उस लड़के ने हमारे वंश का महान अपमान किया। हम उसे संसार में जीवित छोड़ नहीं सकते।.' इतना कहने के बाद वह बैठ गये। महामन्त्री ने दरबार समाप्त होने की घोषणा की।

राजकुमारी उठकर जाते समय तक बराबर भोज को देखती रही। घोषणा सुनने के बाद ही भोज वहाँ से घसका और बाली को लेकर बाहर आया। 'यह तो बड़ा गड़बड़ हुआ भोज।'—बाली बोला।

'चुप रहो। बकवाद मत करो। जल्दी से गाँव चलो।' भोज बोला।

ये दोनों लड़के राजमहल से निकले ही थे कि भोज को ऐसा सुनायी पड़ा जैसे उसे कोई पुकार रहा हो। पहले तो यह आवाज अत्यन्त अस्पष्ट और दूर से आती सुनायी पड़ी, पर धीरे-धीरे तेज होती गयी। यह पतला भारी स्वर उसे लग रहा था जैसे मैंने इसके पहले भी कहीं सुना हो। उसने मुड़ कर देखा। शमीम पुकार रही है। मनमे तो कुछ भुनभुनाया, पर रुक गया। शमीम अपने साथ के अरबी लोगों को छोड़ कर दौड़ी आयी। आते ही उसने कुछ दूरी पर पीछे खड़े दो अरबी सैनिकों की ओर संकेत कर कहा, 'भोजजी, वह हमारे पिता और वह हमारा भाई हबीब है।'

भोज ने दूर से ही उन्हें नमस्कार किया। उन्होंने वहीं खड़-खड़ मुस्कराते सिर झुका दिया। फिर वह बोली,—'मैंने तुम्हारी उनसे तारीफ कर दी है। वह तुमसे मिलकर बहुत खुश होंगे।'

'पर इस समय मुझे जल्दी है। मेरी माँ बीमार है। गाँव जाना है। आप क्षमा करें। मै फिर कभी मिल लूंगा।' भोज जल्दी मे नमस्कार कर बढ़ने को हुआ। पर शमीम इतनी जल्दी छोड़ने वाली कहाँ थी। 'क्या तबीयत खराब है माँ की?' उसने पूछा।

'बुखार है।' छोटा-सा उसने उत्तर दिया।

'बहुत ज्यादा तो नहीं है?'

'नहीं!' भला अब तो जान छोड़े, भोज सोच रहा था।

पर वह मुस्कराती फिर बोली,—'राजकुमारीजी से आपका परिचय है क्या ?'

'क्यों ?'

'वह बडे गौर से आपको देख रही थी। मैंने तो देखा कभी निगाह आपकी तरफ से हटी ही नही।' फिर उसके चेहरे पर कुछ ऐसा भाव आया जिसे मैं व्यक्त नही कर सकता।

'मैंने तो नही देखा।' भोज ने कहा।

'लगता है राजकुमारी को आप बहुत अच्छे लगते है।' वासना उसकी आँखो से टपक पड़ी।

'अच्छा नमस्कार.. ' वह चलने को हुआ।

'फिर कब मिलोगे ?'

'ऐसे ही मिलता रहूँगा।' इतना कह वह रुका नही। चलता बना। शमीम तब तक उसे जाता देखती, जब तक उसके पिता ने उसे पुकारा नही।

नारी सौन्दर्य और पौरुष की ओर वैसे ही ढुलक जाती है जैसे ढाल की ओर पानी। भोज मे यह दोनो था। शमीम बराबर उसकी ओर ढुलकती आ रही थी। आज उसे कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि राजकुमारी भी भोज को चाहती है। अब वह व्यर्थ ईर्ष्या की अग्नि मे धीरे-धीरे सुलगने लगी।

× × ×

चार दिन भी नहीं बीता कि सोलंकी राजा के घोषणा की चर्चा चारो ओर होने लगी। पर अभी तक किसी को यह नही मालूम था कि वह कौन लडका है जिससे राजकुमारी का विवाह हुआ था। और यदि यही मालूम होता तो कहानी समाप्त न हो जाती।

बराबर राजा के सैनिक और गुप्तचर गाँव में आते रहे। रोज़ ही इनका एक चक्कर लग जाता था। पर कुछ पता न चला। राजकुमारी से बहुत कुछ पूछा गया, पर उसने इतना ही कहा,—'मै उस लड़के का नाम तो नही जानती पर पहचान सकती हूँ।...वह लड़का उस दिन के दरबार में भी आया था।'

इतना पता लगने के बाद गुप्तचर और भी चौकसी से काम मे लगे गये। जब दरबार में वह उपस्थित था, तो अवश्य ही नगर के पाँच-छः कोस के आस-पास में ही कही रहता होगा यह समझ लेना कठिन नही था। सैनिको के अतिरिक्त अब और लोग भी पुरस्कार के लालच मे उसे खोजने लगे।

अब भोज और बाली को भी घबराहट हुई। उन्होंने एक दिन विचार किया कि सारी बातें माँ से कह देनी चाहिए। भोज अब भी कहने के पक्ष में नही था। वह डर रहा था कि माँ सुनेंगी तो बिगड़ेंगी और हो सकता है वह रुठ कर कही चली जाय, पर बाली कहता था,—'रुठ कर जायेगी कैसे? हम लोग उसका चरण पकड़ कर बैठ जायेंगे।'

'और यदि रूठने का ही डर था तो आप लोगों ने ऐसा किया क्यो?' देव बोला जो सदा से ही झुलनोत्सव में जाने के विपक्ष में था।

'अच्छी बात है, तो आप ही लोग माँ से कहिएगा। मै चुप रहूँगा।' भोज ने कहा।

'अब क्यों नहीं आप चुप रहेंगे। जब विवाह करना था तब तो बड़ी खुशी-खुशी आगे-आगे चले। अब जब उसका मजा चखना हुआ, तो आप ही लोग पहले कहिए।' देव कुछ क्रोधित होकर मुँह चिढाते हुए बोला।

बाली और भोज दोनों को बहुत बुरा लगा। पर यह बिगड़ने का मौका नही है किसी प्रकार प्रेम से उन दोनो ने उसे मिला लिया।

निश्चय हुआ कि आज सन्ध्या को जब घर लौटा जाय तब सारी बातें मां से कह दी जायँ। केवल बाली कहेगा, और लोग चुपचाप बैठे रहेंगे।

इधर लगातार बीमार रहते-रहते मा का स्वभाव भी कुछ चिड़चिड़ा हो गया है। लेकिन बाली की बात वह बडी शान्ति से सुनती रही। कुछ बिगड़ी तो नही, पर नाराज होते हुए बोली—'तुम लोगों ने यह अच्छा नही किया। .जो किया सो तो किया ही पर मुझसे छिपाया क्यों? मुझे इस बात का दुःख है।' फिर उसने कुछ सोचते हुए कहा—'इस बात को कितने दिन हो गये?'

'यह तो ठीक नहीं मालूम माँ?'—बाली ने कहा।

'पर झूलनोत्सव तो रात में होता है, मुझे नही याद आता है कि तुम कभी रात में यहाँ से गये हो?'

बाली ने चुप होकर भोज की ओर देखा और भोज ने देव की ओर।

'माँ.. जब. .श्यामा के...दूध के···'—बाली ने कुछ रुक-रुक धीरे-धीरे कहा।

'हाँ...अब समझी।' अब तो तारा का रूप जैसे तमतमा गया। उसने रुग्णावस्था में बिस्तर पर करवट बदलते हुए एक दीर्घ निश्वास ली। क्रोध और चिन्ता दो ऐसे मनोवेग हैं जो कभी आपस में मिलते नही, पर जब मिलते हैं तब विस्फोट कर देते हैं।

तारा ऐसी ही विस्फोट की अवस्था में थी। वह एक दम उबल पड़ी—'तुम लोगो ने गलत काम भी किया और मुझसे झूठ भी कहा—लगता है मेरा इतना सिखाना पढाना तुम पर किसी प्रकार असर न कर सका। .. जब तुम बातें मुझसे ही छिपाने लगे तब भगवान् तुम्हारा भला करें।' फिर वह कुछ सोचती एक टक दालान के बाहर आकाश की ओर देखती रही। उसकी आकृति का रङ्ग बराबर बदलता जा रहा था। ऊपर आकाश में धीरे-धीरे कालिमा बढ रही थी। इस बीच एक

हल्की सी मुस्कुराहट उनके अधरों पर छा सी गयी, और फिर कपूर की तरह उड़ गयी। कदाचित् उन्हे ज्योतिषाचार्यजी की भविष्य वाणी याद आई। सचमुच वह झूठी नही होती—उसने सोचा! फिर चेहरे का रङ्ग लाल होता गया और वह बडी वेदना से बोली—'हे भगवान्, अब लगता है कि इन्हे मेरी आवश्यकता नही है। अच्छा होता यदि तुम मुझे अपने पास बुला लेते।'

इतना सुनना था कि भोज माता के चरणों पर गिर पडा,—'अब ऐसी भूल नहीं होगी माँ, मुझे क्षमा करो।'

पर माँ ने जैसे कुछ सुना ही नही। वह आहे भरती हुई करवटें बदलती रही। बाली ने उसका हाथ पकड़ कर देखा—ज्वर तो नही है। किन्तु हाथ पैर बिल्कुल ठंढा है।

लोग चुपचाप बहुत देर तक वैसे ही बैठे रहे। आज शिवालय में बन्दना कब हुई और कब खतम हुई किसी को कुछ पता नही। एक दम अँधेरा हो गया था, पर किसि को दीपक जलाने तक की सुधि नहीं थी। अन्त मे देव ने उठकर दीपक जलाया। दीपक की लौ मद्धिम थी। अंधेरा मानो उसकी पतली रोशनी पीने लगा था। लोगो ने दीप को नमस्कार कर माता का चरण छूआ।

फिर यह मौन माँ की भर्रायी ध्वनि से भग हुआ। उसने देव से कहा—'जरा देखो तो बेटा, ज्योतिषाचार्यजी घर पर हैं। यदि हों तो उधर ही से रुक्मणीजी के यहाँ चले जाना। उसने उनसे कहना कि ज्योतिषाचार्यजी के यहाँ वह चले आवें। मै वहां आती हूँ।...बहुत जरूरी काम है।. देखो जरा जल्दी ही आना। इतना कहने के बाद फिर करवट बदली और सो सी गयी। कुछ देर तक वहाँ लोग बैठे रहे। फिर वे उठकर आये और अँगीठी जलाकर माता जी की खाट के नीचे रख दिया।

भोज ने बाली से कहा—'मालूम होता है, माँ को आन्तरिक दुख हुआ।'

बाली बोला—'हाँ हम लोगो ने बडी भूल की। हमें ऐसा करना नहीं चाहिए था।'

उसकी उपस्थिति का समाचार मिलते ही तारा लक ी टेकती उठी और अच्छी तरह कम्बल ओढकर चलने को हुई। भोज को तो कुछ करने का जैसे साहस हो नही हो रहा था। बाली आगे बढकर माँ को अपनी बाहों का सहारा देता चला पर माँ बडे भग्न मनसे बोली,—'रहने दो, तुम लोग बैठो हमे तुम्हारे सहारे का भरोसा नहीं रहा!' फिर उसे खाँसी आगयी। अपने को सभालती उसने सांस लेकर पुनः कहा—'जैसी मै कामना करती थी वैसा संस्कार तुम लोगों में भर न सकी. लगता है कि महाराज महेन्द्र को प्रिय रानी का स्वप्न मै पूरा न कर पायी।' इतना कहती वह बाहर चली गयी। तब बाली ने देव को सकेत किया—'अरे तू तो पीछे-पीछे जा। इस समय मां को अकेले नही छोड़ना चाहिए।'

मा लकडी टेकती और देवके बाहों का सहारा लिए धीरे-धीरे चली गयी। शीत की ठडी लहर में रात का पहला पहर काँपने लगा था।

भीतर बैठे भो जने बाली से कहा,—'कोई ऐसा उपाय निकालो कि मां की यह अप्रसन्नता दूर हो जाय।'

इसका सरल उपाय यही है कि हम केवल शान्त रहे। माँ जो कहती है सुनते जायँ।'

फिर एक विशेष बात भोज के मनमें बराबर उठती जाती थी। उसने बाली से कहा,—'क्यों बाली जाते समय माँ ने महाराजा महेन्द्र की प्रिय रानी. .क्या कहा था?'

'हाँ कुछ मेरे भी समझ में नही आता. ऐसी बातें मै कई बार सुन चुका हूँ।...एक बार पाराशर में काका से जादव भी कुछ ऐसी ही बात कर रहा था। मैंने छिपकर सुनी थी, पूरी तो याद नही आ रही है।

पर उसने भी तुम्हारे सम्बन्ध में कहा था कि यह ईडर के राजा महेन्द्र का पुत्र है। बाप मारा जा चुका बेचारा आपकी शरण में है. .'।

भोज कुछ सोचने लगा। जैसे कोई भूली बात याद कर रहा हो। उसकी आँखों की पलकें बहुत देर तक न गिरती थी। लगता था जैसे वह कुछ धुंधला धुंधला सा देख रहा है। फिर उसे बहुत सी बातें याद आती गयी। मन एक ऐसा दर्पण है जिस पर बड़ा प्रतिबिम्ब न तो कभी मिटता है और न हटता है। हॉ, समय की परतें उसे ओझल अवश्य कर देती है। ज्योंही वह परते हटी तहॉ सब कुछ साफ दिखायी देने लगता है। इस समय भोज उन परतो के भी नीचे देख रहा था। उसे धुंधला-पन कुछ-कुछ हल्का होता मालूम हुआ!

इधर तारा जब पहुँची, तब वह जोर-जोर से हॉफ रही थी। वह बिल्कुल थकी मालूम हो रही थी। उसका ऐसा गिरता स्वास्थ्य अवश्य चिन्त्य था। ज्योतिषाचार्यजी ने कहा—'तुम तो बिल्कुल गलती जा रही हो तारा।'

'क्या करूं महराज? लगता है कि जीवन का अन्तिम दिन अब निकट है। ..पता नही कब बिस्तर बिछालूं!'

'अरे अभी ऐसा क्यों कहती हो तारा। अभी तो तुम्हे भोज को बहुत कुछ बनाना है।'

'महाराज, भला उसे मै क्या बनाऊंगी। वह तो स्वयं बनता चला जा रहा है।' फिर उसने गहरी सांस ली और कुछ रुककर अपने मतलब की बात कही,—'एक नयी और भयंकर समस्या उत्पन्न हो गयी है महाराजा सोलंकी राज जिस लड़के को जीवित या मरा हुआ बन्दी बनाना चाहते हैं, वह आपका भोज ही है।'

'हरे...हरे...हरे यह तो बड़ी विचित्र बात सुनायी तारा।' ज्योतिषाचार्य चिंता में डूब गये। रुक्मणि को भी महान आश्चर्य हुआ।

'क्या कहूँ, प्रारब्ध तो कोई मिटा नही सकता...आप तो ज्योतिषी है, सोचिए।' इसके बाद गम्भीर शान्ति छा गयी। रुक्मणिजी सबसे अधिक चिन्तित दिखायी पड़े। 'यदि आप चाहे तो एक रास्ता निकल सकता है!'

'क्या ?' ज्योतिषाचार्यजी ने कुतूहल पूर्ण स्वर में पूछा। तारा भी जिज्ञासा से रुक्मणि का मुख देखती रही।

'आप सोलकी महाराज से जाकर समझाइए कि अब क्रोध और हठ करने से लाभ क्या है ? अब तो विवाह हो ही चुका है। लड़के को मरवा डालने से विवाह मिट जायगा ऐसा तो नही हो सकता।.. वरन् उनकी लड़की ही विधवा हो जायगी। ..'

'हाँ तुम कहते तो ठीक हो। पर वह ऐसा विचित्र व्यक्ति है कि उसको समझाना सूर्य्य को शीतल करना है।.. देखो मै प्रयत्न करूँगा।' फिर कुछ रुककर उन्होने सोचा और कहा,—'मैने राजकुमारी की जन्म-कुण्डली तो अच्छी तरह देखी है। उसमे वैधव्य का योग नही है।... घबराओ मत तुम्हारे भोज का कोई कुछ बिगाड़ नही सकता।'

'मान लीजिए महाराज, राजाने आपकी बात न मानी तब ? तारा ने पूछा।

'तब तो, वास्तव मे बड़ी विचित्र समस्या उत्पन्न हो जायगी। ज्योतिषाचार्यजी ने कहा।

'मुझे लगता है तब तो आपको अवश्य ही गाँव छोड़ना पड़ेगा। रुक्मणिजी बोले।

'अचानक भला कहाँ जाऊँगी. .और यदि चली भी जाऊँगी तो लोग भला क्या सोचेंगे ? '

'सोचेंगे क्या ? कह देना कि तीर्थयात्रा पर गये हैं।' रुक्मणि ने कहा।

'हाँ ऽ ऽ यह ठीक रहा।. . वह घर ही कुछ ऐसा है कि इसमें जो रहते हैं तीर्थयात्रा करने हो जाते हैं। पहले चन्द्रशेखर जी थे, वे तीर्थयात्रा पर गये। कई वर्ष हो गये, उनका कुछ पता ही नहीं। अब आप रहती हैं। आप भी अच्छी तरह तीर्थयात्रा कीजिए।' इस गम्भीरता में भी हँसी की लहर तो आ ही गयी।

निश्चय हुआ कि कल प्रातःकाल हो ज्योतिषाचार्यजी नागदा जायेंगे और महाराज से बात करेंगे। यदि महाराज का रूख अनुकूल न देखा जायगा तो परसों भोर में ही तारा यह गाँव छोड़कर कही दूर चली जायगी। क्योंकि और अधिक इस ग्राम में रहना ठीक नही है। यह सारी बातें अभी गुप्त ही रखनी चाहिए ऐसा न हो कि बाहर बैठा देव सुन रहा हो।' ज्योतिषाचार्यजी ने कहा।

पर बाहर आकर तारा ने देखा देव चारपाई पर पड़ा खर्राटे ले रहा था।

× × ×

अभी सन्ध्या होने में अधिक विलम्ब था, तभी ज्योतिषाचार्यजी तारा के घर पधारे और बड़े निराश स्वर में उन्होंने कहा—'तारा मेरा प्रयास तो सफल न हो सका। महाराज बड़े अप्रसन्न हैं। वे कहते है कि चाहे मेरी लड़की बिधवा हो जाय, पर मै उस उद्दण्ड तथा उद्धत लड़के का प्राण लेकर ही रहूंगा।'

'तब महाराज ?'—बड़ी विह्वलता मे तारा बोली।

'तो तुम गाँव छोड़ने की जल्दी तैयारी करो...और मेरा विचार है कि तुम भोज को लेकर चित्तौड़ को ही ओर जाओ। उस दिन तो मैंने तुमसे बताया ही था और फिर कहता हूं कि वहाँ जाने से उसे लाभ ही होगा। चित्तौड़ नाम से मीन राशि पड़ती। कहीं ऐसा न हो कि उसे चित्तौड़ का राज्य ही मिल जाय।'

तारा कुछ समय तक सोचती बैठी ही रही। ज्योतिषाचार्य पुनः बोले—'बैठी रहने से काम नही चलेगा अब अपना सामान ठीक करना आरम्भ कर दो। मै जाते समय अनङ्गपालजी से मिलकर तुम्हारी तीर्थ-यात्रा की बात कह दूंगा, देखना कितनी जल्दी यह बात सारे गॉव में फैल जाती।. जैसे फूस में आग फैलती है, वैसे ही अनङ्गपालजी के यहॉ से बात फैलती है।' फिर वह हॅसते रहे। पर तारा उदास-सी खड़ी रही। उसकी ऑखें छलछला आयी।

ज्योतिषाचार्यजी ने देखा, उन्हे भी बडा दुःख हुआ। वे समझाते हुए बोले—'अरे इसमे दुःखी होने की क्या बात है? जीवन तो एक लहर है। आज इस घाट तो कल उस घाट।'

सवेदना के बांधो से मन को चाहे ढाढस भले ही मिले पर ऑसू तो दूनो गति से निकलने लगते है। ज्योतिषाचार्य जी चले गये, नही तो कदाचित् तारा की सिसकन उन्ही के सामने मुखरित हो जाती।

सन्ध्या तक अच्छी तरह प्रचारित हो गया कि तारा अपने परिवार के साथ कल ही तीर्थ यात्रा पर जा रही है। वह तो बराबर हम लोगो से मिलती थी पर इसके पहले कभी भी उसने यात्रा की चर्चा नही की थी। शुभ नक्षत्र और घड़ियॉ तो बाद में भी आते ही रहेंगे। आखिर इतनी जल्दी क्या है? ये शंकाएँ थी जिनका ठीक समाधान लोग कर नहीं पा रहे थे।

. फिर भी लोग अपनत्व दिखाने के लिए उससे मिलते थे तथा अपनी शुभ कामना कहते थे। दूसरे दिन मुँह अँधेरे ही जब वह शिवालय से अपने परिवार के साथ लौटी तब उसका मुह उतरा-उतरा था। सच बात तो यह थी कि वह यह गॉव छोड़ना नही चाहती थी। ऐसे सात्विक और पवित्र वातावरण में वह विशेप आनन्द का अनुभव करती थी। दूसरे अब उसका स्वास्थ्य भी देशाटन के योग्य नही था। पर लाचारी थी।

भोज, वाली और देव भी दुःखी थे, पर वह अपनी माता के समान खिन्न तथा विषण्ण नही दिखाई पड़ रहे थे। तारा तो जहाँ कोई मिलने आता था उसे देखकर रो पड़ती थी एक बार तो उसने भोज से कहा भी–बेटा तुम वाली और देव को लेकर चले जाओ। चित्तौड़ के राजा तुम्हारे मामा हैं। हमने तुम्हे अपना परिचय तो बता ही दिया है। उनसे सब साफ-साफ कह देना। वह जरूर तुम्हारी सहायता करेंगे।. .पता नही क्यो बेटा मेरा मन जाने को नही कहता। जो मेरा बड़ा घबड़ाता है।'

पर भोज नही माना। वह अपनी मा को लिए बिना जा नही सकता। जिसका जीवन मे उसने एक रात के लिए भी नही छोड़ा, उसे अब वह कैसे छोड़ दे।

जब लोग समान आदि लेकर चले तो बड़ा कारुणिक दृश्य था। जो भी देखता सबकी आँखें भर आती। किसी के मुंह से अधिक बोली नही निकलती थी। केवल लोग हाथ उठाकर नमस्कार करते और फिर कुछ बोल न पाते। गाँव के बहुत से लोग पहाड़ी तक उन्हे पहुंचाने आये। दरवाजे पर अनङ्गपाल जी खड़े थे। इधर से जाते समय तारा और भोज आदि ने उनका चरण छूआ। बूढा भरे गले से बोला—'जा रही हो बेटा! ...जाओ, पर देशाटन से जहाँ तक हो वर्षा के पहले ही लौटना।'

'देखिए आपका आशीर्वाद होगा तब न! ...महाराज! एक विनती और है। आपके लिए एक दूसरी श्यामा घर पर छोड़े जा रही हूँ, कृपया खोलवाकर मंगवा लीजिएगा। आपको भी इधर दूध का कष्ट हो गया था।'

अनङ्गपालजी झेंप गये। उन्होने सोचा मैंने भोज पर लांछन लगाया था। उसी पर इसका यह व्यंग्य है। उन्हे अनुभव हुआ कि तारा मुझे गाय नहीं दे रही है, वरन् मेरे गाल पर तमाचा मार रही है। वह कुछ कहें इसके पहले ही तारा पुनः बोली—'महाराज मै स्वयं उसे ले आती पर वह आज इतनी कातर दृष्टि से मुझे देख रही थी कि उसके पास

जाने की मेरी हिम्मत न हुई।' इतना कहते-कहते उसकी आँखें फिर पसीजने लगी। वह आगे बढी।

अरावलो तक लोग आकर अब लौटने लगे। अंत में केवल रुक्मणि रह गये थे। उनका चरण छूकर तारा सचमुच रो पड़ी और बोली—'पुरोहितजी आवें तो मैने जा कहा है उनसे अवश्य कह दीजियेगा।'

रुक्मणि ने देखा कि तारा वास्तव में बहुत दुःखी। उन्होंने उससे कहा—'मेरी समझ मे नही आता कि तुम इतनी दुःखी क्यो हो? यदि तुम्हारा मन जाने को न कहे तो मत जाओ। पता नही क्या होनेवाला है? तुम तो कभी इतनी अधीर नही होती थी।'

तारा कुछ न बोली वह नमस्कार कर चलती बनी। अब गाँव के सभी लोग लौट गये। पीछे घूम-घूमकर वह गाँव देखती जाती थी। जब वह अरावली पर चढ गयी तब उसने पीछे घूमकर फिर देखा। पूरा गाँव जाग चुका था। उसने गाँव को एक बार फिर नमस्कार किया, वहाँ के लोगों को नमस्कार किया, उनकी पवित्र आस्था और सात्विक वृति को नमस्कार किया और फिर उस शिव मन्दिर को नमस्कार किया। पता नही अब इनसे भेंट होगी या नहीं।

समतल पर तो सवारी मिल जाती थी, पर पहाड़ो पर पैदल ही चलना पड़ता था। कई घण्टे से वे बराबर पहाड़ी पर चलते रहे। चित्तौड़ का रास्ता भी जाना बूझा नही था। लोग कभी-कभी भटक भी जाते थे। तारा बिल्कुल थक चुकी थी। एक तो गिरता स्वास्थ्य और दूसरे मन की खिन्नता ने उसे और भी शिथिल कर दिया था। उसने सोचा कही बैठकर थोड़ा आराम कर लूँ। 'अब गाँव निकट है माँ वही चलकर विश्राम किया जायगा।' भोज ने कहा।

'पर बेटा अब मै बिल्कुल नही चल सकती।' इतना कहकर तारा एक वृक्ष के तने के सहारे बैठ गयी। सन्ध्या का सूर्य अपनी रंगीनी बिखेर

विदा ले रहा था। माँ के उदास चेहरे पर इस समय और भी खिन्नता दिखायी पड़ती थी। तीनो व्यक्ति भी अपने कन्धे से बोझ उतार कर साँस लेने लगे।

तारा जहाँ बैठी थी उसी शिला के नीचे घनी झाडी थी। उसने सोचा पैर फैलाकर थोडा वह और आराम करे। ज्योही उसका पैर झाडी में गया त्योही उसमें कुछ खड़खड़ाहट हुई। फिर तारा अचानक चिल्लाना पड़ी—'भोज।'

'क्या हुआ मा ..क्या हुआ।' तीनो एक साथ ही जैसे आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने देखा, झाडी मे एक काला नाग निकलकर भागा जा रहा है। मां शिथिल होकर 'शिव शिव' कह रही है।

क्या हुआ, यह समझते उन्हे देर न लगी। भोज ने खींचकर लाठी नाग के सिर पर मारी, वह वही ठण्डा होने लगा। दो एक बार उसने अपना शरीर ऐंठा और फिर जैसे चेतना शून्य हो गया। इधर मां की भी चेतना लुप्त होने लगी थी।

बेचारे एक दम घबरा गये थे। क्या करें, कुछ समझ में नही आ रहा था। देव दौडकर पानी ले आया। बाली कपडे से हवा करने लगा। भोज 'माँ माँ' करके उस पर रोता गिर गया। मां कुछ बोलती नहीं थी। केवल 'शिव शिव' उसके मुख से निकल रहा था।

उसकी चेतना और भी शिथिल हुई अब तीनों रोने लगे। तब मां बहुत टूटे स्वर में केवल इतना बोल सकी—'रोओ मत मेरे प्यारे बेटे, हमारा साथ बस इतने ही दिनों का था। जो आया है वह तो एक न एक दिन जायगा ही भोज!' जैसे उससे अब बोला नही जा रहा था। वह जैसे बड़ी चेष्टा कर बोल रही हो—भोज...तू बड़ा प्रतापी राजा होगा यह तो हमें विश्वास है, पर राज पाकर कभी किसी को सताना मत बेटा और बाली... ' फिर वह बिल्कुल न बोल सकी। अंधेरा बढ चला था।

सामने दूर दिखाई पडने वाले गॉव मे लोगो के घर दीप जलने लगे थे। इधर दीप बुझने लगा।

अब तीनो रो रहे थे। चीख रहे थे। अरावली का हृदय फटा जा रहा था। 'मॉ मुझसे क्या भूल हुई कि तू मुझे छोड़कर चली गयी। बताओ मा, क्यो नही बोलती मा। अब मै कहां जाऊ मॉ, क्या करूं? तू कह रही थी कि मै नही चलूंगी, शायद इसीलिए मॉ।' वे ऐसे ही बहुत देर तक रोते और अपना सिर पटकते रहे। उस सुनसान में उनकी सुनने वाला कौन था।

एक गड़ेरिया अपने गॉव की ओर उधर ही से जा रहा था। उसने यह कारुणिक चीत्कार सुनी। निकट आ वह सारी स्थिति से अवगत हुआ फिर ढाढ़स बंधाते हुए बोला,—'घबराओ मत इस गॉव मे एक साधु रहता है। वह अपने मत्र बल से सर्प का विष उतार सकता है म अभी जाते ही उसे भेजता हूँ।'

'जीवन भर आभारी रहूँगा।...जरा जल्दी जाते ही उन्हे भेज दो भइया. तुम्हारा बडा भला होगा...' भोज रोता तथा गिड़गिड़ाता हुआ बोला।

साधु दौड़ा गॉव की ओर गया। ये बड़ी उत्सुकता से साधु की राह देखते रहे। अब उनका रोना कुछ हल्का हो गया था।

थोड़ी देर बाद साधु आया। जीर्ण तन पर लम्बी जटायें थीं। उसकी अवस्था भी अधिक ही रही होगी, बिल्कुल वृद्ध समझिए। आते ही उसने तारा को देखा। नाड़ी देखी। फिर बड़ी चिन्ताकुल मुद्रा मे बोला,—'बेटे, अब तो लौ मे ज्योति नही रही।'

इतना सुनना था कि वे पुन दहाड़ मार कर रोने लगे। साधु फिर बोला,—'घबराओ मत मै अभी भी चेष्टा करता हूँ।. जिसने तुम्हारी मॉ को काटा वह सॉप किधर गया?'

भोज ने मरे हुए सर्प की ओर संकेत किया। 'अरे यह तो नाग है और मर गया है। यदि यह जीवित होता तो कदाचित् मेरे मंत्र बल से तुम्हारी माँ मे अपना विष खींचता, पर अब तो काम समाप्त हो गया है।'

वे फिर चीखने लगे।

साधु ने उन्हे बहुत समझाया,—'बेटा, अब रोना बेकार है। यह तो मृत्यलोक है, यहाँ सब मरने के लिए ही आते है। कोई यहाँ रहने नही आया है तुम्हारी माँ और तुममें अन्तर इतना ही है वह आज गयी है और तुम कल जाओगे। फिर रोना क्या ? फूल जो खिला है वह झरेगा ही। दीप जो जला है वह बुझेगा ही। फिर संसार क्यो रोता है ? यह उसका स्वार्थ है। तुम इसलिए नही रोते हो कि माँ चली गयी वरन् इसलिए रोते हो कि अब हमारा क्या होगा ? पतंग दीपक पर इसलिए नहीं मरता कि वह उससे प्रेम करता है, वरन् इसलिए मरता है कि वह दीपक से श्रम करवाना चाहता है। इस संसार मे सभी अपने-अपने स्वार्थ में लगे है।...मोह उसीका प्राढ़ रूप है . । बेटा मोह ममता छोड़ो और जाने वाले को सुख मे जाने दो।' साधु ऐसे ही समझाता रहा।

गाँव वालो ने अँधेरे में देखा कि तीन बडे लड़के एक बूढी का शव लिए साधु के साथ आ रहे हैं। धीरे-धीरे सृष्टि के मुख पर कालिख पुतने लगी।

———

३

वह चित्तौड़ है । मानसिंह मौर्य यहाँ शासन करते है । चन्द्रगुप्त और और अशोक ऐसे महान् मौर्य शासको का वंशज बननेवाला यह शासक अत्यन्त दुर्बल और अयोग्य है । शासन में शक्तिशालियों का बोलबाला है दुर्बल सताये जाते है । प्रजा दुखी है । सरदार अपने स्वार्थ में लगे हैं । राजा को उन्होंने अपनी मुट्ठी में कर रखा है । सब जगह बुरे ही नही होते । कुछ ऐसे भी सरदार हैं जो इस स्थिति से बडे चिन्तित है ।

यहाँ तक कि आक्रमणकारी अरब सैनिक चित्तौड मे स्वच्छन्द घूमते हैं । राजा उन्हे अपने समारोहों में आमन्त्रित करता है । भला यह अच्छा काम है ।

आज ही देखिए, चित्तौड़ मे एक दंगल का आयोजन है। राजपूत और भील मल्लों के अतिरिक्त अरबी पहलवान भी भाग लें रहे हैं। यह अधःपतन की सीमा नही तो क्या है ?

आयोजन किले के प्रधान प्रागण मे हुआ है। कोई अधिक भीड़ नहीं है। जब मन ही प्रसन्न नही तो फिर ऐसा आयोजन क्या ? पर अखाड़े की व्यवस्था अच्छी है। सामने पूरब की ओर महाराज का सिंहासन है। उनके अगल-बगल राज परिवार के लोगों के बैठने का स्थान है। उसी के आगे थोड़ा नीचे की ओर सरदार बैठे है। उत्तर और दक्षिण की ओर ठीक आमने-सामने राजपूत और अरब के मल्ल है। महाराज के सम्मुख पश्चिम की ओर नगर के गणमान्य लोग है। इनके चारों ओर जनता है।

दंगल बहुत पहले से ही प्रारम्भ हो गया है। कई जोड़े हो चुकी है। अब यह अन्तिम जोड़ होने जा रही है—बहुत महत्वपूर्ण जोड़ि, एक अरबी पहलवान और राजपूत की।

दोनों मल्ल योद्धा अखाड़े मे आये। चारों ओर एक दम शान्ति छा गयी। इस कुश्ता के परिणाम पर भारत और अरब का सम्मान निर्भर करता है। लोग अत्यन्त कुतूहल पूर्ण दृष्टि से देखने लगे। करीब दो-तीन मिनट तक दोनों पहलवानों में मल्लयुद्ध होता रहा। कभी अरबी पहलवान दॉव मारता, तब निकट बैठे अरबी लोग उछल पड़ते और राजपूतों के मुँह की हवाई उड़ जाती। कभी राजपूत पहलवान दॉव मारता तब उल्टा दृश्य दिखायी देता।

पर यह अधिक देर तक नहीं चला। अन्त में राजपूत पहलवान चित्त हो गया। ओफ क्या पूछना था, अरबी लोग जैसे उछल पड़े। मारे खुशी मे उन्होंने अपने सिरों पर बंधा कपड़ा खोल-खोल कर उछालना शुरू किया! 'शाबाश हबीब शाबाश,...हबीब जिन्दाबाद, 'अरब जिन्दाबाद!' वे चिल्लाने लगे। राजपूत और भीलों पर तो जैसे सौ मन पानी पड़ गया!

फिर वह पहलवान अखाडे में चारों ओर घूम कर बडे शान से, चिल्लाया,—'है कोई हिन्दुस्तान मे और लड़ने वाला ?'

चारो ओर एक दम सन्नाटा छागया।

उस पहलवान ने पुनः ललकारा तब एक उभड़ता जवान जनता के बोच से जोर से चिल्लाया,—'अभी हिन्दुस्तान वीरों से खाली नही है।' और वह तीर की तरह भीड़ चीरता आगे आकर अखाडे में खड़ा हो गया। सब की दृष्टि उस एक युवक पर आकर केंद्रित हो गयी। है तो बड़ा पौरुपवान। उसकी आकृति से देखो कैसा ओज टपक रहा है।.. किसी बडे प्रतापी का पुत्र मालूम होता है।...पर हबीब के बलिष्ठ तन के आगे उसका स्वास्थ्य कुछ भो नही है। देखो वह कपडे उतार रहा हैं। धोती ठीक कर रहा है. हे भगवान, कही वह जीत जाता।—ऐसी चर्चा आपस मे भीलो और राजपूतो की ओर होने लगी।

अरबो लोग तो विजय के उल्लास में मस्त थे। भला यह क्या लड़ेगा, हबीब एक पल में पछाड देगा। अरब सोचते रहे। उन्ही अरबो में से एक कुछ तेज बोला—'यह कोई खूबसूरती की लड़ाई है जो जीतने आया है, जा-जा, किसी सुन्दरी के दिल को जीत। हबीब को जीतने के लिये अभी तुमको दूसरा जन्म लेना होगा।' फिर इधर के लोगो मे जोर की हँसी हुई। जिधर अरबी औरतें बैठी था, उधर भी नाना प्रकार की चर्चा हो रही थी। पर इस जवान का व्यक्तित्व कुछ ऐसा है जो औरतों पर बिजली का सा असर करता है। उसमें एक औरत बडे आश्चर्य और घबरायी नजर से एक टक देख रही है। अरबी पहलवान भी इस नये योद्धा को बडे ध्यान से देखें रहा था जैसे उसने इसके पहले भी उसे कही देखा है।

अब कुश्ती शुरू हुई। अरे यह तो हबीब को पहली ही दाँव बड़ी खतरनाक थी। अरब प्रसन्न हुए, पर वह अरबी औरत जो पहले से

घबरायी हुई दिखायी दे रही थी, जोर से चिल्लाई—'अरे भाई हबीब इससे मत लडो यह भोज है।'

भोज ने घूमकर देखा। दूर खडी शमीम चिल्ला रही थी। भोज मुस्कराया। हबीब ने उसे अपने गले से लगा लिया। फिर वह अखाडे से नीचे उतरने लगा। 'तुमने हमारी बहिन के साथ जो उपकार किया है उसे हम भूल नही सकते। भोज मै तुम्हारा आभारी हूँ।'

'इस व्यवहार के लिए मै आपका धन्यवाद करता हूँ...लेकिन हबीब! यह भोज और हबीब का मल्ल युद्ध नही है। यह भारत और अरब का है।' इतना कहकर भोज ने उसे ऊपर खीच लिया। दोनो फिर लडने लगे।

लोग समझ न सके कि यह क्या नाटक हो रहा था।

दोनो पहलवान एक के बाद एक दॉव मारते और बचाते रहे। वाह क्या मारा है भोज, पर हबीब भी बचा गया।. .पर यह मार हबीब की भी कम खतरनाक नही है। और वह तो लगातार ही मारता जाता है, पर भोज ने भी खब बचाया...शाबाश, अब उठो बच्चू। भोज तो पटक कर उस पर सवार हो गया। लोग चिल्ला उठे। बैठे लोग उत्साह मे खडे हो गये। पर देखते-देखते हबीब ने पलटा खाया। और फिर दोनो खडे होकर लडने लगे।

जितने दर्शक थे सबके चेहरे का भाव क्षण-क्षण में बदलता था। कभी वे प्रसन्न दिखायी देते थे और कभी चिन्तित। पर उतने जनसमूह में केवल एक शमीम ही ऐसी थी जिसके चेहरे पर सदा एक ही भाव दिखायी देता था। भोज दॉव मारे या हबीब, पर वह घबरायी हुई ही दिखायी दे रही थी।

अन्त में बाजी भोज के ही हाथ रही, हबीब गिर गया और फिर उठ

न सका ! राजपूत और भील दोनों उछल पड़े। कुछ राजपूतों ने उसे गोद में उठा लिया और महाराजा के पास ले चले।

'अरे पहलवान, हम लोग तो तुम्हारा नाम ही नही जानते क्या नाम है ?' जनता मे से कई लोगो ने पूछा।

'काल भोज...काल भोज।' बाली और देव साथ ही चिल्लाए।

फिर जनता प्रबल वेग से चिल्लायी,—'काल भोज की जय . काल भोज की जय.. भारत अमर हो।'

महाराजा उससे बड़े प्रेम से बोले,—'तुम मालूम तो राजपूत ही पड़ते हो ?

'जी हाँ !' भोज ने कहा।

'आज तुम्हारी बहादुरी देखकर मै बहुत प्रसन्न हूँ। तुमने हमारी लाज रख ली।. .तुम्हे मै अपने सरदार होने का गौरव प्रदान करना चाहता हूँ... क्या स्वीकार है ?'

भोज ने मुस्कराते हुए स्वीकार किया।

'तो आज से ही आप हमारे अतिथि है। परसों के दरबार में आपको यह पद प्रदान किया जायगा।'

धीरे-धीरे भीड छटने लगी। यवन तो मुँह छिपाकर ऐसे भागे कि इस प्राङ्गण मे एक भी दिखाई ही नही पड़ रहे थे।

भोज, बाली और देव महाराज के अतिथि भवन की ओर चले !

जिन अरबी पहलवानों ने इस दंगल में भाग लिया था वे भी अतिथि भवन में ही टिके थे। इसलिए अतिथि भवन के प्रांगण में बहुत से अरबी पहलवान आपस में बातचीत करते दिखायी पडे। भोज को आता देखते ही, वे वहाँ से हट कर अपने-अपने कमरे में जाने लगे। पराजय के अपमान ने उन्हे मुँह दिखाने योग्य नही रखा था। धीरे-धीरे प्रागण उनसे खाली हो गया अब केवल भारतीय पहलवान ही दिखायी पड़ रहे थे।

भोज को लेकर जब भवन का प्रमुख अधिकारी उसका कमरा दिखाने जा रहा था तो मार्ग में ही एक कमरे के बाहर शमीम खड़ी दिखायी दी। वह भोज को देखते ही बोली,—'भोज आज तो तुमने कमाल कर दिया।'

भोज मुस्कराया और खड़ा हो गया। उस अधिकारी और देव को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह औरत कौन है! और इससे भोज का ऐसा परिचय कैसे?

तब तक भोज बोला,—'तुम यहाँ कैसे शमीम?' कदाचित् यह पहला अवसर था जब भोज ने उसे आप के स्थान पर तुम कहा था। वह कुछ विशेष प्रसन्न मालूम पड़ रही थी।

'हबीब भइया के साथ आई हूँ?'

'तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं?

'वे तो नागदा मे ही है।'

'तो क्या हबीव भाई कमरे मे होंगे?'

'हाँ, वह सो रहे हैं।'

'अरे भला इस समय सोना कैसा?' इतना कहकर वह भीतर घुस गया, पर और लोग बाहर ही खड़े रहे।

बाहर देव ने बाली से पूछा,—'भइया क्या बात है?'

'तुम जान नही सकोगे देव, इस माया को।' फिर वह विचित्र ढग से मुस्कराया।

अतिथि भवन का प्रमुख अधिकारी बेचारा बाहर ही चुपचाप ठगा-सा खड़ा था। क्या करे महाराज की आज्ञा थी।

भीतर इस कमरे के बगल में एक दूसरा कमरा भी है। उसमें रास्ता इसी कमरे में से होकर जाता है। भोज ने वहाँ जाकर देखा। हबीब गहरी नींद में सो रहा था। भोज ने जगाना ठीक नही समझा। वह लौटकर पहले कमरे में आया। शमीम ने फिर पूछा—'गॉव कब जाओगे भोज?'

गॉव का नाम सुनते ही तो उसकी आकृति की सारी प्रसन्नता एक दम गायब हो गयी। वह चुप ही रहा। फिर पीडा भरे स्वर मे बोला,—'अब गॉव में कौन है कि जाऊँगा ?'

'क्यों क्या बात है ?'

विवेक के बॉध से ऑसुओं की धारा रोकी नही जा सकती। भोज फूट पडा,—'मेरी मॉ मर गयी शमीम।' अब वह एक क्षण भी वहॉ नही रुका। भरी ऑखें लेकर बाहर आया और बिना रुके सीधे चल पड़ा। उसका जी चाहता था कि कही एकान्त में जाकर सो रहे।

बाली और देव ने उसकी मनःस्थिति का अनुमान लगा लिया। किन्तु वह अधिकारी इस भयानक परिवर्तन से बड़े रहस्य में पड़ा।. .कभी हँसता है और कभी रोने लगता है। बड़ा विचित्र आदमी मालूम होता है यह—उसने सोचा।

कुछ समय के बाद वह अधिकारी अपने सहयोगियो से बातें करते हुए पाया गया—'मुझे तो लगता है वह कुश्ती मिली हुई थी।'

'क्यो ?'

'उस अरबी पहलवान की जो गोरी-गोरी बहन हैं न...उससे इस काल भोज का कुछ. .।'

'अच्छा तभी वह कुश्ती के बीच में चिल्लायी भी थी।'

'तो क्यों नही यह समाचार महाराज के कानो तक पहुँचाया जाय... झूठी बहादुरी पर वह सरदार बनेगा। वह व्यक्ति मुँह बिचकाकर बोला।

'हॉ-हॉ ..जरूर कहना चाहिए, हम लोग मामूली अधिकारी रहे... और वह आज का आया परसों सरदार बनाया जाय।'

× × ×

दूसरे दिन प्रातःकाल तक सभी अरबी पहलवान चले गये थे। राज-पूत लोग थे। पर भोज आज कुछ विचित्र व्यवहार देख रहा था। कल यहाँ के लोग उसे देखकर कितने प्रसन्न होते थे। हर व्यक्ति उससे बात करना चाहता था, पर आज लोग कुछ बदले-बदले से दिखायी दे रहे है। बात करना तो दूर था लोग उसकी तरफ देखना भी नही चाहते। वह घन्टो से घास पर टहल रहा है पर कोई भी इधर नही आया। यहाँ तक कि कल वह राजपूत जो भोज का कन्धे पर उठा कर महाराज के पास ले गया था आज दूर से ही कतरा कर चला गया। भोज समझ न पाया कि बात क्या है ?

आज तीसरे पहर महाराज से मिलने का उसका समय निश्चित था। वे तीनो महल मे इसी उद्देश्य से गये थे, पर प्रहरी ने बाला और देव को द्वार पर ही रोक लिया। जब भोज ने कारण पूछा, तब प्रहरी बड़े ताव से बोला—'महाराज ने केवल आपको मिलने की अनुमति दी है। इन दोनो को नही।'

'पर ये मेरे अपने साथी हैं।'

'साथी हो चाहे जो हो।...मै कुछ नही जानता। केवल आप जा सकते हैं।' उसने बड़ी बेरुखाई से कहा। बातें चाहे कड़ी हो या नम्र, कहने के ढंग पर बहुत निर्भर रहती है। एक साधारण प्रहरी होकर वह इस तरह बोला। भोज को बड़ा दुःख हुआ। लाचारी थी। बाली और देव द्वार पर ही रह गये।

महाराज इस समय विश्राम कक्ष में थे। अपने सरदारों के साथ कुछ मंत्रणा कर रहे थे। भोज ने पहुँच कर साधारण ढंग से नमस्कार किया। निकट बैठे सरदार मुस्करा पड़े। पर महाराज ने अधिक रुख नही मिलाया। तब एक सरदार उठ कर बोला,—'बगल के कमरे में चलकर अभी बैठिए।'

वह उस कमरे मे जाने लगा, फिर अचानक रुक कर बोला—'महाराज द्वार पर मेरे दो साथी और बैठे हैं।'

पर किसी ने उसकी बात पर कुछ ध्यान हो नहीं दिया। वे सब आपस में बातें करते रहे। तब कुछ देर खडा रहकर वह उसी कमरे में चला गया। किन्तु यह बात मन में जरूर खटकती रही कि कल इतनी प्रसन्नता से मिलने वाले महराज आज इतने रूखे क्यो दिखायी दे रहे है।

इस समय महाराज की मत्रणा का मुख्य विषय अरबो का आक्रमण था। कोई ऐसी युक्ति निकालनी चाहिए कि इनका डट कर सामना किया जाय। पर यहाँ बैठे पॉच सरदारो में से तीन लडाई के बिल्कुल पक्ष में नही थे। वे ऐसे चापलूस थे कि सदा महाराज को उनकी तारीफ कर के खुश रखते थे। जब एक सरदार ने कहा कि मेरे विचार से ता आक्रमण रोकने के लिए लडना आवश्यक है तब उस तीन मे से एक बोला—'क्या बात करते है आप भी। महाराज का ऐसा प्रताप है कि लड़ना तो दूर रहा यदि हम लोग उन्हे एक मामूली सी धमकी भी दे दें, तो भी उनका इधर आने का साहस न हो।'

'हाँ यह बात तो है ही। इन मामूलो सैनिकों को कौन कहे, आपके नाम से तो पूरा अरब थर्राता है।' दूसरे सरदार ने तो मक्खन पर जैसे ग्लिसरीन लगा दी।

फिर तीसरे चापलूस सरदार ने भी कुछ इसी तरह की बात कही।

तब पहला अपने को संभालते हुए बोला,—'यह तो ठीक है कि महाराज का बड़ा प्रताप है, किन्तु प्रताप तभी तक रहेगा जब तक कि शक्ति रहेगी।'

'तो क्या आप समझते हैं कि हम लोग निर्बल हैं?'

'नही, हम आपको निर्बल नहीं समझते, किन्तु इतना जरूर समझत हैं कि आप अपने बल का प्रयोग करना नहीं चाहते।'

यह बात उनके मर्म पर आघात कर गयी। तीनों जैसे तिलमिला उठे। उनकी आँखों का रंग बदलने लगा। थोड़ी गम्भीरता छा गयी। तब महाराज स्वयं बोले—'मै मानता हूं कि हमें अपनी सेना तैयार रखनी चाहिए।...हमारा प्रताप तो है ही पर तुम लोग भी तैयार रहो।' अपनी मौंछे ऐंठते हुए बड़े ताव से महाराज ने कहा।

अब इन स्नेही सरदारों का मुँह लटक गया। ये सब केवल ताल ठोकने वाले थे, पर लड़ने से इनकी आत्मा काँपती थी, जब महाराज ने ही लड़ाई का समर्थन किया, तब भला ये क्या बोलते। इनमें से एक ने कहा—'हाँ महाराज आप ठीक समझते हैं, जरूर तैयारी करनो चाहिए, महीपतजी का प्रस्ताव ठीक है।'

'तब फिर निश्चित हो जाना चाहिए कि आप मे से कौन इस बार अरबों का सामना करने जायगा।'—महाराज ने पूछा।

इस समय तो वे तीनो एक दूसरे की आकृति देखने लगे। सरदार महीपत शान्त भाव से बैठा सोच रहा था।

महाराज पुनः बोले—'...यह इस गुप्त मंत्रणा में ही निश्चित हो जाना चाहिए कि इस बार सेना का नेतृत्व कौन करेगा?'

कुछ देर तक दायाँ वायाँ झाँक कर जब कोई रास्ता बचने का उन्हे दीख न पड़ा, तब उनमें से एक ने कहा—'आखिर कल तो आप दरबार कर ही रहे हैं...?...उस नये पहलवान को सरदार बनाने के लिए।

'लेकिन महाराज सुनता हूँ कि वह कुश्ती मिली जुली थी। उसमें उसकी बहादुरी क्या?' महीपतजी बोले।

'पर लड़ने से तो ऐसा नही लग रहा था।'

'हाँ हाँ उसने बड़े साहस का काम किया।' दूसरे ने कहा।

महीपत तो समझता था कि मै जो भी कहूँगा, ये तीनो उसका विरोध अवश्य करेंगे। पर इस विषय मे वे विरोध नही करेंगे, ऐसा वह सोच भी नही सकता था। भला ये नये लोगो को सरदार बनाने का मौका क्यो देने लगे? इससे तो स्वयं इनके लिए खतरा उत्पन्न हो जायगा। .क्या ये सोचते नही '? नहीं, ऐसी बात तो नही हैं। ये अपने मतलब की बातें ही तो पहले सोचते हैं कोई इसमें गूढ बात जरूर है। महीपत सोचने लगा।

'तो उसी दरबार में यह निश्चय कर लिया जायगा कि सेना किसके नेतृत्व में जायगी।'

महाराज ने भी इसे मान लिया। बातें समाप्त हुई। वे लोग उठकर चले गये। जाते समय तीनो ने महिपत को बडे गौर से और कुछ आँखे तरेर कर देखा। उसमे से एक ने तो इतना तक कहा,—'महिपतजी याद रखिएगा हम लोग कभी हार खाने वाले नही हैं।'

इसके बाद महाराज ने भोज को बुलाया और उससे कहा,—'मैंने सुना है कि कल की कुश्ती तुमने मिलकर लडी थी।'

'नही महाराज ऐसी बात तो नही है। कौन कहता था आपसे? भोज ने कहा तो बड़ी नम्रता से पर यह सुनते ही उसका हृदय जल गया।

'मेरे कुछ सरदार कह रहे थे कि...अरबी पहलवान हबीब की बहन से भोज. .का...'

इतना सुनना था कि भोज को जैसे आग लग गयी। बात तो सत्य थी ही। भोज और शमीम इतने कम समय के परिचय में ही एक दूसरे के इतने पास आगये थे, पर उनकी मित्रता इस सीमा तक नही पहुँची थी कि उसका यह अर्थ लगाया जा सके। वह तिनमिनाया तो बहुत, पर सम्भाषण की शिष्टता का उसने परित्याग नहीं किया—'महाराज यह बिल्कुल झूठ है।.. मेरे सामने कोई कहे। मुँह पीछे तो लोग तरह-तरह की बातें करते हैं।...' कुछ रुककर उसने पुनः कहा,—'लोग ऐसे हैं, जो आपके सामने

आकर आपकी तारीफ करते होंगे।. .पर मैंने अपने कान से सुना है आप क्षमा करें तो कहूं.. कि वे ही सरदार मुंह पीछे आपकी गद्दी छीनने का षड्-यंत्र करते हैं। आप तो महल मे रहते है उनकी बातें भला आपके कानो तक क्या पहुंच पायें। मै ता जनता के बीच की बात कहता हूं'—भोज बडे विश्वास से कह रहा था। यो तो दो ही एक दिन उसे यहाँ आये हुआ था, पर वह यहाँ की राजनीति से अच्छी तरह परिचित हो गया था। उसने सुन रखा था कि मागमोरी संदेह का पुतला है। दूसरे उसने भीतर से बैठे-बैठे इन सरदारो की बातें भी सुनी थी। इसी से उसने ऐसी बातें कही।

'उनके षडयत्र का तुम्हे कैसे पता है ?' महाराज ने पूछा।

'महाराज ! एक-एक प्रजा जानती है, एक-एक आपका सैनिक जानता है। कुछ सरदार ऐसे है जो सदा आपकी प्रशसा कर आपको भ्रम मे रखते हैं। ' महाराज बडे गम्भीर हो सुन रहे थे। भोज ने देखा कि मेरी दवा काम कर रही है। वह और भी विश्वास के साथ कहता गया। 'वे सरदार काम नही करना चाहते, लडाई से दूर भागेंगे और इस ताक मे रहेंगे कि अब शत्रु हमला करे और उससे मिलकर आपको उलट दें।'

बस इतना तो बहुत था संदेह की आग जलाने के लिये। राजा गम्भीर चिन्तन में डूब गये। सचमुच यह ठीक कहता है। कहने को तो सब कहते हैं कि आपके प्रताप और पराक्रम के आगे अरबों को क्या हिम्मत है ?' 'पर मै देखता हूं मेरी सेना बराबर हारती जा रही है।— वे सोचते रहे।

फिर भोज ने मौका देखकर अपने विषय में बात छेड़ दी और सारी कहानी संक्षिप्त रुप से कह सुनायी। राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसे ऐसा लगा या तो मै स्वप्न देख रहा हूं या यह जो कुछ भी कह रहा है वह सब झूठ है। उनकी वाणी विस्मय के वेग को संभाल न सकी, वे बोले—'तो तुम स्वर्गीय महेन्द्र के पुत्र हो।'''लेकिन महेन्द्र को तो एक ही लड़का था ?'

'जी हाँ महाराज ?'

'वह तो मारा जा चुका था !'

'नही महाराज ! मै तो जीवित आपके सामने खड़ा हूँ'' 'फिर भोज ने अपनी कहानी के मुख्य अंश पुनः कहे । राजा को जैसे विश्वास ही नही हो रहा था । उसने कहा—'कि तुम कहते हो कि तारा नामक ब्राह्मणी ने मेरा पालन किया था' पर मैंने सुना है कि वह तो बहुत पहले ही कुएं मे गिर कर मर चुकी थी ।' 'यह क्या है ? मेरी समझ मे तुम्हारी बातें आती नही है ।'

'नही महाराज आपने झूठ सुना है ।'

'मै कैसे तुम्हारी बातें मानूं । मुझसे सत्यनारायण पुरोहित ने कहा था कि वह भी मर गयी ।'

अब भोज बड़ा चकराया कि आखिर पुरोहित जी ने कैसे कहा ? फिर कुछ सोचकर बोला—'इसमे कोई राजनीति रही होगी महाराज' ' पुरोहित जी तो यह सब जानते है । वे ऐसा नही कह सकते ।'''माँ कहती थी' '''

'कौन माँ ? तुम्हारी मां भी तो मर चुकी ?'

'मै तारा को ही अपनी माँ समझता हूँ । उसी ने तो मुझे पाला पोसा । कौन सा दुःख नही सहा ? कहाँ कहाँ की ठोकर नही खायी '' लेकिन फिर भी मुझे छोड़कर चली गयी' ।' इतना कहते कहते उसकी आँखे छलछला आयी । 'अब तो महाराज मेरा इस संसार मे कोई नही रहा । एक वही माँ थी । पर यहां आते समय रास्ते मे उसे भी साँप ने काट लिया और चली गयी ।' फिर वह भीतर ही भीतर सिसकने लगा और सिर नीचे किये बैठा रहा । महाराज ने समझाते हुए कहा—'घबराते क्यो हो ?'' इस ससार मे अभी मै तो हूँ । तब तुम अपने को अकेला कैसे अनुभव करते हो ?'

• भोज विषण्ण मुख शान्त बैठा रहा। महाराज समझाते जाते थे। फिर उसे याद आया। उसने अचानक कहा—'महाराज मेरे दो साथी अभी बाहर ही बैठे हैं ?'

'ओ तुमने पहले क्यों नही कहा ?' उन्होंने अत्यन्त अपनत्व दिखाते हुए कहा।

भोज क्या कहे, कि मैंने कहा था और आपने ध्यान ही नही दिया ? किन्तु वह कुछ नही बोला।

'अच्छा, तुम आज जाओ। कल दरबार में तुम्हे प्रथम श्रेणी के सरदार का पद मिलेगा।...और मै तुम्हारे पुरोहित जी को भी बुलाने के लिए आज आदमी भेजूंगा।' 'उनसे समझू' कि आखिर बात क्या है ?'

नमस्कार कर भोज चला गया।

मानमोरी को कोई पुत्र नही था। उनको तो इसका विशेष दुख भी नही था, पर महारानी सदा चिन्तित रहती थी। वस्तुतः नारी को पुत्र प्राप्ति की इच्छा उतना दुःख नही पहुंचाती जितना माँ बनने की सुखद कल्पना। तभी तो गोद लिए पुत्र से भी माँ कहलाकर वह अपना जीवन कृतार्थ करती है। यह उसकी कमजोरी नही है, वरन् उसके मन की बुभुक्षा है। जब महारानी ने भोज को देखा तब इसी बुभुक्षा की तृप्ति ने उन्हे गद्गद् कर दिया, वह महाराजा से बोली—'बडा अच्छा हुआ कि एक लड़का तो घर में आ गया।'

पर जब भोज से वे मिली। तब तो नही पुरानी बातो की जैसे झड़ी लग गयी। भोज संक्षिप्त उत्तर देता रहा। उन्होंने कहा—'भोज जब तुम

एक साल के थे, तब मैने तुम्हे देखा था ˙मै स्वयं ईडर गयी थी। और अब तो तुम बिल्कुल पहचान ही मे नही आ रहे हो।'

'कितने दिन बीत गये भला कोई किसी को क्या पहचान सकता है ?˙ न आप मुझे पहचान सकती है न मै आपको पहचान सकता हूं ˙˙।' इतना कहकर भोज हंसने लगा। महारानी जी भी मुस्करायी।

˙ 'चलो यह भी अच्छा हुआ कि तुम मेरे यहॉ प्रथम श्रेणी के सरदार हो गये˙˙˙आज कहो तुम्हारी मॉ होती या नन्दोई जी जीवित होते।' इतना कहकर वह भोज की आकृति देखने लगी। पर इस बात से उस पर कोई प्रभाव नही पड़ा। उसे न अपने मॉ की याद थी, न बाप थी तब भला वह क्यों इनकी स्मृति से दुखी होता। उसे तो बस एक तारा को ही स्मृति थी। जब भी परिवार की बात चलती तो उसे तारा याद आ जाती।

पुनः महारानी जी ने बात बदलते हुए कहा—'अरबो का सामना करने तो तुम्ही सेना लेकर जाओगे न ?'

'हॉ मामी जी, निश्चय तो यही हुआ है'˙ पर मै चाहता हूँ कि मेरे साथ दो चार सरदार और भी रहे क्योकि मेरे लिए सैन्य संचालन का यह प्रथम अवसर है। लड़ूगा मै ही पर यदि और लोग रहते तो बडा अच्छा होता। कैसा पडे कैसा न पडे।'

'हॉ यह तो ठीक ही है। तुमने अपने मामा से कहा ?'

'कहा तो नही पर सोचता हूं कि कहकर करूंगा क्या ? कोई भी सरदार जाने के लिए तैयार नही है।' वह थोडा चिन्ता भरे स्वर मे बोला।

'क्यो नही जायेंगे ? आखिर सरदार कैसे ? .तुम्हे कैसे मालूम कि वे नही जायेंगे।' रानी जरा झटकते हुए बोली।

'मै सबकी नस-नस पहचानता हूँ मामी जी।. .देखिए यदि यही दशा रही तो साल के भीतर ही क्या हो जाता है।'

'तुम्हारा मतलब ?'

'मतलब अब मै क्या बताऊँ ? .समय सब बता देगा।...भविष्य का तो वर्तमान से ही अनुमान लग सकता है। मामा जी किसी भी सरदार ` युद्ध पर जाने को कहकर देखें वह क्या कहता है ?'

'कहेगें क्या ? उन्हे जाना ही पडेगा।'

'और मै कहता हू कि वे नही जायेंगे।' भाज बडे विश्वास से कह रहा था—'आज वे महाराज की एक भी आज्ञा मानने में आना कानी करते हे।. .सबके सामने तो अपना अपना स्वार्थ है। वे सोचते है कि कोई मौका मिले और गद्दी हमारे हाथ आवे।'

महारानी बडे गौर से सोचती रही। उन्हे ऐसी स्थिति का पहले से ही आभास हो गया था। इसीलिए भोज ने जो कुछ भी बढा चढाकर कहा उस पर वह विश्वास कर गयी। फिर वह बड़ी चिन्ता के साथ बोली,—'तुम्हारा जाना तो निश्चित है न ?'

'हाँ मै तो अवश्य जाऊँगा।. .सोचता हूँ कि पुरोहित जी आनेवाले है उनसे मिल तो लूँ।'

'कब आ रहे हैं वो ?'

'उन्होंने आने को तो आज ही कहलाया था।'

घुन भले ही काठ को समाप्त न कर सके पर सन्देह सदा विश्वास को समाप्त कर देता है। भोज ने राज परिवार में सन्देह का घुन लगा दिया। महाराजा का सरदारो पर से विश्वास उठ गया था और सरदारो का महाराजा पर से। एक ओर अरबों का निरन्तर बढाव था दूसरी ओर राजा और सरदार के बीच मन मुटाव बढ चला। पश्चिम से तूफान आ रहा था पर नाव पर बैठे लोगो ने ही पाल की डोरी काट दी।...और

पुरोहित सत्यनारायण-उसने तो पाल के कपड़े को ही जला देने की चेष्टा की। फिर नाव को उलटने से कोई भी शक्ति रोक ही नही सकती थी।

पुरोहित जी अकेले नही आये, वह तो पूरी बरात लेकर आये थे। जादव, गमेती, प्रभू, चम्पा औ मूँगा सभी साथ थे। पहले ये लोग भोज से ही मिले। देखते ही वह खिल उठा और सबका उचित अभिवादन करने के बाद बोला—'आज तो पूरी बारात लेकर चले, पुरोहित जी।'

'हाँ अब बारात क्यों नही कहोगे। बड़े आदमी हो गये न।' जादव बोला।

भोज के चेहरे पर झेंप आ गयी। उसने अनुभव किया कि ऐसा कहना नही चाहिए, फिर चम्पा की ओर संकेत कर गमेती से उसने कहा,—'इसे क्यों ले आये काका। दोहन काका की गाय कौन दूहेगा? गोबर कौन उठाएगा?' लोग हँस पड़े। चम्पा की आकृति पर लज्जा की ललाई दौड़ गयी।

फिर गम्भीर बातें होने लगी। तारा की मृत्यु का समाचार पाकर सभी दुखी हुए। जादव और गमेती की तो आँखें जैसे भर्रा आयी। पुरोहितजी ने चिन्ता भरे स्वर में कहा 'कोई क्या करेगा? विधाता के आगे किसी का कुछ नही चलता।.. और तारा तो अपना काम समाप्त कर चली गयी। .ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति दें।' सब कुछ समय तक मौन ही रहे।

फिर भोज ने उठकर कमरे के बाहर देखा कि कोई है तो नहीं और भीतर आकर यहाँ की राजनीति के सम्बन्ध में बातें करने लगा। उसने यहाँ जो कुछ सुना था, जो देखा था, महाराज और महारानी से जो जो बाते हुई थी, वे सब उन लोगो को बता दिया। पुरोहितजी ने सुनने के बाद बड़ी प्रसन्नता से कहा,—'बड़ा अच्छा किया तुमने, अब तुम राजनीति के दाँव पेंच समझने लगे हो।...घबराओ मत। मै भी तुम्हारी हो

लगत्यो आँग को भड़काऊँगा, फिर सामने टँगे एक चित्र का बड़े ध्यान से देखता रहा। पुनः विचार करते हुए बोले—'स्थिति तो ऐसी जरूर है कि सफलता बहुत जल्दी मिल जायगी। तुम महाराजा के मनमें सन्देह दृढ करते रहो ..मै सरदारो के मन मे दूसरा सन्देह पैदा करता हूँ।'

'किन्तु पुरोहित जी!...इस समय यदि कुँवरजी को ईडर ले चला जाय तो भी सफलता मिल सकती है।' मूँगा बोला।

'क्या बात करते हो? इतना प्रतापी सिंहासन छोड़कर हम कुँवरजी को ईडर ले जायेंगे? हीरा फेंक कर काँच नही उठाया जाता मूँगा।' तब वह भोज की ओर देख कर बोले,—'यदि महाराज मिल सकें तो मै आज ही उनसे बाते कर लूँ।'

'मिलेंगे क्यों नही?'

'फिर मै सरदारो से मिलूँगा और दो तीन दिनों मे ही मै उनमें यह भावना भर दूँगा कि राजा तुम्हारी बात नही मानता। वह तुम पर विश्वास नही करता?...और देखो भोज! तुम अपनी सारी प्रतिभा लगाकर महाराज के मन में यह बात बैठा दो कि आप जो कहेंगे सरदार उसका अवश्य विरोध करेंगे?' इस समय वृद्ध पुरोहित की आँखो से अनुभव का प्रबल वेग जैसे फूटा पड रहा था। उनकी गड्ढो तथा झुर्रियो से भरी आकृति जहाँ उसकी महान दार्शनिकता का परिचय दे रही थी वहाँ उसकी राजनीतिक की कुटिलता का भी अनुभव करा रही थी।

उहोंने अन्य लोगो ओर सम्बोधित कर कहा—'आप लोगो का काम केवल प्रजा मे रहेगा। राज दरबार मे नही।'

'लेकिन महाराज यह सब काम आप बडी जल्दी मे सोच रहे हैं।' भोज बोला।

'लगता है तुमपर तारा का पूरा प्रभाव आगया है, वह भी सदा समय समय चिल्लाती रही।...पर उसका जीवन समाप्त हो गया और समय नहीं

आया ।...भोज राजनीति समय से नही बुद्धि से होती है । परिस्थिति का उसमें महत्व अवश्य है, पर वह भी बुद्धि से ही अपने अनुकूल बनायी जा सकती है ।'

'तो क्या आपको पूरा विश्वास है कि यह सिंहासन शीघ्र ही हस्तगत हो सकता है ?' भोज ने पूछा ।

'शीघ्र ही नहीं, मुश्किल से बीस पच्चीस दिन में ।'

'क्या बात करते हैं पुरोहित जी, ऐसा यह बच्चो का खेल नही है ।' भोज बोला ।

'बेटा, अभी तुम बच्चे हो । क्या कहूँ ? जब अट्ठारह दिन में महाभारत हो सकता है तब चित्तौड़ की गद्दी नही मिल सकती ।' इतना कहना था कि बाहर किसी के आने की आहट लगी । भोज ने दौड़कर देखा एक सैनिक घूमता इधर चला आया था फिर वह चला गया उसका कोई विशेष प्रयोजन नही था ।

फिर बातें आरम्भ हुई । पुरोहितजी ने भोज से कहा,—'तुम जरूर युद्ध में जाओ. .मेरा विश्वास है कि तुम्हे अवश्य सफलता मिलेगी ।.. लेकिन १०-१५ दिनों के बाद ही प्रयाण की तिथि निश्चित करो । देखो बीच मे हवा का रुख क्या होता है ..पर इस बीच महाराजा से बराबर कहो कि मै जरूर युद्ध पर जाऊँगा ?'

'पर यदि सरदार पूछें तो ?' भोज बोला ।

'तो उनसे कहो कि क्या करूँ, भाई मेरी तो जाने की रंच मात्र इच्छा नही है । यह मौका भी युद्ध का नही है पर महाराजजी कह रहे है. . देखिए क्या होता है !' भोज मन ही मन मुस्कराया ।

'अच्छा महाराज अब हमारे काम का भी निर्णय हो जाना चाहिए ।' जादव ने कहा ।

'मैंने कहा न कि आप लोगों का काम प्रजा में है। प्रजा में ऐसी भावना भर देनी है कि राजा अयोग्य है। सरदार उसकी आज्ञा नही मानते। ऐसा यदि शासक रहा तो अरब वाले तुम लोगो को लूट लेंगे।' और अगर कही यह बात फैल जाय कि यह अरब वालो से मिला है तब तो मजा आ जायगा।'

'पर यह बात फैलाने के लिए आधार क्या है?'—गमेती ने कहा।

'आधार क्यो नहीं है। अरब वालो को वह बराबर अपने समारोहो में बुलाता है यदि उसकी दोस्ती न होती तो क्यो बुलाता?'

सब पुरोहितजी की बुद्धि का लोहा मान गये। तब भोज ने चम्पा की ओर संकेत कर कहा,—'सबके लिए तो आपने काम बता दिया। अब कुछ इसके लिए भी बता दीजिए।' इतना सुनना था कि पुरोहितजी ने चम्पा की ओर देखकर माथा ठोका और बोले,—'अरे बडी गलती हुई हमारा तो ध्यान ही इधर नही था?' उनकी वाणी में थोड़ी चिन्ता की झलक थी।

'क्या हुआ पुरोहितजी ऐसा क्यों?' गमेती ने पूछा।

'बड़ी गलती हुई भाई, नारी के सामने राजनीति की बात करना कागज पर आग जलाना है, क्योंकि उसके पेट में कोई बात पच ही नही सकती।'

'चलिये-चलिये, मै भला किसी से कुछ कहने जाती हूँ!' अब तक शान्त बैठी चम्पा ने थोड़ा नखरे से कहा, फिर पुरोहितजी थोड़ा उतावले पन में बोले—'अच्छा अब आप जाइए, नगर में अपना काम अभी से ही शुरु कर दीजिए।'

'अरे इतनी जल्दी क्या है। अभी कल ही तो आप लोग आये हैं'''
भोज बोला।

'तो क्या मै कोई हल जोतने को कह रहा हूँ।.. लोग शहर में घूमे-फिरे आनन्द लें। पर जहाँ मौका मिले वहाँ चिनगारी फेंकते चलें।... और चम्पा तुम भी जाओ घूम आओ लेकिन जरा ध्यान रखना यहाँ की एक बात भी न फूटे।'

'आप मुझपर ही क्यों सन्देह करते हैं पुरोहितजी।' वह उठकर बोली। उसके कहने के ढंग पर सबको हँसी आगयी। लोग तुरन्त चलने लगे। चलते समय जादव ने भोज से प्रभूकी ओर संकेत करके पूछा—'भोज उन्हे पहचानते हो ?'

भोज ने बड़ा सोचकर नकारात्मक ढग से सिर हिलाया।

'भला अब कुंवरजी क्या पहचानेंगे।'—प्रभु ने कहा।

'तारा होती तो इन्हे अच्छी तरह पहचानती! जब तुम्हे लेकर तारा भागी आ रही थी और लोग उसका पीछा कर रहे थे, तो इन्ही ने अपनो बुद्धि से तुम दोनो की रक्षा की थो।' जादव ने परिचय दिया।

भोज ने हाथ जोडकर नमस्कार करते हुए कहा—'क्षमा कीजिए काका, अब कभी नही भूलूंगा।' प्रभू का रोम-रोम विहँस पडा।

इसके बाद सब चले गये। भोज और मूंगा को पुरोहितजी ने रोक लिया था। इन तीनो में अब अत्यन्त गुप्त मंत्रणा होने लगी।

'एक काम मूंगा सोचता हूँ, जो तुम्ही कर सकते हो।'—पुरोहितजी ने कहा।

'क्या महाराज ?'

'अच्छा एक बात सही सही बताना।' 'महाराजा महेन्द्र की हत्या में तुम्हारा हाथ था कि नही ?'

'जरूर था महाराज। कैसे कहूँ ? उस पाप की कालिमा तो कभी नही छूट सकती।' इतना कहकर उसने बडी नम्रता से अपनी लाचारी प्रकट की।

'लेकिन पाप की कालिमा प्रायश्चित से धुल जाती है ।'

'तो बताइए प्रायश्चित, पुरोहित जी ।'

'लेकिन समझ लो । पाप जितना भयानक होता है, प्रायश्चित उतना ही कठोर होता है ।'

'बताइए कौन सा प्रायश्चित करूं ? मै कठोर से कठोर प्रायश्चित करने को तैयार हूँ ।'

'तो क्या तुम मानमारी की हत्या कर सकते हो···और वह भी जैसे मै कहूं वैसे ?

मुंगा सोचने लगा । भोज ने कहा,—'नहीं पुरोहितजी यह हत्या-वोत्या का तो मै पक्षपाती नही हूँ !'

'तुम पागल हो भोज ! राजनीति बुद्धिजन्य चाणक्य की कठोरता चाहती है, महाकवि कालिदास की भावनामय भावुकता नही ।'

भोज इतना सुनकर चुप हो गया, इसलिए नही कि उसके पास इसका उत्तर नही था, वरन् इसलिए कि वह पुरोहित का बडा सम्मान करता था और उनकी किसी बात का भी उत्तर भरसक नहीं देता था !

तब गम्भीरता पूर्वक विचार करते हुए उन्होंने इतना ही कहा—'अच्छा देखो मै ऐसी युक्ति सोचूंगा कि हो सकता है हत्या न करनी पड़े और काम भो बन जाय ।'

फिर वे उठकर चलने को हुए क्योंकि आज ही उन्हे महाराज से मिलना था । चलते समय ही भोज ने एक प्रश्न और पूछ ही दिया जो उसके मन में बडी देरी से चक्कर काट रहा था—'आपने तो कहा है कि प्रयाण की तिथि बाद में रखी जाय, पर मान लीजिए महाराज ने नही माना तब ?'

'मानेंगे क्यों नही ? कहना अभी तारा माँ के मरे महीने भर भी नहीं हुआ है 'मैं कैसे जाऊँ ।' भोज को पुरोहित जी की बुद्धि की प्रखरता पर हँसी आ गयी ।

× × ×

कुछ ही दिनों में परिस्थिति बिल्कुल बदल गयी । पुरोहितजी की लगायी आग अच्छी तरह सुलग गयी थी केवल भभकने की देर थी । सरदार राजा के एक दम विरुद्ध थे । प्रजा में व्यापक असंतोष था । कल जब महाराज की सवारी निकली थी तब न तो पहले जैसी दर्शकों की भीड़ थी और न पहले जैसा जय जयकार । श्रद्धा और पूजनीयता को कौन कहे सभी घृणा की दृष्टि से देख रहे थे । 'यह राजा है, देखो कैसा इसके सिर पर पाप सवार है,। आकृति देखो दिन पर दिन श्रीहीन होती चली जा रही है । 'अरे अरबों से मित्रता करली है न । ''अब तो मेवाड में वह होगा जो कभी नही हुआ है ।'''राजपूत अरब वालों का चरण पखारेंगे । ' इसी प्रकार की बातें हो रही थी, जब महाराज की सवारी जा रही थी । मानमोरी का वह भी जमाना था जब प्रजा क्या बड़े से बड़ा सरदार भी नजर उठाकर ताकता तक नही था । आज यह हालत हो गयी । उन्होंने महल में आकर भोज से इसका कारण पूछा, क्योंकि अब इस संसार केवल भोज ही उनका विश्वास पात्र था । उसने तुरन्त दवा की एक मात्रा और दी—'महाराज यह सब आपके सरदारों की कृपा है ।'

ऐसी स्थिति में दरबार हुआ । दरबार की पहली सूचना सर्वसाधारण के लिए नही थी, पर पुरोहित जी ने महाराज से निवेदन किया कि जब इस दरबार में युद्ध सम्बन्धी ही विचार होगा, तो क्यों न इस दरबार को सब के लिए खुला रखा जाय । युद्ध का सम्बन्ध तो प्रजा से भी है । महाराज ने पुरोहित की प्रार्थना स्वीकार कर ली । किन्तु इसमें भी

पुरोहित की चाल थी। वह चाहता था कि प्रजा भी देख ले कि आज राजसत्ता कितनी निर्बल हो गयी।

दरबार हुआ। सभी सामन्त सरदार उपस्थित हुए। प्रजा भी अधिक संख्या में आयी थी। सैनिक भी थे। यह अपने ढंग का विचित्र दरबार था। पहले महाराज के आते ही सन्नाटा छा जाता था, पर आज महाराज कब आये कब बैठे? किसी-किसी को मालूम हुआ और किसी को मालूम भी नही हुआ। सब आपस मे ही 'चों-चों' करते रहे।

जब महामंत्री खड़े हुए तब कही जाकर शान्ति हुई। महाराजा की एक ओर सभी सरदार बैठे थे और दूसरी ओर मान्य अतिथिगण। भोज सरदारों के बीच था तथा पुरोहितजी समेता-जादव आदि अतिथियो मे थे।

महामंत्री ने आज का कार्यक्रम सुनाया तथा महाराज की इच्छा बताते हुए कहा—'महाराज चाहते है कि इस समय अवसर अच्छा है! अरब वालों पर आक्रमण कर दिया जाय। आप लोगो की क्या राय है?'

तब तक सरदारो के बीच मे एक सरदार उठ खड़ा हुआ और बड़े रोब से बोला—'पर मेरी राय से यह अवसर आक्रमण करने का नही। पहले उन्हे ही आक्रमण का मौका दिया जाय।'

'हाँ हाँ, यह अवसर आक्रमण का नही है।' यह आवाज दूसरे सरदार की थी।

'क्या आप बता सकते है कि यह अवसर क्यो नही आक्रमण करने का है?' महाराज ने पूछा। सभा मे थोड़ी गम्भीरता आयी।

दूसरा सरदार बोला,—'क्या आप यह बता सकते हैं कि क्यो यह अवसर आक्रमण का है?'

इस सरदार के बोलने का ढंग तो अशिष्ट था। महाराज एक दम भड़क पड़े,—'देखता हूं कि आप सब आलसी होने के साथ ही साथ दुर्विनीत भी होते जा रहे हैं।'

'आप सब को मत कहिए महाराज। जिसने आपको कहा हो उसे ही आलसी और दुर्विनीत कहिए।' उन्ही में से एक अन्य-सरदार ने कहा।

'चुप रहो।' महाराज सिंह की भाँति तड़पे। उनकी आँखें क्रोध से लाल हो गयी।

'तड़पने से काम नही चलेगा महराज। यह सोचने का विषय है—एक ओर तो आप अरब वालों से मित्रता करते हैं और दूसरी ओर उन पर चढाई की बात भी सोचते हैं। इसमे कोई दुरभिसन्धि तो नही है।' यह आवाज एक सामन्त की थी। पुरोहित जी देख रहे थे कि उनकी औषधि ने अच्छा काम किया है। भोज भी अनुभव कर रहा था कि उसकी लगायी आग पूरे तेजी पँर है।

महाराज क्रोध से आपे के बाहर हो रहे थे—'बकवाद मत करो। मेरी बात सुनो। अन्यथा .' इसके आगे महाराज कुछ कहने ही वाले थे कि मान्य अतिथियों के बीच से तुरन्त महाराज को रोकते हुए पुरोहित सत्यनारायण जी खडे हो गये। वृद्ध की गम्भीर आवाज तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण उसके खडे होते ही जनता शान्त हो गयी। उन्होने बोलना प्रारम्भ किया,—'प्रातःस्मरणीय चित्तौड नरेश, पराक्रमी सरदारों एवं मित्रों, मै तो आपकी सभा में अतिथि के रूप में हूँ, पर कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। आप क्षमा करें। मै देख रहा हूँ कि महाराज इस समय अत्यधिक अप्रसन्न हो गये है। हो सकता है कि प्रजा या सरदारों ने कोई गलती कर दी हो। पर इस पर महाराज को ध्यान नही देना चाहिए। प्रजा तथा राजकर्मचारी तो राजा के सामने पुत्र की भाँति होते हैं। पुत्र की गलती पर पिता नाराज नही होता। उसे समझाता है, उसके पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देता है। अतएव महाराज से मै हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूँ कि सरदार जो भी प्रश्न पूछते हैं उसका उत्तर दीजिए। उन पर अप्रसन्न मत होइए ..।'

'हाँ हाँ उत्तर दीजिए। आज हम आपसे पूछने ही आये हैं।' प्रजा के बीच ही से तेज आवाज आयी।

पुरोहितजी ने अपने भाषण मे दोहरी मार की थी। एक ओर अपनी विनम्रता से महाराज को भी प्रसन्न करने की चेष्टा की थी दूसरी ओर प्रजा और सरदारों के मन की बात कही थी।

इतना होने पर भी दरबार ठीक रूप से चल न सका। हो हल्ला हो गया। प्रजा और राजकर्मचारियों ने महाराज का घोर विरोध किया। महाराज स्वयं आवेश में आकर दरबार से जाते हुए बोले 'आक्रमण के लिए सेना जायगी, अवश्य जायगी और कल ही जायगी।'

'कभी नही जा सकती. जब तक आप पट के पीछे अरबों से मिलते रहेंगे।' प्रजा चिल्लायी।

तब परोहितजी ने पुनः उठकर भाषण किया। उनके भाषण का मुख्य अंश यह था.. 'महाराज ने यदि आज्ञा दे दी है तो आप विरोध न करें, क्योंकि आपको राजा से अधिक राजसिंहासन का सम्मान करना चाहिए। इस सिंहासन पर जो कोई होगा उसकी आज्ञा मानना आपका पुनीत कर्त्तव्य है। ..इसलिए यदि आप मेरी एक बात मानें, तो कहूँ. ..'

'हाँ हाँ कहिए, जरूर कहिए।' प्रजा बोली।

'...तो आप सेना जाने दीजिए।. .यदि सरदारों की इच्छा जाने की नहीं है तो कोई मत जाइए। मैं केवल भोज से—जो यहाँ के नये सरदार हैं—उनसे प्रार्थना करूँगा कि यदि वे उचित समझें तो सेना का नेतृत्व करें।'

भोज को मौका मिला। उसने झट उठकर कहा,—'वृद्ध मान्य अतिथि की आज्ञा भला मैं कैसे टाल सकता हूँ। वे जो कहेंगे, सब मुझे स्वीकार करना ही पड़ेगा।'

दरबार ने इस निर्णय को एक मत से मान लिया। इस दरबार से चित्तौड पर पुरोहित सत्यनारायण की धाक जम गयी।

× × ×

पुरोहित जी अपने साथियों के साथ अतिथि भवन में टिके। दूसरे दिन सूर्य निकलते-निकलते वे मूंगा को लेकर पुनः भोज के निवास स्थान पर पधारे। भोज सध्या पूजन से निवृत्त तो हो चुका था पर उसकी तबीयत कुछ खराब थी वह विस्तर पर लेटा लेटा कुछ सोच रहा था। बोली और देव स्नान करने गये थे।

पुरोहितजी को आता देखकर वह उठ बैठा। उनकी आकृति से व्यस्तता टपक रही थी लगता था अभी तक पुरोहितजी ने स्नान भी नही किया है। उनके बैठते ही भोज ने पूछा—'आज अभी स्नान नही हुआ क्या पुरोहितजी ?'

'स्नान. मेरा स्नान उस दिन होगा, जिस दिन मै तुम्हारा अभिषेक करूँगा।' इतना कह पुरोहितजी हॅस पडे। भोज ने देखा कि धुन सी लग गयी है अब वे इसके अतिरिक्त कुछ सोचते ही नहीं हैं।

फिर उन्होने मतलब की बात आरम्भ की और भोज से कहा—'आज तो तुम्हारे युद्ध के लिए प्रमाण करने से पहले ही मै चला जाऊँगा।'

'क्यो महाराज, कहाॅ चले जायँगे ?'

'नागदा जाऊँगा तुम्हारे ही काम के लिए।'

'आखिर उस काम की क्या जल्दी है ?'

'मुझे अब अनुभव हो रहा है कि तुम कुछ भी नहीं जानते।' वे थोड़ा झुंझलाये पर बोलते रहे—'राज्यारोहण के लिए यह आवश्यक है कि तुम विवाहित हो।'

इतना सुनते ही भोज चुप हो गया। नही तो सम्भव था कि वह मालंकी राज की प्रतिज्ञा बता कर उन्हे रोकता भी।

'तो मै तुम्हारा और मूंगा का कुछ कार्यक्रम बना देना चाहता हूँ आशा है कि तुम इसी के अनुसार कार्य करोगे। दोनो आदमी याद रखो, यदि तुम लोग जरा भी इसके अनुसार नही चले और जरा भी असावधानी की, तब सब कुछ साचा समझा केवल सपना रह जायगा।' फिर उन्होने भोज से पूछा,—'तो आज तीसरे पहर ही जाओगे न ?

'जी हाँ।'

'तो इसके पहले सभी सरदारों के यहाँ जाकर मिल लो और कहो कि क्या करूं मै तो नही जाना चाहता पर ऐसी स्थिति मे फंस गया हूं कि जाना पड़ रहा है। आप आशीर्वाद दें..।'

'मै सब सरदारो के यहाँ नही जाऊँगा। उनमें से कुछ तो बड़े कुटिल है ?'

'क्या बच्चो जैसी बातें करते हो भोज! राजनीति का पौधा कुटिलता की खाद में ही पनपता है। तुम जब कहने लगोगे वह तुमसे कुछ छीन थोड़े ही लेगें।...नाराज यदि होते हैं तो होने दो...।' भोज शान्त हो गया। पुरोहितजी ने पुनः कहा,—'इसके बाद तुम महाराजा और महारानी से मिलना। महाराज से तो कुछ विशेष कहना नही है, पर महारानी से चरण छूकर कहना,—'मामीजी जा रहा हूँ किन्तु बडा दुःख है। युद्ध मैं जाने का नही, चित्तौड़ छोड़ने का पता नही सब लोग मामा के साथ कैसा व्यवहार करें।...और फिर तुम्हारी आँखो में पानी आजाना चाहिए।'

'लेकिन महाराज जहाँ तक कहने और करने का सवाल है मै वह सब कर दूँगा...पर आँखों में पानी आजाय यह तो मेरे वश का नही।' —भोज बोला।

'जब तुम आँसुओ को वश मे रख नही सकते तब इतनी बड़ी प्रजा को कैसे वश मे करोगे।'.. तुम्हे सब कुछ करना पड़ेगा, और तुम करोगे भोज।' पूरे विश्वास के साथ उन्होने भोज को आज्ञा दी और बोलते रहे—'सन्ध्या को जब सेना प्रयाण करेगी तब चित्तौड़ की जनता तुम्हे कुछ दूर तक बिदा देने जायगी। तब उनके सामने तुम्हे एक भाषण भी देना है। मै वह भाषण लिख कर लाया हूँ।' इतना कहकर उन्होने कमर से निकाल कर एक पत्र भोज के सामने फेंक दिया और बोले—'इसे अच्छी तरह पढ लो। बिल्कुल यही बातें तुम्हे कहनी है अपने भाषण मे।. मैने मुख्य बातो के नीचे रेखा बना दी है जरा उसे जोर से पढो ता। .'

भोज पढने लगा,—'मेवाड़ की भूमि हमारी भूमि है हम जीवित रहते उसका अपमान नही देख सकते। . .हम अपने लिए नही आपके लिए युद्ध में जा रहे है। . आज चित्तौड़ की आर्थिक स्थिति बड़ी खराब है, पर आप घबराये नही मै अरब वालो को लूट कर ले आऊँगा। वह सब राजकोष मे नही जायगा सब आप में बाँट दिया जायगा। .जब आपही प्रसन्न नही तब राजा सुखी रह कर क्या करेगा। आप हमें आशीर्वाद दें।'

'बस इन मुख्य बातो को कण्ठ कर लो ।. .और सुनो। अब तुम सुनो। मुझसे और महाराज से कल रात और आज उषाकाल में कई घण्टे तक बातें हो चुकी है।. . . उनके मन में यह विश्वास अच्छी तरह बैठ गया कि सरदार हमारे बहुत विरुद्ध है। जरूर कोई न कोई षड्यन्त्र मुझे हटाने का ये सोचते है।. इसलिए आज से तुम उनके प्रधान अंगरक्षक बना दिये जाओगे।—सदा तो तुम्हे उनके साथ रहना पड़ेगा। यदि कभी वह कहीं जाने को कहे तुम यही कहना—महाराज शासन की दशा देखते हुए मैं आपको कभी छोड़ नही सकता। यदि कुछ हो जायगा तो हमपर ही कलंक लगेगा कि

कैसा था वह अंगरक्षक ?···लेकिन इतना ही नही। इसके साथ और भी एक काम करना है।···सोते समय महाराज के शयन कक्ष के बाहर तुम्हे पहरा देना होगा। पर हर मध्य रात्रि मे जब बिलकुल सुनसान हो जाय और कोई दिखायो न पडे। तब तुम झूठ हो चिल्लाया करना—अरे वो आये थे तलवार लिये थे···अब मै अकेले पहरा नही दूंगा महराज! पूरा नाटक करना। किन्तु याद रखना तुम्हारी चिल्लाहट महाराजा और महारानी के अतिरिक्त दूसरा कोई न सुन सके। नही तो फिर रहस्य खुल जायगा।···मै देखना चाहता हूँ कि तुम कितना अधिक महाराजा को भयभीत कर देते हो यह सब तुम्हारी बुद्धि और अभिनय पर ही निर्भर है।·· और रोज की सूचना जादव को देना। वह नगर में प्रचारित करता रहेगा कि महाराज की हत्या होनेवालो है। जनता में आतंक छाता जायगा प्रजा महाराज को निर्बल भी समझेगी।

'मै देखता हूँ कि पुरोहित जी जहाँ दर्शन और राजनीति की उत्तम शिक्षा देने के लिए ही प्रसिद्ध थे, आज वह अभिनय की भी शिक्षा दे रहे है।'

'भोज यदि अभिनय न जानता तो तुम इतने बड़े न होते!···और इतिहास भी देख लेगा। जिस राजपुरोहित ने काल भोज के प्राणों की रक्षा की थी, उसने अपने अभिनय के बल पर ही उसे राज भी दिलाया' अच्छा, भोज अब तुम से मै इधर नही मिल सकता। कुछ मुझसे पूछना तो नहीं है?...और हाँ बाली और देव को अपने साथ युद्ध में लेते जाना।

'कुछ पूछना नहीं है महाराज।' और भोज ने उनके चरण छुए। उन्होंने आशीर्वाद दिया।

अपने जीवन में आज भोज ने अनुभव किया था कि महत्वाकांक्षा कितनी निष्ठुरता में पलती है।

४

रात आधी से अधिक जा चुकी थी। गहरी शान्ति की थरथराती चादर के नीचे नागहद काँपता सो रहा था। पूरा गाँव एक दम शान्त पडा था। न आदमी की आहट मिलती थी और न आदमजात की। इसी समय एक वृद्ध अश्वारोही ज्योतिषाचार्य के द्वार पर आकर रुका और घाडे से उतर कर उनका द्वार खट खटाने लगा।

ब्रह्म मुहूर्त मे उठने वाले और विलम्ब से सोने वाले ज्योतिषीजी इस समय गहरी नीद में थे। वह व्यक्ति बराबर खटखटाता जाता था। अंत में ज्योतिषीजी की नीद खुली। उनके घर के लोग भी जाग पडे। ज्योतिषीजी ने बिस्तर पर पडे-पड़े ही पूछा—'कौन'!

"'राजपुरोहित सत्यनारायण।' बाहर से आवाज आयी।

'अरे, सत्यनारायण इतनी रात को क्यों चला ?' ज्योतिषाचार्यजी ने सोचा। वह तुरन्त उठकर बाहर आये और द्वार खोलकर पुरोहितजी को भीतर ले गये।

'आज बड़े कुसमय मे चले, पुरोहित जी।' उन्होंने कहा।

'पर महाराज यह कुसमय नहीं सुसमय है। यदि भगवान ने चाहा तो चार छः दिनों में ही भोज को चित्तौं की गद्दी मिल जायगी।'

'... जरूर मिलेगी उसके ग्रह नक्षत्र ही ऐसे है।' फिर जैसे वह कुछ भूल गये थे जल्दी मे उठे और खिड़की खोल कर चन्द्रमा को नमस्कार किया और फिर सदा की भाँति उसी खिड़की पर दूरबीन लगा कर किसी ग्रह को देखा और उसे भी नमस्कार किया।

फिर लौटकर उन्होंने पूछा—'तारा का क्या समाचार है ?

'अरे आपको नहीं मालूम ?' वह तो यहाँ से जाते समय ही मार्ग मे साँप काटने से मर गयी...?' पुरोहितजी ने एक वाक्य में उसका समाचार सुना दिया। जैसे अब वह उसके विषय मे बातें करना ही नहीं चाहते।

'मर गयी...ऐं...तारा चली गयी 'विश्वास नहीं होता पुरोहितजी।' ज्योतिषाचार्य चिन्ता और दुख में डूब से गये। पर पुरोहितजी ने शीघ्र ही बात दूसरी ओर बदल दी—'पण्डितजी, मै आपके यहाँ एक विशेष कार्य से चला हूं।'' मैं चाहता हूं कि जल्दी ही सोलंकी राज की कन्या से भोज का विवाह हो जाय।'

'हो क्या जाय ? उसका विवाह तो हुआ ही है।' 'पर महाराजा नहीं मानते।'

'उन्हें मनाया जायगा न। केवल आप एक काम कर दीजिए।'

ज्योतिषाचार्यजी ने बडी गम्भीरता से सिर हिलाकर पूछा–'क्या है ?'

'भोज के जन्म की घडी तो मालूम नही है । एक उसी अवस्था के बालक की नकली जन्म कुंडली बनाइए जिसके ग्रह बताते हो कि यह बडा प्रतापी तथा होनहार है तथा राजकुमारी जी से इसका विवाह भी हो सकता है ।'

'लेकिन पुरोहितजी मैने कभी झूटा काम अपने जीवन में नही किया ।' ज्योतिषाचार्य जी ने कहा—

'तो एक कर लीजिए महाराज । आखिर यह अमूल्य जीवन व्यर्थ क्यो जाय ।' फिर वह जोर से हँसा । किन्तु ज्योतिपाचार्य गम्भीरता से सोचते रहे ।

'सोचते क्या है महाराज, भोज के मंगलमय भविष्य के लिए यह काम आपको अभी ही करना पडेगा ।.. मै बड़ा विश्वास करके आपके पास आया हूँ ।'

ज्योतिपाचार्य फिर सोचते रहे ।' पुरोहितजी पुनः बोले—'सोचिये मत महाराज । जरा जल्दी कीजिए मै प्रातःकाल तक नागदा पहुँच जाना चाहता हूं ।

साधारण सूत भी बार-बार की रगड़ से पत्थर काट सकता है तब भला पुरोहितजी के प्रयास का ज्योतिषाचार्य पर कोई प्रभाव न पडे यह कैसे हो सकता था । लाचार होकर उन्हे नकली जन्मकुण्डली बनानी पडी उस कुण्डली की नकल फिर पुरोहितजी ने अपने हाथ से दूसरे पत्र पर उतारी । तब ज्योतिपाचार्यजी बोले–'अब इसकी प्रतिलिपि से क्या लाभ ?'

'उस पत्री को देखकर महाराज आपकी लिखावट पहचान लेंगे । तब सन्देह हो सकता है ।' ज्योतिषाचार्य ने सोचा कि सचमुच पुरोहित की बात ठीक है । मेरी लिखावट तो महाराज पहचानते ही हैं ।'

"काम होते ही पुरोहितजी ज्योतिषाचार्य को धन्यवाद देकर चलने को हुए तब बड़ी नम्रता से बोले 'यदि आप अप्रसन्न न हो तो कहूँ कि आज तीसरे पहर तक आप भी महाराज के यहाँ पधारें।'

'नहीं भाई, एक काम तो मैने झूठा कर दिया, अब मुझसे झूठ मत बोलाओ।'

'पर इसमें झूठ बोलने की कोई बात नही है महाराज, जो सोलंकी राज पूछेंगे उसका सही उत्तर आप दे दीजिए!'

फिर भी ज्योतिषाचार्य सोचते रहे।

'मै आपको किसी धर्म संकट में नही डालूँगा महाराज। केवल आप आ भर जाइए।. .और मध्याह्न तक जरूर आजाइएगा।' इतना कहकर पुरोहित जी उसी समय नागदा की ओर चल पड़े।

राज पुरोहित को सोलंकी राज पहले से ही जानते थे। पहुँचने पर उनकी खूब आवभगत की। दोपहर का भोजन उन्होंने उन्ही के साथ बैठ कर किया। उसी समय उपयुक्त अवसर देखकर पुरोहित जी ने राजकुमारी के विवाह की चर्चा छेड़ दी। महाराज सारी विवाह की कथा बड़े विषाद भरे स्वर में सुना गये। फिर क्रोधित स्वर में उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा भी कही।

'खैर इन सबसे कुछ लाभ नही है. .। राजकुमारी का विवाह तो आपको करना ही चाहिए।...मै एक जन्मकुण्डली ले आया हूँ। यदि विवाह बन जाय तो करा दिया जाय।'

'पर पुरोहितजी अब भला राजकुमारी से कौन विवाह करेगा?... यह बात चारों ओर फैल गयी है कि वह विवाहित है।'...महाराजजी ने बड़ी चिन्ता से कहा।

'इससे आप न घबराये। पहले जन्मपत्री मिलवा लीजिये। देखिए

विवाह बनता है कि नहीं।...फिर तो कोई न कोई व्यवस्था भी हो जायगी।'

भोजन के उपरान्त लोग विश्राम कक्ष में पधारे। और थोड़ा सा लेटे होंगे कि प्रहरी ने आकर सूचना दी—'महाराज, ज्योतिषाचार्य पधारे हैं।'

'लीजिए पुरोहितजी,—'ज्योतिषाचार्य जी भी आगये। लगता है यह मुहूर्त कुछ विशेष महत्त्व का है।' फिर उन्होंने प्रहरी से कहा,—'ज्योतिषाचार्यजी को यहाँ भेज दो।'

ज्योतिषाचार्यजी के कक्ष मे घुसते ही महाराज बोल उठे,—'आइए ज्योतिषाचार्यजी, हम लोग इस समय आपको ही स्मरण कर रहे थे।'... ये एक लड़के की कुडली लाये हैं।...देखिए लड़का कैसा है?

लड़का है ही नहीं, तो वह कैसा है यह ज्योतिषाचार्यजा क्या बतायें? वह पहले बड़े फेर में फंसे। सकपकाये कि क्या उत्तर दूँ। पुरोहितजी ने उनकी यह स्थिति भॉप ली। वह तुरन्त बोले—'ज्योतिषाचार्य जी केवल आप यह बताइए कि ऐसे नक्षत्र जिस लड़के के होंगे उसका भाग्य तथा पराक्रम कैसा होगा?'

ज्योतिषाचार्य जी ने अनुभव किया की अब तो धर्म संकट नहीं है उन्होंने जन्मपत्री देखकर फल कहना आरम्भ किया—'ऐसे ग्रह और नक्षत्रो वाला लड़का तो बड़ा प्रतापी होगा। बहुत बड़ राज्य का स्वामी होगा। इसका पिता बचपन में हो मर गया होगा।'

'वाह भाई वाह, ज्योतिषाचार्यजी आप बताते तो बड़ा सत्य है, पुनः उन्होंने महाराज से कहा–'महाराज आपने इनकापरिचय तो दिया ही नही।'

'महाराज परिचय देने लगे, ये मेरे राज ज्योतिषी हैं, इनकी भविष्य वाणी कभी झूठी नही होती। इन्होंने ही राजकुमारी ..'

वह कुछ आगे कहें इसके पहले ही पुरोहितजी बोले,—'मेरा बड़ा

भाग्य है कि आज ऐसे ज्योतिषी से परिचय हो गया।' फिर वह नमस्कार करता हुआ झुका।

ज्योतिषाचार्य बेचारे पुरोहित का यह नाटक देखकर हक्का-बक्का सा रह गये। वह सीधे-सादे व्यक्ति छल प्रपंच क्या जाने। उन्होंने संसार के सभी व्यक्तियों को अपने समान समझा था। आज उन्हें मालूम हुआ कि ऐसे भी आदमी होते हैं।

फिर ज्योतिषाचार्यजी से पुरोहितजी ने पूछा,—'अच्छा यह बताइए कि ऐसे ग्रह नक्षत्र वाले लड़के से राजकुमारी का विवाह हो सकता है कि नहीं।'

'जरूर हो सकता है।' उन्होंने बड़े खिन्न मन से कहा। पुरोहित समझ गये कि मेरी बनावट ज्योतिषाचार्य को अच्छी नहीं लगी। अब अधिक देर तक बातें करना ठीक नहीं। तब उन्होंने उसी पल मुद्रा बदली—'अब तो ठीक हो गया महाराज?...आप वचन दीजिए विवाह का।'

'लेकिन मेरी लड़की का विवाह हो गया पुरोहितजी। एक पति के रहते दूसरा विवाह करना शास्त्र में वर्जित है।'

'इससे क्या होता है?...शास्त्र भी तो हम आप जैसे लोग ही बनाते हैं। और मान लीजिए यह वही लड़का हो जिससे राजकुमारी ने विवाह किया हो तब?

'हुँ—यह कैसे हो सकता है?'

'जैसे दिन होता है, रात होती है विधि का विधान कोई जानता है महाराज!'

'अच्छा आप इतना ही वचन दीजिए यदि इसी लड़के से राजकुमारी ने विवाह किया होगा तथा यदि वह उतना ही प्रतापी होगा जितना ज्योतिषाचार्यजी ने बताया है तो मैं अवश्य अपनी राजकुमारी उसके यहाँ भेज दूँगा।...विवाह तो हो ही चुका है पर एक कहने की बात है?'

महाराज सोच में पड गये। पर पुरोहित को तो सब काम निश्चित रूप से बहुत जल्दी ही कराना था। किन्तु महाराज ने कहा—'यह कैसे पता चलेगा कि वही लडका है।'

'अरे भाई, राजकुमारी तो पहचानेगी।'...मै आप सब लोगो को चित्तौड में राज्यारोहण के समय बुलाऊँगा। आप राजकुमारी को लेकर चले आइएगा। यदि राजकुमारी उस युवक को पहचान लेगी तो वह रानी बनेगी और युवक का राजतिलक होगा। . आर यदि वह युवक नहीं होगा तो आप चले आइएगा, आप की हानि ही क्या होती है। वरन् उस युवक की ही हानि होगी। बिना महारानी के उसका राजतिलक नही हो सकता।'

महाराजा ने बहुत विचार कर यह शर्त स्वीकार कर ली। पुरोहितजी पुनः बोले—'किन्तु महाराज आप मेरी बात में किसी प्रकार का सन्देह मत कीजिएगा। वह युवक वही लडका है। खूब तैयारी से आइएगा।'. . कम से कम चित्तौड़ वालों को यह तो पता चले कि कोई महारानी आ रही हैं।

'लेकिन एक बात समझ में नही आती...चित्तौड की गद्दी पर तो मानमोरी है न. .।'

'हॉ है तो, पर वह संन्यास लेने वाले है। उनको कोई पुत्र नही है। गद्दी इसी युवक को देने वाले हैं वे।'

'इस युवक का नाम क्या है?'

'काल भोज।'

'पर बड़ा आश्चर्य सा लगता है...यह सब।'

'हॉ आश्चर्य जरूर लगेगा महाराज। पर इसे किसी से कहिएगा नही। यह अत्यन्त गोपनीय है। जरा सी असावधानी में बात बिगड़ सकती

है ।...मुझे उस लड़के से कोई विशेष मोह नही है। मै तो सोचता हूँ कि राजकुमारी का भाग्य खुल जाय ।'

महाराज मन ही मन अपने इस नये शुभचिन्तक को पाकर बड़े प्रसन्न हुए। ज्योतिषाचार्य के लिए तो यह दिन कदाचित् जीवन में कभी न भूलने वाला दिन था। पुरोहितजी का यह व्यक्तित्व उन्होंने आज ही देखा था।

सात आठ दिनो के बाद भी पुरोहितजी पुनः चित्तौड़ के राज्य पथ पर दिखायी नही पड़े। कहते हैं कि इस बीच वे नागदा के अतिरिक्त ईडर भी गये थे।

× × ×

दिन प्रति दिन चित्तौड़ की हालत बराबर गिरती गयी। अराजकता तथा निरंकुशता का राज्य चारों ओर व्याप्त हो गया। प्रजा में राजा के प्रति जरा भी आदर तथा सम्मान की भावना रह ही नही गयी। सभी सरदार अपने को राजा समझने लगे। एक दिन नगर मे टहलते हुए दो व्यक्तियों को जादव ने बातें करते हुए सुना। आगे-आगे बात करते वे लोग जा रहे थे और पीछे जादव था।

पहला—भाई, अब मेवाड़ की गद्दी का देखो क्या होता है ?

दूसरा—क्यों कोई नया समाचार है क्या ?

पहला—अरे रोज ही नये-नये समाचार सुनायी पड़ते हैं। अब सुनता हूँ कि प्रति रात को कुछ लोग महाराज के शयन कक्ष में शस्त्र लेकर घुसने की चेष्टा करते हैं।

दूसरा—उधर अरबी सैनिक देश पर आक्रमण कर रहे हैं और इधर लोग महाराज की हत्या की योजना बना रहे हैं।

पहला—जब राजा कमजोर हो जाता है तब यही सब होता है।

दूसरा—पर सुनता हूँ कि इस बार अरबी सेना ता बुरी तरह हार रही है।

पहला—ता क्या इस निर्बल राजा के कारण...यह तो कहो ऐसा बहादुर होनहार व्यक्ति मेवाड़ में आ गया है जिसे यदि अवसर मिले तो चित्तौड़ का भाग्य चमका सकता है।

दूसरा—हाँ मालूम तो बड़ा प्रतापी पड़ता है। रण प्रयाण के समय तुमने उसका भाषण नही सुना था क्या? सच्चे प्रजा पालक की भावना उसमें थी।. पर राज सिंहासन पर वही बैठ सकता है जो किसी राज परिवार का हो। लेकिन उसके सम्बन्ध मे तो. .' अब जादव को मौका मिला वह पल में उन लोगों की बातचीत में सम्मिलित हो गया—'नही वह भी राज परिवार का है। ईडर के स्वर्गीय प्रतापी राजा महेन्द्र का पुत्र है। साधारण व्यक्ति नही है। अरे उसके आकृति का तेज तो देखो स्वयं पता चल जायगा।'

इस घटना के ठीक चौथे दिन पुरोहितजी चित्तौड़ में आ विराजे। उनके आगमन का समाचार सुनते ही महाराजा ने उन्हे बुलाया। पर वे मिलने नहीं गये, कहला दिया कि मेरी तबीयत खराब है। इस बीच नगर में घूम-घूम कर सरदारों से मिलकर अच्छी तरह स्थिति का अनुमान लगा लिया और जब समझ लिया कि स्थिति बिल्कुल मेरे अनुकूल है तब वह एक दिन महाराज से मिले।

उनकी यह भेंट महाराजा के अन्तःपुर में ही हुई। महाराज ने अत्यन्त गोपनीय मंत्रणा के ही लिए इन्हे बुलाया था। इस समय इस कक्ष में महाराजा और पुरोहितजी के अतिरिक्त कोई नही है। बाहर गूंगा पहरा दे रहा है। बगल के कक्ष में भी कुछ कनमनाहट है। लगता है महारानीजी परदे के भीतर हैं। पुरोहितजी ने देखा, महाराजा का स्वास्थ्य इन दस

पन्द्रह दिनों में ही बहुत गिर गया है। आँखो मे वैसी ज्योति नही है। चेहरा फीका उदास सा है। उन्होने पूछा,—'क्या बात है आप इतने दुर्बल क्यो होते जा रहे है महाराज ?'

'अरे दुर्बलता की बात न कहिये पुरोहितजी। यही सोचिए कि आपके सामने जीवित बैठा हूँ। आप तो थे नही, आपको क्या मालूम। यहाँ प्रत्येक रात अब मेरी हत्या का कुचक्र किया जाता है। यह तो कहिए आपके एक अंगरक्षक ने साथ दिया है जिसके कारण जीवित हूं। अब कल से वह भी कह रहा है कि मै यहाँ न रहूंगा। अब बताइए क्या करूँ ? यही पूछने के लिए आपको बुलाया है।'

पुरोहितजी ने गौर से सोचने का अभिनय किया फिर पहले से ही सोची हुई बात कही—'मैं क्या कहूँ महाराज ? मैने तो सारी स्थिति पहले से ही बता दी थी। अब तो मुझे भी लगता है कि आप मेवाड़ मे एक दिन भी सुरक्षित नही है। महल मे राजकर्मचारियों का भय है। बाहर प्रजा आपको कच्चा चबा जाना चाहता है। हम लोग जो आपके मित्र है, उनका भी जीवन यहाँ सुरक्षित नही है।. .मै तो अब भोज से कहूंगा कि वह यहाँ से ईडर चले।'

'अरे पुरोहितजी ऐसा क्यों ? वही बेचारा एक मात्र तो मेरा है।' फिर महाराज कुछ रुक कर बोले—'पर पुरोहितजी मैने प्रजा का क्या बिगाड़ा है कि वह मुझसे ऐसी अप्रसन्न है ?'

'बिगाड़ने बनाने को बात नही होती महाराज। यह सब भाग्य चक्र है... भोगिए यही राजसुख है।' इतना कहकर व्यंग्य भरी हँसी वह हँसा।

'तो कही कुछ दिनो के लिए चला आऊँ।'

'कही जाने से क्या लाभ ? क्या ये शत्रु वहाँ नही पहुँचेगे ?. यदि आप मेरी बात मानिए तो एक काम कीजिए। अब आपका जीवन ही कितना रहा। सारा जीवन तो 'हाय-हाय' में बीत गया। मेरी राय से आप गुप्त रूप से साधुओं के वेश में तीर्थ यात्रा करने चले जाइए...फिर दस पाँच वर्ष में जब हालत सुधर जायगी तो चले आइएगा।'

'पर इस बीच राज कौन देखेगा ?'

'हाँ, यही तो समस्या है जिसको आप सबसे अधिक विश्वास पात्र समझें, उसी के नाम गद्दी लिख दें। उसमें साफ लिख दीजिएगा कि ससार का संघर्ष झेलते-झेलते अब मै थक गया हूँ पता नही कब जीवन का दीप बुझ जाय, अतएव कुछ परमार्थ भी कर लेना चाहता हूँ। इस लोक का तो बीत गया परलोक का बनाना है। इसलिए गद्दी देकर जा रहा हूं। इस पत्र को महारानीजी को दे दीजिएगा।' फिर उसके मनमें विचार आया कि महारानीजी को देना खतरे से खाली नही है। नारी की जाति पता नही किस क्षण बदल जाय। तब वह अपने को सँभालते हुए बोला, —'महारानीजी को दे दीजिए या हमे दे दीजिए। एक ही बात है. पर सोचता हूँ कि कदाचित् उनके पास यह पत्र सुरक्षित न रह सके।'

'नहीं, मै आप को ही दे दूँगा। आप कहते ठीक है। परलोक भी बन जायगा, जान भी बच जायगी। मेरा विचार है मै भोज के ही नाम गद्दी लिख दूं।' महाराज ने सन्तोष की साँस लेते हुए कहा।

'लेकिन महाराज भोज के सिर पर यह काँटों का मुकुट मत रखिए। बेचारा घबरा जायगा. खैर आप कहेगे तो मै उसे तैयार कर लूँगा, पर महाराज उसकी आत्मा रो पड़ेगी। वह आपके अभाव में कैसे रहेगा।' फिर वह कुछ रुककर बोला,—'लिखने पढने का मामला है जरा समझ लीजिएगा, नही तो लोग कहेगे कि पुरोहितजी ने महाराज को बहका दिया। मै ऐसा नही चाहता।'

लेकिन मैं भोज को ही लिखूँगा,—'और मै कोई बच्चा हूँ कि आप मुझे बहका दीजिएगा।'

पुरोहितजी मन ही मन प्रसन्न हुए पर आकृति पर दुख के ही भाव दीख पड़ते थे। वे सोच रहे थे अब तो रास्ता बिल्कुल साफ है। उनकी

दृष्टि द्वार से ही आकाश की ओर गयी। सन्ध्या हो चली थी। पूरब के आकाश में जैसे किसी ने रक्त पोत दिया था।

महाराजा के अदृश्य हो जाने का समाचार पूरे मेवाड़ में विद्युत गति से फैल गया। सरदार कुछ समझ हो न सके कि बात क्या है। प्रजा में तरह तरह की अफवाह फैल रही थी। कोई कहता—'कैसा डरपोक था जरा-सा सरदार बिगड़े कि भागता बना। कोई कहता,—'अरे उसकी हत्या की रोज चेष्टा हो रही थी आखिर किसी ने मार ही डाला। कोई कहा—ऐसा न हो कि कहीं गया हो। कुछ दिन बाद बड़ी सेना लेकर आ धमके।' जितने तरह के लोग थे उतनी बातें थी। चित्तौड़ का जनजीवन आन्दोलित हो गया था। सरदार इस घटना पर बिलकुल चकित थे। वे सभी समझते थे कि महाराज की हत्या हो गयी। हत्या किसने की केवल यही रहस्य का विषय था। कोई कोई सरदार ऐसा भी सोचते थे कि बूढा अतिथि (पुरोहितजी) इतने दिनों तक टिका क्यों है।

पर वास्तविक रहस्य पुरोहितजी और महारानी के अतिरिक्त कोई भी नहीं जानता था। जादव ने उस समय जाना जब पुरोहितजी ने उसे एक पत्र देकर सोलंकी राज को बुलाने के लिए नागदा भेजा। पत्र में लिखा था कि पूरे राजसी ठाट से दल-बल सहित पधारने का कष्ट करें। मूँगा को भेजकर उसने ईडर से भी कुछ विश्वासपात्र सैनिक बुलाये।

भोज को अब युद्ध से लौटना तो चाहिए, पर वह अभी तक लौटा नही था। इस बीच चित्तौड़ के सरदार कोई नयी आफत कर सकते थे। इसी से पुरोहितजी ने चारों ओर से सेनाएँ मँगवायी थी। साथ ही साथ पाराशर और नागह्रद से भी लोगों को बुलाया था। इधर वह प्रतिदिन महारानी से मिलता। उन्हे अपने विश्वास में रखा था।

अब भी भोज नही आया, पर चारों ओर से सेनाएँ आ गयी। इस अप्रत्याशित सेना के आगमनसेचित्तौ कीआत्मा काँप उठी।' 'क्या

बात है, महाराज के अभाव का समाचार सुनकर सोलंकी राजने चढ़ाई तो नहीं करदी, पर यदि चढाई की होती तो युद्ध होता पर ये लोग तो आकर अतिथि भवन मे टिके हैं। इनके साथ राजकुमारी भी है उनकी अनेक सखियाँ भी हैं। कुछ यवन सुन्दरियाँ भी साथ आयी हैं तब भला यह आक्रमण कैसा।' लोगों के विचार करने का एक यह भी पक्ष था। इस नयी सैन्य शक्ति को देखकर सरदार तथा जनता चुप हो रही कोई कुछ कर न सका। महारानी को भी इसके सम्बन्ध मे पुरोहितजी ने उलटा सीधा समझा दिया था।

आखिर भोज लौटा। विजय पाकर लौटा। अकूत धन लूट कर लाया था। बहुत से घोड़े और अस्त्र-शस्त्र भी लूट में मिले थे। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उसने सब कुछ जनता में बाँट दिया। तीन चार दिन तक तो जैसे लूट सी मची थी। जिसने जीवन में कभी सोना देखा भी नही था वह भी स्वर्ण मुद्रा-पागया। प्रजा हृदय से भोज की मगल कामना करने लगी। पुरोहितजी ने उपयुक्त अवसर देखकर महारानी के मुख से सिहासन के उत्तराधिकारी के लिए घोषणा करवायी। 'ओहो यह तो विचित्र रहस्य था...महाराज सन्यासी होगये...गद्दी भोज को मिलेगी... चलो अच्छा ही हुआ। अच्छा ही नहीं बड़ा अच्छा हुआ।' यह चर्चा चित्तौड में सर्वत्र थी।

शुभ कार्य जितना शीघ्र हो उतना ही अच्छा होता है। दरबार का दिन भी अगामी गुरुवार रखा गया। गुरुवार परसों ही तो है।

आज शाम एक काम और हुआ। सोलंकी राजकुमारी अपनी सखिया के साथ भोज को पहचानने आयी। इनमें करीब-करीब वे सभी सखियाँ था जो उस महत्वपूर्ण भूलनोत्सव में थी। इनके अतिरिक्त कुछ यवन कुमारियाँ भी थी जो नागदा में इधर कई वर्षों से रह रही थीं।

देखते ही सबने पहचान लिया। एक सखी मजाक में राजकुमारी से बोली,—'अच्छी तरह पहचान लो, ऐसा न हो कि धोखा हो जाय।' सभी

सखियाँ हँस पड़ी। राजकुमारी की आकृति लज्जा के घूंघट के नीचे से मुस्कराने लगी और वह वहाँ से लौट पड़ी। पीछे-पीछे सभी सखियाँ भी लौटीं। तब एक यवन सुन्दरी आगे आयी और भोज के सम्मुख बडी शोख भरी अदा में बोली,—'राजकुमारजी, राजकुमारी ने तो आपको पहचान लिया, अब आप मुझे पहचाने।'

भोज हँस पडा और बोला—'मैं तुम्हे पहचानता हूँ शमीम। तू कैसे चली आयी।'

'सुना,—जनाबेआली का राज तिलक होने वाला है नागदा में थी, चली आयी।' इतना कहकर कुछ विचित्र ढंग से झूमती और कमर हिलाती वह चली गयी जैसे चम्पा की कोई अत्यन्त लचीली डाल बासन्ती बयार में झूलती चली जारही हो।

× × ×

आज भोज का राज्यारोहण है। चित्तौड़ में प्रसन्नता की नयी लहर दौड़ गयी है। आज दरबार का आयोजन है। राजमहल सजाया गया है। प्रभात से ही वाद्य बज रहे है। नगर मेंभी तोरण तथा पताकाएँ स्थान-स्थान पर सुशोभित हा रही है। सबका वेश देखने योग्य है।

दरबार में आज बहुत से लोग उपस्थित हैं। किन्तु इनकी उपस्थिति को भीड़ को सज्ञा नहीं दी जा सकतो। सभो शान्त तथा सुव्यवस्थित है। सरदार भी प्रसन्न ही है। पुरोहित सत्यनारायण का कहना क्या? गमेती, जादव, प्रभू, ज्योतिषाचार्यजी, रुक्मणि आदि के जैसे पॉव धरती पर ही नही पड़ते थे। कलश लये सुन्दरियाँ मार्ग मे खडी हैं। अतिथियो के बैठने का स्थान तो एक दम भर गया है। कही स्थान खाली भी है ऐसा दिखायी नही देता।

भोज के आते ही आकाश तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा।

उसने चारों ओर घूम कर प्रजा को नमस्कार किया। फिर अतिथि जिधर बैठे थे वह उधर गया। ज्योतिषाचार्य, रुक्मणि और सोलंकी राज के चरण छुए। गमेती, जादव आदि के चरणों की ओर भी झुकने लगा। पर उन लोगों ने उसे रोक दिया। केवल नमस्कार हुआ।

फिर वह राज सिंहासन के नीचे आकर छोटे सिंहासन पर बैठ गया। बन्दीजन विरुदावली कहने लगे। ब्राह्मणों ने मंगल पाठ पढा। तब महारानी ने खडी होकर अपने पति का लिखा पत्र सुनाया। पत्र मार्मिक था। सबने इस समय अपने पुराने शासक मान मोरी की प्रशंसा ही को। फिर पुरोहित सत्यनारायण कुछ कहने के लिए खडे हुए,—'श्रद्धेय महारानी, मान्य अतिथिगण और प्रिय मित्रो, आज बडे हर्ष का दिन है। पूज्य महाराज मान मोरी का स्वप्न आज पूरा होरहा है। वह भी महारानी की उपस्थिति में। प्रिय भोज का पराक्रम, उसकी प्रतिमा, उसका शौर्य, उसकी प्रजा प्रियता आपसे छिपी नही है। युद्ध से जीत कर लाया हुआ सारा धन उसने आप सबमे बॉट दिया। इससे अधिक प्रजा के प्रति उसका प्रेम और क्या हो सकता है। मेरा पूरा विश्वास है वह सदा अपनी प्रजा को पुत्र की भॉति मानेगा। उनका दुख दूर करेगा और प्रजा भी उसे अपना बप्पा (पिता) समझेगी। हम इस पवित्र अवसर पर इसीलिए उसे 'बप्पा रावल' की उपाधि से विभूषित करते हैं। आज से यह हमारा भोज नही आज से है वह हमारा पूज्य बप्पा रावल।'

इतना कहकर पुरोहितजी अपने स्थान पर बैठ गये। तालियाँ गड़-गड़ाने लगी। हमारा बप्पा...अमर रहे.. बप्पा रावल.. अमर रहे के नारो से आकाश गूँज गया।

फिर अभिषेक का कार्य आरम्भ हुआ। ब्राह्मणों ने मंत्र पाठ आरम्भ किया। अनेक कण्ठों की सम्मिलित ध्वनि वायु मंडल में गूंजने लगी। इसमे पुरोहितजी, ज्योतिषाचार्य तथा रुक्मणि की भी ध्वनियॉ थी। फिर

राज तिलक करने के लिए पुरोहितजी आगे बढे । भोज ने उन्हे रोक दिया। अरे यह क्या ? सदा से हमारे पूर्वज तुम्हारे राजवंश का तिलक करते आये हैं । पुरोहितजी ने सोचा, किन्तु मुस्कराता हुआ भोज बोला—'तारा माता की इच्छा थी कि मेरा राजतिलक बाली ही करे ।'

'बाली...भील...राजतिलक...पूरे दरबार में भनभनाहट होने लगी । तब तक बाली ने अपनी कटार से अंगूठा चीरा और शीघ्र ही भोज के मस्तक पर तिलक लगा दिया । प्रसन्नता में फिर तालियाँ बजने लगी । रक्त का तिलक अमिट हो । लोगो ने कामना की ।

इसके बाद भोज ने खड़ होकर प्रतिज्ञा की. .पूज्य पुरोहितजी ने जिन बातो की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है 'मैं उनसे लिए प्रतिज्ञा करता हूँ । . मै प्रतिज्ञा करता हूँ. .कि अपनी प्रजा को पुत्र से भी अधिक प्यार करूंगा । उसकी इच्छा और आकाक्षाओ का सदा आदर करूँगा । यदि मेरे शासन में एक भी व्यक्ति दुखी रहेगा तो मैं उसे अपना दुख समझूँगा ।' पुनः करतल ध्वनि हुई । इसके पश्चात् उसने घोषणा की. .'आज से इस सिंहासन पर जो भी बैठेगा उसका राज्यतिलक भील अपने रक्त से करेंगे । रक्त का चिह्न अमिट होगा । रक्त का सम्बन्ध अमिट होगा ।.. राज्य सिंहासन उन्हीं के रक्त का विश्वास चाहता है ।'

इतना सुनना था कि प्रजा उछल पडी .बप्पा रावल अमर रहे । बप्पा रावल की जय के नारों से एक बार फिर आकाश गूँजने लगा ।

उपसंहार-

जब चलते-चलते थक गया तब वह झुँझलाया और मस्तक का पसीना पोंछते हुए उसने गाइड से कहा—'नागह्रद के इन उजाड़ खण्डरों में क्या छिपा है जो तुम मुझे इतना परेशान किये जा रहे हो ?'

गाइड मुस्कराया और बड़े स्वाभिमान भरे स्वर में बोला,—'यहाँ एक ऐसी चीज है बाबूजी, जिसे देखे बिना राजस्थान देखना पूरा न होगा।'

फिर यात्री एक वृक्ष के नीचे आया और रुककर थोड़ा आराम कर लेने का विचार करने लगा। तब पुनः गाइड ने कहा—'बस थोड़ी दूरी और है। वहीं हारित मुनि का आश्रम है और वही वह समाधि ..?'

'किसकी समाधि ?'—उसने पूछा

'यह तो वहाँ चलकर ही बताऊँगा बाबूजी !' वह पुनः मुस्कराया।

यात्री ने आकाश की ओर देखकर कहा—'अब तो सन्ध्या हो गयी है। लौटते लौटते रात हो जायगी।'

'यदि चलते चलते ही रात हो जाती तो और भी अच्छा होता।' उसके आकृति की मुद्रा स्वाभाविक ही रही।

'तो तुम गाइड हो या लुटेरे।' यात्री ने बड़े तिक्त स्वर में पुनः झुंझलाते हुए कहा।

'नहीं बाबू जी' मैं लुटेरा नहीं हूँ। मैं केवल गाइड हूँ, गाइड।.. रात में उस समाधि के पास एक अतीव सुन्दर स्त्री दिखायी देती है बाबूजी।' फिर वह सदा की भाँति मुस्कराया।

जिज्ञासा ने उस यात्री के चरणों में नई शक्ति भर दी। अब वह अपनी पतली बेंत की छड़ी के सहारे आगे बढ़ता चला। कहीं कहीं खन्दक पार करने के लिए गाइड के कन्धे पर बाँया हाथ रखकर सहारा ले लेता था।

. . करीब आध घन्टे के बाद वह एक अत्यन्त उजाड़ खण्डहर के पास आया। तब गाइड ने दूर से ही दिखाकर कहा—'वो देखिए वह है समाधि।'

अँधेरा बढ़ चला था। साफ दिखायी नहीं देता था। केवल ईंट और पत्थरों के ऊंचे ढेर के अतिरिक्त कुछ दिखायी नहीं पड़ा।

तब तक गाइड ने कहा—'यह बप्पा रावल की समाधि है।'

'बप्पारावल...मेवाड़ का परम प्रतापी शासक।' यात्री ने कुछ सोचते हुए कहा।

'कहते हैं कि उसने दिग्विजय की थी। खुरासान तक का प्रदेश उसने जीता था। अनेक राजपूत तथा यवन सुन्दरियों से विवाह किया था...

इतना प्रतापी शासक भी अन्तमें सन्यासी हो गया... ।' बड़ी श्रद्धा-भक्ति से वह बोलता जा रहा था कि उस बूढे गाइड को खांसी आ गयी ।

'तो फिर उसने सन्यास क्यो ले लिया ?'

विलास की चरम सीमा पर सन्यास की ही मंजिल आती है बाबूजी ! सुनता हू इसकी एक समाधि कश्मीर में भी है ।'

यात्री को विस्मय हुआ उसने पूछा,—'कहाँ नागह्रद और कहाँ कश्मीर । इतनी दूरी के अन्तर पर दो समाधियाँ. .क्या रहस्य है इसमे ।'

'राज जीतने के ही लिए नही, वरन् अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिए भी उसने देश-बिदेश की यात्रा की थी ।'

यात्री सोचने लगा । तब गाइड ने बडे आश्चर्य भरी मुद्रामें कहा—। लोग कहते है कि आधी-रात के समय इस समाधि के पास एक अतीव सुन्दर स्त्री दिखायी देती है । उसका पहना अरब की स्त्रियों जैसा होता है । वह आकर यहाँ एक दीपक जलाती है और अरबी भाषा में कुछ भुनभुनाती है ।'

इस प्रकार बारह सौ बरसो से यह समाधि योग और भोग का समन्वय करती आ रही है ।